मुख्याधिकारी

परम पूज्य श्री कहानजी ऋषिजी महाराज की सम्प्रदाय के शुद्धाचारी पूज्य श्री खुबा ऋषिजी महाराज के शिष्यवर्य स्व. तपस्वीजी श्री केवल ऋषिजी महाराज! आप श्रीने मुझे साथ ले महा परिश्रम से हैद्राबाद जैसा बडा क्षेत्र साधुमार्गीय धर्म में प्रसिद्ध किया व परोपदेश से राजाबहादुर दानवीर लाला सुखदेव सहायजी ज्वाला प्रसादजी को धर्मप्रेमी बनाये. इनके प्रतापसे ही शास्त्रोद्धारादि महा कार्य हैद्राबाद में हुए. इस लिये इस कार्य के मुख्याधिकारी आपही हुए. जो जो भव्य जीवों इन शास्त्र द्वारा महालाभ प्राप्त करेंगे वे आपही के कृतज्ञ होंगे.

शिशु-अमोल ऋषि

उपकारी-महात्मा

परम पुज्य श्री कहानजी ऋषिजी महाराज की सम्प्रदाय के कविवरेन्द्र महा पुरुष श्री तिलोक ऋषिजी महाराज के पाटवीय शिष्य वर्य, पुज्यपाद गुरु वर्य श्री रत्नऋषिजी महाराज!
आप श्री की आज्ञासे ही शास्त्रोद्धार का कार्य स्वीकार किया और आप के परमाशिर्वाद से पूर्ण कर सका इस लिये इस कार्य के परमोपकारी महात्मा आप ही हैं आप का उपकार केवल मेरे पर ही नहीं परन्तु जो जो भव्यों इन शास्त्रोंद्वारा लाभ प्राप्त करेंगे उन सबपर ही होगा.

दास-अमोल ऋषि

शास्त्र प्रकाशक

दक्षिण हैद्राबाद निवासी जौहरी वर्ग में श्रेष्ठ दृढधर्मी दानवीर राजा बहादुर लालाजी साहेब श्री सुखदेव सहायजी ज्वालाप्रसादजी!

आपने साधु सेवा के और ज्ञान दान जैसे महा-लाभ के लोभी बन जैन साधुमार्गीय धर्म के परम माननीय व परम आदरणीय बत्तीस शास्त्रों को हिन्दी भाषानुवाद सहित छपाने को रु २००००, का खर्च कर अमूल्य देना स्वीकार किया और युरोप युद्धारंभ से सब वस्तु के भाव में वृद्धि होने से रु ४०००० के खर्च में भी काम पूरा होनेका संभव नहीं होवे भी आपने उस ही उत्साह से कार्य को समाप्त कर सबको अमूल्य महालाभ दिया, यह आप की उदारता साधुमार्गीयों की गौरव दर्शक व परमादरणीय है!

हैद्राबाद सिकन्द्राबाद जैन संघ

आवश्य कीय सूचना

मोरबी (काठियावाड) निवासी मणीलाल शिवलाल जो शास्त्रोद्धार कार्यलय का मेनेजर था और जो शास्त्रोद्धार जैसे महा उपकारी और धार्मीक कार्य के हिसाब को संतोष जनक और विश्वासनीय ढंग से नहीं रखने के सबब से हमको पूर्ण अविश्वास होगया और आपके पास बर बिना इजाजत एक दम चलागया। इस लिये जो मैंने अखबार और धार्मीक कार्य के लिये मणीलाल को देना चाहाथा वो उसकी अप्रमाणीकता और घोटाला देखकर उस को नहीं देते हुवे आग्रा निवासी जैनपथप्रदर्शक मासिक के प्रसीद्ध कर्ता बाबु पद्म सिंह जैनको धार्मिक कार्य निमित्त दिया गया है सर्व सज्जन उस अखबार से फायदा उठावें

ज्वाला प्रसाद

भूमिका.

यद्यपि यह शास्त्रोद्धार मीमांसा सब शास्त्रों के प्रस्तावना रूप है इसलिये इस की प्रस्तावना करने की कुछ जरूर नहीं है, तथापि यह अलग एक ग्रन्थ ही रूप होने से इस का संक्षिप्त उल्लेख पाठक गणों को दर्शाने के लिये यहां उचित समझ कर कुछ मनोद्गार प्रगट करता हूं.

स्याद्वादोवर्तते यस्मिन्। पक्षपातो न विद्यते ॥ नासत्यन्य पीडनं किंचिज्जैनधर्मः स उच्यते ॥१॥

अर्थात्—जो धर्म स्याद्वाद शैली युक्त होने से ही जिस में किसी का भी पक्षपात नहीं है. और जिस धर्म क्रिया में किंचिन्मात्र किसी भी जीव को पीडा का प्रसंग प्राप्त नहीं होता है उस ही धर्म को जैन धर्म कहते हैं.

ऐसे जैनधर्म के प्रवर्तक व स्वरूप दर्शक अर्हन्त प्रणित और गणधरों रचित जो शास्त्रों हैं सो सब अर्धमागधी प्राकृत भाषा में है. इस भारत वर्ष की पुण्य भूमि रूप आर्यालय की भी प्राचीन भाषा यही थी ऐसा अनुमान ६००-७०० वर्ष पहिले के रचित ग्रन्थों पर से ही सहज होता है नन्तर इस भाषा का अपभ्रंश हो यह मिश्र भाषा बनी कि जिस में इस वक्त में बोलाती हुई हिन्दी गुजराती महाराष्ट्रिक भाषा का रूप झलकने लगा. १५वी १६वी शताब्दी के ग्रन्थों पर से यह भी भाष्य होता है. नन्तर यही भाषा अलग २ भाषा के सचे में ढलकर अपने २ खास नाम रूप बनी. तो भी हरेक में मागधी भाषा का मेल अभीतक कायम रहा है मतलब की जो यह शास्त्रों का भाषानुवाद हिन्दी

भाषा मय किया गया है पर कुछ अलग नहीं है परन्तु माता पुत्री रूप घनिष्ट संबंधवाली ही है.

मेरी मातृ भाषा मारवाडी है और जन्म क्षेत्र भाषा यवनी (उरदू) है. दीक्षा लिये बाद शास्त्रों के अर्थ में तथा अन्य अनेक ग्रन्थों के पढने से तथा बारा महिने गुजरात में और इग्यारा महिने बंबइ में रहने से गुजराती भाषा भी अच्छी तरह बोलने लिखने लगा और पश्चात महाराष्ट्र [दक्षीण] देश में आने का प्रसंग प्राप्त होने से इस देश निवासी लोगों पर स्वदेशी भाषा का असर अधिक होने से उपकार अच्छा होगा ऐसा जान खास शिक्षक द्वारा व्याकरण युक्त मराठी भाषा का अभ्यास किया इस प्रकार मुझे चारों भाषा में बोलने का तथा लिखने का बहुधा प्रसंग प्राप्त होने से तथा लिखती व बोलती वक्त में भाषा से भी विषय का अधिक सुधारा करने का लक्ष रहने से भाषा की गडबड होजाती है. इसलिये पाठक गण जो मूलाशय पर लक्ष रख कर ही मेरे हस्त लिखित ग्रन्थों का पठन करेंगे तो ही उस का यथा तथा लाभ प्राप्त कर सकेंगे.

इस शास्त्रोद्धार मीमांसा के चार प्रकरण (विभाग) किये गये हैं प्रथम प्रकरण "सनातन शास्त्रोद्धार" इस में अनादि से अनन्त काल तक शास्त्रों की अस्ति किस प्रकार से है, तथा श्री ऋषभदेव भगवान से लगा कर वर्तमान काल तक शास्त्रोद्धार किस प्रकार से हुवा. लुप्तालुप्त किस प्रकार से हुवे जिसका व अब भी शास्त्रोद्धार होने की परमावश्यकता है वगैरह कथन किया है. दूसरा प्रकरण "वर्तमान शास्त्रोद्धारक" इस में मेरी तीन पीढियों का कथन मेरे हाथ से चित्रा है. इसे पढकर अनभिज्ञ जनों आत्मश्लाघा का दोषारोप मेरे पर जरूर करेंगे ऐसा मैं जानता हुवा भी मैंने यह लिखा, इस का कारण—अपने जीवन का आप स्वयं जिस प्रकार ज्ञाता होता है उस प्रकार दूसरा नहीं हो

सकता है. अन्य अन्य का जीवन चित्रते हुवे उस में अनुमान से कितनीक अत्युक्ति भी चित्र डालते हैं. यह दोपारोप इस में नहीं हो सकता है. हां. जिस प्रकार गुण चित्रे जाते हैं उस प्रकार दुर्गुणों का चित्र कोइ क्वचित ही करते होंगे, परंतु कुछ इस दोप का भी निराकरण इस में देखा जायगा. इतने पर भी जो आत्मश्लाघा का दोपारोपण करने वाले कदाचित् महावीर भगवान पर भी यह दोपारोप करेंगे, क्योंकि भगवानने आचारांग के दोनों श्रुतस्कन्ध के अन्त में तथा भगवती सूत्र में अपने जीवन का कथन किया है. कोइ कहेंगे कि वे तो वीतराग थे तो अनिकसेनादि साधुओं में के एक साधुने देवकी रानी के आगे और अनाथी निर्ग्रन्थ ने श्रेणिक राजा के आगे अपना संक्षिप्त जीवन कहा है. इसलिये प्रसंगानुपेत अपना जीवन आप कथे तो कुछ दोप का कारण नहीं है. इस जीवन में से दृढता श्रद्धा. प्रश्नोत्तर, सत्संग वगैरा प्रकरणों इस जमाने के श्रावक और साधुओं को बडे अनुकरणीय हैं. तीसरा प्रकरण "अमूल्य शास्त्र दान दाता" इस में लालाजी की चार पीढीओं का जीवन चित्रागया है. इसे पढकर कोइ खुशामदी की, ऐसा दोपारोपण करेंगे. उन को जानना चाहिये कि दश श्रावकों का उपासकदशांग में तथा तुंगिया नगरी के श्रावकों का वगैरा कथन जो शास्त्रों में किया है वह खुशामदी नहीं कह जायगी, परंतु उचित्त गुणों का कथन ही माना जायगा, तैसे ही यह भी जानना. लालाजी का जीवन इस वक्त के श्रीमान धर्मात्माओं को बहुत ही अनुकरणिय है। चौथा प्रकरण "वर्तमान शास्त्रोद्धार" इस में यहां हुवा शास्त्रोद्धार कार्यारंभ से लगा कर अन्त तक जिस २ प्रकार का बनाव बना जिस का कथन है. "श्रेयांसि बहुविघ्नानि" इस कथनानुसार इस कार्य कर्ताओं पर किस२ प्रकार विघ्न प्राप्त हुवे और उन विघ्नों में किस २ प्रकार सहनशीलता धारन कर कथनानुसार तीन वर्ष जितने स्वल्प समय में बत्तीस शास्त्रों के अंदाज २५०००० श्लोकों का लेख तथा साढी चार वर्ष में सब छपाइ

का काम समाप्त किस प्रकार किया है इस का दिग्दर्शन है, वर्तमान में अन्य स्थान होते हुवे शास्त्रोद्धारादि कामों के जोड में रख अवलोकन करेंगे तो जरुर ही यह बेजोड जाना जायगा. विशेष क्या कहें. यह प्रकरण आगे कार्य कर्ताओं को मार्गानुसारी बनाने जैसा है. पांचवी "अन्तिम विज्ञप्ति" हैं. जिस में आत्म दोष व श्लाघा का खुलासा किया हैं, तैसे ही आज तक यहां प्रगट हुइ अमूल्य दीगइ १२४०५० पुस्तकों का लिष्ट तथा लालाजी की तरफ से जैनधर्मार्थ १३६००० रुपे की सखावत का लिष्ट भी ध्यान में लिजीये.!

इस मीमांसा का लेख लिखती वक्त मेरे पास ऐतिहासिक ग्रन्थों का अभाव होने से कितनेक स्थान चूक हो गई है जैसे वरजंगजी यति के पास से श्री लवजी ऋषिजी ठाणे चार से निकले यह भूल है. परंतु श्री लवजी ऋषिजी, श्री थोभणजी ऋषिजी, और सखजी ऋषिजी यह ३ निकले हैं. पीछे से कहानजी ऋषिजी महाराज की दीक्षा हुई है. और जो लोंकाजी की दीक्षा तथा संथारा का लेख किया है वह सं० १५०० की लिखी हुई प्राचीन पाटावली की प्रत लींम्बडी भंडार से प्राप्त हुई जिस में से लेख किया गया है

मैं श्री जादवजी स्वामीका यहाही 'आभार' मानता हूं. क्योंकि इनही महापुरुषकी कृपा द्वारा उक्त प्राचीन पाटावली प्राप्तकर सका और शास्त्रों तीर्थंकर प्रणित हैं या आचार्य प्रणित हैं इस वद्दल बहुत विद्वान पूज्य मुनिवरों से कितनेक प्रश्नोत्तर पत्र द्वारा पूछे गये थे परंतु सर्वोत्तम और यथोचित खुलासा इन ही महात्मा के तरफ से प्राप्त हुवा इस लिये मैं इन महात्मा का आभारी हूं.

अमोल ऋषि.

मणिलालजी के हाथ से लिखी और श्री अमोलक ऋषिजी महाराज से शुद्ध कर छपी पुस्तके.

नंबर.	पुस्तकों के नाम	आवृत्ति	रॉयल व डेमी फारम	पृष्ठ संख्या	प्रत संख्या
१	जैन सुबोध अमृतावली	प्रथमावृत्ति	डेमी १२ पेजी	३०५	१०००
२	श्रावक नित्य स्मरण	द्वितीयावृत्ति	डेमी ८ पेजी	१३८	१०००
३	आत्महित बोध	,,	डेमी १६ पेजी	१५५	१५००
४	श्रावक व्रत	प्रथमावृत्ति	,,	७५	२०००
५	गुलाबी प्रभा	,,	रॉयल १६ पेजी	९६	१२५०
६	शास्त्र स्वाध्याय	,,	रॉयल ३२ पेजी	६४	५००
७	स्वर्गस्थ मुनि युगल	,,	रॉयल १६ पेजी	६६	५००
८	जैन ज्ञान संग्रह	,,	डेमी ८ पेजी	७२	५००
					८२५०
					कुल ८८५२५

श्री साधुमार्गीय जैनधर्म के परम माननीय व आदरणीय अर्हन्त प्रणित
३२ शास्त्रों सब रायल फारम १२ पेजी परही छपाये गये
जिन के नाम पृष्ठ संख्या व प्रत संख्या.

नंबर.	शास्त्रों के नाम	पृष्ठ सं.	प्रत सं.	नंबर	शास्त्रों के नाम	पृष्ठ सं.	प्रत सं.
१	आचारांगजी	६२८	११००	११	विपाकजी	२०४	११२५
२	सुयगडांगजी	५५८	११२५		सुख विपाकजी —	२४	१००
३	ठाणांगजी	९००	११२५	१२	उववाईजी	२१६	११२५
४	समवायांगजी	३१२	"	१३	रायपसेणीजी	३०४	"
५	भगवतीजी	३०२०	"	१४	जीवाभिगमजी	७६८	"
६	ज्ञाता धर्मकथांगजी	६९२	"	१५	पन्नवणाजी	१३५८	"
७	उपासक दशांगजी	१५६	"	१६	जम्बूद्वीप प्रज्ञप्तिजी	६२४	"
८	अंतगड दशांगजी	१३८	"	१७	चन्द्रप्रज्ञप्तिजी	४१२	"
९	अनुत्तरोववाई दशांगजी	४०	११२५	१८	सूर्य प्रज्ञप्तिजी	४००	"
१०	प्रश्न व्याकरणजी	२२८	११२५				

१९-२३	निरियावलिकादि पंचक	१८०	१,१२५	२६	निशीथजी	२४६	१,१२५
				२७	दशाश्रुतस्कन्धजी	१४८	"
				२८	दशवैकालिकजी	१४४	१,५००
				२९	उत्तराध्ययनजी	६५२	१,५००
				३०	नन्दीजी	२११	१,१२५
				३१	अनुयोगद्वारजी	३८०	"
२४	व्यवहारजी	"	"	३२	आवश्यकजी	४८	"
२५	बृहद्कल्पजी	९६	"				
							३२४२५

यों पुस्तकों शास्त्रों सब मिलकर १,२०९५० होते हैं परंतु निरियावलिकादि पंचक पांच शास्त्र होकर एक ही शास्त्र गिना है इस लिये ४०००वे अधिक गिनने से सब १,२४९६० पुस्तकें प्राय:× अमूल्य ही दी गई हैं. } कुल १,२०९५०

× यहां प्राय: शब्द लगाने का यह मतलब है कि—जैनामूल्य सुधा बंबइ के श्री रत्नचिंतामणी जैन मित्र मंडल की तरफ से, गुजराती ध्यानकल्पतरु मांगरोल वालेकी तरफ से, १०० प्रत शास्त्रों की मणिलाल भाइ की तरफ से, और जैनतत्वप्रकाश प्रथमावृति की कुछ प्रतों वाडीलाल भाइ की तरफ से मूल्य लेकर दीगइ है बाकी सब अमूल्य ही दीगइ है.

श्रीमान् राज्यमान् दानवीर जैन स्थम्भ राजाबहादुर लालाजी सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी जौंहरी हैद्राबाद (दक्षिण) वालोंने जैन धर्म के लिये किया हुआ १३६००० रुपे के सद्व्यय की यादि.

रु० ४२०००, जैन धर्म के परममाननीय बत्तीस शास्त्रोद्धार के कार्यार्थ.
रु० २००००, प्रगटदान-कॉन्फरन्स, प्रेस, स्थानकादि चन्दे वगैरा शुभकार्यों में.
रु० १००००, कान्फरन्स के मंडप भोजन व इनाम में दिया हुआ खर्च.
रु० १००००, तीन महा पुरुषों की दीक्षा के लिये किया हुआ खर्च.
रु० ७०००, जैनतत्त्व प्रकाश वगैरा पुस्तकों के अमूल्य देने में.
रु० ११०००, जैन सीझतेओं को तथा आये गये को दिया हुआ गुप्तदान.
रु० २००००, फुटकर मकान का भाडा प्रभावना जीवदया आदि का खर्च.
रु० १६०००, जैन मंदिर जो हैद्राबाद में साधु के दर्शन हुअे पहिले बनाया हुआ.
यों १३६०००, रुपे का खरच तो शिर्फ जैन धर्मार्थ किया ऐसा अंदाज से यहां लिखा जाता है. इस से कमी होने का संभव नहीं है.

॥ ॐ नमःसिद्धेभ्यः ॥

॥ शास्त्रोद्धार–मीमांसा. ॥

* मङ्गलाचरणम्. *

॥ णमो अरिहंताणं, णमोसिद्धाणं, णमो आयरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं ॥

इष्टितार्थ की सिद्धि के लिये प्रथम अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और सर्व साधु को विशुद्ध मन वचन व काया के योगों से सविनय नमस्कार करता हूं.

॥ प्रवेशिका ॥

गाथा–णाणस्स सव्वस्स पगासणाए । अण्णाण मोहस्स विवज्जणाए ॥
रागस्स दोसस्स य संखएणं । एगंत सोक्खं समुवेइ मोक्खं ॥ २ ॥
उत्तराध्ययन अ० ३२ ॥

(१) इस अनादि अनंत विश्वालय के निवासी जीवों के हृदय में अनादि परिणत राग द्वेष रूप मोह से उत्पन्न होती अज्ञान रूप घोर अंधकार आच्छादित हो रहा है. इस से जीव एकांत निरामय शाश्वत मोक्ष के सुख प्राप्त नहीं कर सकता है. इस अज्ञान से उत्पन्न होता मोह और मोह से उत्पन्न होते राग द्वेष का समूल नाश करके सर्व स्थान में प्रकाश करनेवाला और मोक्ष सुख देनेवाला ज्ञान ही है. (२) मानो इस ही ज्ञान का महात्म्य बताने के लिये अनादि सिद्ध सर्व माननीय श्री नमस्कार महा मंत्र में परमेश्वर श्री सिद्ध भगवान को द्वितीय पद में नमस्कार कर प्रथम ज्ञानप्रसारक ज्ञान दाता श्री अरिहंत भगवान को नमस्कार किया है. (३) श्री अरिहंत भगवानने श्री उत्तराध्ययन के २८ वे अध्ययन में मोक्ष गमन के चार कारन बताये हैं. उस में प्रथम पद ज्ञान को ही दिया है.

गाथा–णाणं च दंसणं चेव । चरित्तं च तवो तहा ॥
एय मग्ग मणुपत्ता । जीवा गच्छंति सोगइं ॥ ३ ॥

अर्थ-१ ज्ञान, २ दर्शन, ३ चारित्र और ४ तप, इन चारों का अनुक्रम से आराधन करनेवाला जीव सुगति-मोक्षगति में जाता है. इस लिये ज्ञान ही सब से उत्तम है (४) श्री दशवैकालिक सूत्र के चतुर्थ अध्ययन में कहा है कि—" पढमं नाणं तओ दया " प्रथम ज्ञान और फिर दया अर्थात् ज्ञान से जीवाजीव का स्वरूप जानेगा. जीवाजीव का स्वरूप जानने से उस की दया पाल सकेगा.

इस प्रकार ज्ञान की महिमा शास्त्र में स्थान २ पर की है. श्री जिनेश्वर भगवानने ज्ञान के पांच प्रकार कहे हैं जिस में से अधिक उपकारी श्रुत ज्ञान फरमाया है. श्री अनुयोग द्वार सूत्र के प्रारंभ में ही ज्ञान का कथन किया है सो देखिये.

सूत्र–णाणं पंचविहं पण्णत्तं तंजहा—आभिणिबोहियणाणं, सुयणाणं, ओहि णाणं, मणपज्जव णाणं, केवल णाणं, तत्थ चत्तारि णाणाइ ठप्पाइ ठवणिज्जाइ, णो उद्दिस्संति, णो समुद्दिस्संति, णो अणुण्णविज्जंति, सुयणाणस्स उद्देसो, समुद्देसो अणुयोगोय पवत्तइ–अनुयोगद्वार.

अर्थ—श्री तीर्थंकर भगवानने ज्ञान के पांच प्रकार कहे हैं तद्यथा—१ आभिनिबोधिक ज्ञान (मतिज्ञान) २ श्रुत ज्ञान, ३ अवधि ज्ञान, ४ मनःपर्यव ज्ञान और ५ केवल ज्ञान. इन पांच में से श्रुत ज्ञान सिवाय शेष चार ज्ञान का वर्णन नहीं करना. क्यों कि-वे लोक में व्यवहारोपयोगी नहीं हैं अर्थात् परोपकार नहीं करसकते हैं मात्र एक श्रुत ज्ञान से ही १ उद्देश—पढने की आज्ञा, २ समुद्देश—पढा हुवा ज्ञान में स्थिर करना, ३ अनुज्ञा-अन्य को पढाने की आज्ञा करना और ४ अनुयोग-विस्तार से पढाना यह चार कार्य किये जाते हैं इस लिये यही परोपकारी है.

यह तो स्पष्ट ही है कि पूर्वोक्त चार ज्ञानवाले उत्तम पुरुष ज्ञान में जाने हुवे पदार्थ के तत्त्वातत्त्व का स्वरूप श्रुत ज्ञान द्वारा ही अन्य लोगों को समझा सकते हैं. इस श्रुत ज्ञान के ही परम प्रताप से श्रोतागण ज्ञानी बनकर सम्यक्त्वादि गुणों के धारक होते हैं और चारित्र व तप का आचरण कर अनंत अक्षय शाश्वत मोक्ष सुख प्राप्त करने में समर्थ होते हैं. इस लिये मुमुक्षु जीवों को प्रथम श्रुत ज्ञान की ही परम आवश्यकता है.

प्रथम प्रकरण "सनातन शास्त्रोद्धार"

यद्यपि आत्मा का निजगुन ज्ञान अनादि अनंत है तथापि वह "धातु मृत्तिकावत्" अनादि कर्म बंध से आच्छादित हो रहा है. अब जिस प्रकार अग्नि क्षारादि प्रयोग से अनादि संबंधवाली धातु को छोडाकर निज स्वरूप में लाने के लिये सुवर्णकार कारणभूत होता है वैसे ही जीव को भी अनादि कर्म संबंध से मुक्त कर निज स्वरूप में लाने के लिये दो कारन हैं तद्यथा–" तन्निसर्गादधिगमाद्वा " अर्थात् १ निश्चय में तो निसर्ग से-अर्थात् अनंतानुबंधी कषायादि मोहनीय कर्म की प्रकृतियों का क्षय व क्षयोपशम से और व्यवहार में अधिगम से अर्थात् गुरु के सद्बोध से, व्यवहार से निश्चय का साधन होता है और निश्चय से व्यवहार फलद्रूप होता है, यों परस्पर दोनोंका घनिष्ट संबंध है. तथापि छद्मस्थ के लिये व्यवहार साधन की मुख्यता होने से इस स्थान इस का ही विस्तार से कथन किया जायगा.

श्री उत्तराध्ययन सूत्र के तीसरे अध्ययन में भगवानने कहा है तद्यथा—

गाथा—कम्माणं तु पहाणाए । आणुपुव्वी कयाइओ ॥
जीवा सोहि मणुप्पत्ता । आययंति मणुस्सयं ॥ ७ ॥

जिस प्रकार नदी में पडे हुए अनेक पत्थरों में से मात्र कोइक पत्थर पानी के संघर्षण से घीसाता हुवा वर्तुल, चिकना व स्वच्छ बनता है वैसे ही इस अनादि अनंत संसार रूप नदी के प्रवाह में अनन्त जीव रूप पत्थरों में से किसी जीव को स्वभाव से उत्तरत्व प्राप्त करने का अवसर मिलता है, तब सूक्ष्म निगोद में रहा हुवा चैतन्य स्वभाव रूप अक्षर के अनंतवे भाग ज्ञानमय आत्म शक्ति से प्राप्त होती शीत ऊष्ण वेदना वेदता हुवा, कर्मों की अकाम निर्जरा होने से ज्ञान की विशुद्धता को प्राप्त होता है. उस ज्ञान शक्ति के परम प्रताप से ही जीव आवकाहिक निगोद में से उचक कर बाहिर निकलता है. आगे ज्यों ज्यों ज्ञान शक्ति वृद्धि पाने लगती है त्यों त्यों कर्म वेदने के अनुभव की वृद्धि होती है. उस ज्ञान शक्ति के परम प्रभाव से वेदना वेदते हुए जीव के

कर्मोंका कभी होते२ सूक्ष्म नाम कर्म की निर्जरे तब वह बादरपने को प्राप्त होता है. फिर स्थावर नाम कर्मकी निर्जरा कर त्रस नाम कर्मकोप्राप्त होता है.यों द्वीन्द्रिय,त्रीन्द्रिय,चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय, संज्ञी पंचेन्द्रिय, मनुष्यत्व, आर्यत्व, यों क्रमशः उन्नत अवस्था को प्राप्त होता हुआ यावत् सर्व घनघातिक कर्मों का नाश कर सर्वज्ञ सर्वदर्शी बनता है. उस केवलज्ञान के परम प्रताप से सब कर्मों का नाश कर सिद्ध बुद्ध मुक्त हो मात्र केवलज्ञानमयही आत्मा बन जाता है तब वह परम आनंदी व परम सुखी होता है.

उक्त कथनानुसार घनघातिक कर्मों का नाश होने से अरिहंत पद को प्राप्त होने वाला आत्मा अनंत गतानुगत अवस्था के ज्ञाता बन, जिस प्रकार अपना आत्मा निगोद से निकल कर अरिहंत पद पर्यंत उन्नत अवस्था को प्राप्त हुआ है और भविष्यत् में सिद्ध के अनंत अक्षय परम सुख को प्राप्त करने में समर्थ बना है उस ही प्रकार अन्य आत्मा भी बनो, मानो इस ही परम हेतु से (निश्चय में शेष अघातिक कर्मों का क्षय करने के लिये) देव दानव व मानव सब अपनी २

प्रकाशक-राजाबहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी

भार्षा में समज सके, चारों ओर चार २ कोश में बैठी हुइ परिषदा अच्छी तरह श्रवण कर सके ऐसी दीव्य ध्वनि से ज्ञान का प्रकाश करते हैं. और अरिहंत भगवान के अतिशय से आकर्षायी हुई बारह प्रकार की परिषद में अनेक जीव एकत्रित हो इस अपूर्व अनुपम परम प्रभाविक वाणी का श्रवण करते हुए नागपुंगीवत् तल्लीन—मस्त बन जाते हैं. इतना ही नहीं अपितु उन के आत्माओं में शान्त, वैराग्य वीररस का प्रभाव विद्युत्शक्ति समान उछलने से कितनेक चक्रवर्ती बल्देव, मंडलिक राजा सामान्यराजा, राजपुत्र, क्षत्रिय, प्रधान, पुरोहित, सेनापति, इभ्भ, श्रेष्टि वगैरह अपरिमित ऋद्धि संपदा आदि परिवार का प्राणश्लेष्मवत् त्याग कर आत्मोद्धार के लिये तत्पर हो अरिहंत कथित संयम मार्ग अंगीकार करते हैं. कितनेक प्रत्याख्यानावरणीय कर्मोदय से संयम ग्रहण करने में असमर्थ होते है वे श्रमणोपासक बन कर सम्यक्त्व सहित बारह व्रत अंगीकार करते हैं, और अग्यारह प्रतिमा आदि क्रिया गृहवास में रहकर करते है. कितनेक अप्रत्याख्यानावरणीय कर्मोदय से श्रावक व्रत आचरने में

असमर्थ बनकर अरिहंत कथित मार्ग में श्रद्धालु बनकर अपना सर्वस्व आरहत प्ररूपित धर्म के लिये अर्पण कर के राज्यादि सुख के भोक्ता होते हुए भी जलकमलवत् निर्लेप रहते हैं. इस तरह .जिनवाणी के परम प्रभाव से अनेक साधु, साध्वी, श्रावक श्राविका देवता, देवी, तिर्यंच तिर्यंचणी रूप संघ होता है एसी तरह × जिन वाणी के परम प्रभाव से चौथे आरे में सर्वज्ञ प्रणित धर्म संपूर्ण आर्यावर्त में अद्धितीय रूप को धारन कर रहा था. इन के सामने अन्य धर्म सूर्याभिमुखखद्योतवत् लुप्तप्रायःही हो रहे थे. यह श्रुत ज्ञान ऐसा परम प्रभाविक है !

जिस प्रकार वर्तमान समय की इस भारत वर्ष में हिन्दी भाष सार्व जनिक होने से उस में कोई भी मनुष्य समज सकता है. उस ही प्रकार अरिहंत के विद्यमान समय में अर्ध माग धी भाषा सार्वजनिक व बहु मान्य थी. और खास करके मगध देश में इस का प्रचार बहुत था. वैसे ही उस समय देवताओं का

× ४ जाति के देव, ४ जाति की देवागना एव ८ और ९ मनुष्य, १० मनुष्यणी, ११ तिर्यंच और १२ तिर्यंचनी.

आवागन भी भूमि पर बहुत होता था. भगवती सूत्र के ५ वे शतक के ४ उद्देशे के * कथनानुसार देवताओं की भाषा भी अर्धमागधी होती है वैंहि भाषा लोगों को वहु प्रिय थी इसी लिये अरिहंत की दीव्य ध्वनि द्वारा निकलती हुइ वाणी अर्धमागधी भाषा मंय परिणमती थी. वह वाणी वर्णालंकार से संस्कार युक्त, उच्च (बुलन्द)सरल, तुच्छता रहित , भाषा के गौरव युक्त उच्चार में वैसे ही तत्व में गंभीर, प्रतिध्वनि उत्पादक, राग युक्त, त्रिविध रस मय, चित्ताकर्षक, विशेषार्थी, अविरुद्ध स्पष्टार्थी, निःशंकित, निर्दोष, देशकाल उचित, तत्वरूप, मार्मिक, सार्थक, अभिन्न, मध्यस्थ, चमत्कारिक, शंकानिवारक, सापेक्षिक. सात्विक, और पूर्ण उत्साह वर्धकादि गुण युक्त होने से परिषदा में रहे हुवे मनुष्य पशु पक्षी देवादि सब अपनी २ भाषा में समझते हैं. तथापि उस परम वागेश्वरी को यथारूप सम्यक् प्रकार ग्रहण करने की सामर्थ्यता तो मात्र अरिहंत के ज्येष्ट शिष्य गणधर ही धराते हैं. क्यों कि-

* सूत्र देवाणं भंते ! कयराए भासाए भासंती कयरा वा भासा भासिज्जमाणे विसिस्सइ ? गोयमा ! देवाणं अद्ध मागहीए भासाए भासंति, सावियाणं अद्ध मागही भासा भासिज्जमाणी विसिस्सइ ॥ श० ५. उ० ४ ॥

वे विशुद्ध विशाल विस्तीर्ण बुद्धि के धारक पूर्वों के ज्ञान के पाठी व परम स्मरण शक्तिवाले होते हैं. अरिहंत रूप हेमाचल के मुखारविन्द रूप पद्मद्रह से दीव्य ध्वनि रूप परम पवित्र गंगा नदी, वाणी रूप पानी के प्रवाह को गंगा प्रपात कुंड रूप गणधर ग्रहण कर जगदोद्धारार्थ आगे चलाने के लिये सूत्र रूप रचना कर अनादि प्रवाह अनुसार गुण निष्पन्न नामों की प्रथक् २ स्थापन करते हैं. यथा—श्री नंदी सूत्र में शास्त्रो के नाम इस प्रकार कहे हैं.

सूत्र—अहवा तं समासओ दुविहा पण्णत्ता तंजहा अंगपविठ्ठंच अनंग पविठ्ठंच ॥ १ ॥ से किं तं अनंग पविठ्ठं च ? अनंग पविठ्ठं च दुविहा पण्णत्ता तंजहा आवस्सयं च आवस्सयवइरित्तं च ॥ २ ॥ से किं तं आवस्सयं ? आवस्सयं छव्विहा पण्णत्ता ? तजहा सामाइयं, चउविसथओ, वंदणयं, पडिक्कमणं, काउसग्गो, पच्चक्खाणं, से तं आवस्सयं ॥ ३ ॥ से किं तं आवस्सयवइरित्तं आवस्सयवइरित्तं दुविहा पण्णत्ता तंजहा कालियं च उक्कालियं च ॥ ४ ॥ से किं तं उक्कालियं ? उक्कालियं अणेगविहा पण्णत्ता तंजहा—१ दसवेयालियं २ कप्पियाकप्पियं ३ चुलकप्पसुयं, ४ महाकप्पसुयं, ५ उववाइयं, ६ रायपसेणियं, ७ जीवाभिगमो ८ पण्णवणा, ९ महा पणवणा, १०

पमायप्पमायं. ११ नंदी, १२ अणुओगदाराइं १३ देविंदथुई १४ तंदुलवेयालियं १५ चंदाविजय १६ सूरपण्णत्ति १७ पोरसी मंडल, १८ मंडलप्पवेसो १९ विज्जाचरणं २० विणिच्छिओ, गणिविज्जा, २१ झाण विभत्ति २२ आयविभत्ति २३ मरण विभत्ति, २४ वीयरागसुयं, २५ संलेखासुयं, २६ विहारकप्पो, २७ चरणविही, २८ आउरपच्चक्खाणं २९ महा पच्चक्खाणं, ३० एव माइयं से तं उक्कालियं. ॥ ८ ॥ से किं तं कालियं ? कालियं अणेगविहा पण्णत्ता तंजहा १ उत्तरज्झयणाइं, २ दसाओ, ३ कप्पो ४ ववहारो, ५ निसीथ ६ महानिसीथ, ७ इसिभासियं ८ जंबुद्दीव पण्णत्ति ९ चंदपण्णत्ती, १० दीवसागर पण्णत्ती ११ खुड्डिया विमाणप विभत्ति १२ महाल्लिया विमाणप विभत्ति १३ अंगचुलिया, १४ वंगचुलिया, १५ विवाह चुलिया, १६ अरुणोववाए १७ वरुणोववाए १८ गुरुलोववाए १९ धरणोववाए २० वेसमणोववाए २१ वेलंधरोववाए २२ देविंदोववाए २३ उट्ठाणसुय २४ समुट्ठाणसुय, २५ नागपरियावणियाओ, २६ निरयावलियाओ, २७ कप्पियाओ, २८ कप्पवडिंसीयाओ, २९ पुप्फियाओ ३० पुप्फचूलियाओ, ३१ वण्हिदसाणं एव माइयाइं चउरासीइं पण्णग सहस्साणीइं भगवओ उसह सामियस्स आइतित्थयरस्स तहा संखिज्जाइं पइन्नग सहस्साइं मज्झिमगाणं जिणवराणं, चोद्दस पइन्नग सहस्साणि भगवओ वद्धमाण सामिस्स अहवा जस्स जत्तिआ सीसा उप्पत्तियाए विणइयाए, कम्मियाए पारिणामियाए चउव्विहीए बुद्धीए उववेया उत्तसत्तियाइ पइन्नग सहस्साइं पत्तेयबुद्धाणि तात्तियां चेवं से तं कालियं से तं आवस्स

वइरित्तं से त अणंगपविट्ठं ॥ ६ ॥

पूर्वोक्त श्रुत ज्ञान के समास के दो प्रकार श्री तीर्थंकर देवने कहे हैं जिन के नाम १ अंग प्रविष्ट और अंग वाहिर ॥ १ ॥प्रश्न—अंग बाहिर किसे कहते हैं ? अंग बाहिर के दो भेद कहे हैं तद्यथा—आवश्यक व आवश्यक व्यतिरिक्त ॥ २ ॥ प्रश्न—आवश्यक के कितने भेद कहे हैं ? उत्तर—आवश्यक के छ भेद कहे हैं तद्यथा—१सामायिक, २ चउवीसत्व, ३ वंदना, ४ प्रतिक्रमण ५ कायोत्सर्ग और ६ प्रत्याख्यान. यह आवश्यक शास्त्र हुए. ॥ ३ ॥ प्रश्न—आवश्यक व्यतिरिक्त किसे कहते हैं ? उत्तर—आवश्यक व्यतिरिक्त के दो भेद कहे हैं. तद्यथा-१ कालिक सूत्र कि जो दिन के तथा रात्रि के प्रथम व चतुर्थ प्रहर में ही पढे जाते हैं और २ उत्कालिक शास्त्र ३२ अस्वाध्याय छोड कर चाए किसी समय पढसके. ५ प्रश्न-उत्कालिक शास्त्र कितने हैं ? उत्तर-उत्कालिक शास्त्र अनेक हैं तद्यथा-१ दशवैकालिक, २ कल्पाकाल्पिक, ३ छोटा कल्पसूत्र, ४ बडाकल्पसूत्र, ५ उपपाति का ६ राजप्रश्नीय, ७ जीवाभिगम, ८ प्रज्ञप्ना, ९ महाप्रज्ञप्ना १० प्रमादाप्रमादी, ११ नंदी, १२ अनुयोग द्वार, १३ देवेन्द्रस्तुति.

१४ तंदुलवियाली, १५ चंद्रविद्या, १६ सूर्य प्रज्ञप्ति, १७ पोरसी मंडल, १८ मंडलप्रवेश, १९ विद्याचारण विनिश्चिति, २० गणि विद्या, २१ गाणविभक्ति, २२ आत्मविभक्ति २३ मृत्यु विभक्ति २४ वीतराग सूत्र, २५ संलेहणा सूत्र, २६ विहार कल्प २७ चरण विधी, २८ आयुःप्रत्याख्यान, २९ महा प्रत्यखयान इत्यादि.

चौरासी हजार पइन्ना प्रथम तीर्थंकर श्री ऋषभ देव स्वामी के समय में गणधरोंने बनाये, ऐसे ही संख्याते पइन्ने अजितनाथजीसे पार्श्वनाथजी पर्यंत बीचके तीर्थंकरों के गणधरोंने बनाये. और चउदह हजार पइन्ने श्री महावीर स्वामी के गणधरोंने बनाये. यों जिन तीर्थंकर के समय में जितने साधु होते हैं उतने पइन्ने उत्पातिकादिक चारों बुद्धि से बनाते हैं. तैसे हीप्रत्येक बुद्ध× भी उतने पइन्ने बनाते हैं. यह कालिक सूत्र हुए. यह आवश्यक व्यतिरिक्त और अंनग प्रविष्ट शास्त्र के नाम हुए ॥ ६ ॥ अंगप्रविष्ट शास्त्र कितने हैं ? उत्तर—अंगप्रविष्ट शास्त्र बारह हैं तद्यथा— (१) आचारांग.

+ यद्यपि प्रत्येक बुद्धजाति स्मरणादि कर किसी के उपदेश विना स्वयमेव दीक्षा धारन कर एकल विहारी होते हैं- तथापि जिन तीर्थंकर के समय में होते हैं उन के शिष्य कहे जाते हैं.

☛ पृष्ट १४वे की ४ थी ओली के इत्यादि के आगे निम्नोक्त पढनाजी !

उत्कालिक सूत्र जानना ॥ ५ ॥ प्रश्न—कालिक सूत्र किसे कहते हैं? उत्तर—कालिक सूत्र के भी अनेक भेद कहे हैं तद्यथा—१ उत्तराध्ययन, २ दशाश्रुतस्कन्ध, ३ बृहद्कल्प. ४ व्यवहार, ५ निशीथ, ६ महानिशीथ, ७ ऋषिभाषित, ८ जम्बूद्वीप, प्रज्ञप्ति ९ चन्द्रप्रज्ञप्ति, १० द्वीपसागर प्रज्ञप्ति, ११ लघुविमान विभक्ति, १२ महाविमान विभक्ति, १३ अंगचूलिका, १४ वंगचूलिका, १५ विविध चूलिका, १६ अरुणोपपाती, १७ वरुणोपपाति, १८ गुरुलोपपाति, १९ धरणोपपाति, २० वैश्रमणोपपाति, २१ वेलंधरोपपाति, २२ देवेन्द्रोपपाति, २३ उपस्थान सूत्र, २४ समुपस्थान सूत्र, २५ नाग परियावलिका, २६ निरियावलिका, २७ कल्पिका २८ कल्पवडिंसिका, २९ पुप्फिका, ३० पुप्फचूलिका, ३१ वान्हिदशा, इत्यादि.

इस में श्रमण निर्ग्रंथ के ज्ञानादि पांच आचार, ईर्यासमिति आदि गो चार, विनय वैय्यावृत्यादि विहार स्थान, मूल उत्तर गुण तप संयम उपधान वगैरह वर्णन है. इस के २ श्रुतस्कंध, २५ अध्ययन ८५ उद्देशे और १८००० पद हैं. २ सूत कृतांग, इस में स्वसमय की स्थापना व परसमय की स्थापना, जीवाजीव तथा लोकालोक तथा जीवादि नव पदार्थों के सद्भाव असद्भाव का स्वरूप, १८० क्रियावादि ८० अक्रियावादी, ६७ अज्ञानवादी, और ३२ विनयवादी, यों ३६३ पाखंड मत का अनेक हेतू द्रष्टांत द्वारा सुष्ट सम्मत से सत्कथन का प्रतिपादन किया है, और असत्कथन को उत्थापन किया है. किं वहुना मुक्त पथ के सोपान समान इस शास्त्र में कथन है. इस के २ श्रुतस्कंध, २३ अध्ययन. ३३ उद्देशे, और ३६००० पद हैं. (३) स्थानांग—इस में स्वसमय परसमय की स्थापना, जीवाजीव लोकालोक की स्थापना, द्रव्य गुण क्षेत्र काल पर्याय व नदी समुद्र भवन, विमान, आगर, निधान, उत्तम पुरुषों, ज्योतिषी, वगैरह के एक २ भेदसे, दश २ भेद पर्यंत के कथन का संग्रह है. इस का एक ही श्रुतस्कंध है. अध्ययन १० हैं २१ उद्देशे और ७२००० पद हैं. (४) समवायांग—इस में स्वसमय परसमय का उक्त सूत जैसे सूचन मात्र एक दो तीन यावत् कोटाकोटी बोल पर्यंत

संक्षिप्त वर्णन किया है. द्वादशांग के नाम अधिकार, जीवादिअधिकार, श्रमण समाचारी, चतुर्गति आहार, लेश्या, उपपात, अवगाह, अवधि, वेदना, विधान, परिधि प्रमाण, कुलकर, तीर्थंकर, गणधर, चक्रवर्ती, बलदेव, वासुदेव, प्रतिवासुदेव, कर्मभूमी व अकर्मभूमि आदि के कथन का संग्रह है. इस का एक ही श्रुत स्कंध, एक ही उद्देश, और ४४००० पद हैं. (५) विवाह प्रज्ञप्ति (भगवती) इस में. स्वसमय परसमय जीवाजीव, लोकालोक, नर सुर व ऋषि आदि का वर्णन विविध प्रकार के ३६००० प्रश्नोत्तर, द्रव्य, गुण, काल, भेद (पर्याय) प्रदेश, परिणाम, अनुगम, निक्षेप, प्रमाण वगैरह का संग्रह है. इस का एक ही श्रुतस्कंध, कुछ अधिक १०० अध्ययन, १००० उद्देश, १००० समुद्देशे और २८८००० पद हैं. (६) ज्ञाताधर्मकथांग—इस में नगर, उद्यान, चैत्य, (यक्षालय) वनखण्ड, राजा, माता, पिता, समवसरण, धर्माचार्य, धर्मकथा, इस लोक, पर लोक, ऋद्धि का विशेषत्व, भोग का परित्याग, दीक्षाग्रहण, सूत्र परिग्रहीत, तपोपधान, परिषह, शल्यैषणा, भक्त प्रत्याख्यान, पादोपगमन, स्वर्ग गमन, पुनःसुकुल में उत्पन्न होना. यावत् अंत क्रिया और धर्म भ्रष्टों के उदाहरण, शिक्षा वगैरह के कथन का संग्रह है. इस

दो श्रुत स्कंध और १९ अध्ययन हैं. इस सूत्र मे द्विविध समास हैं, प्रथम दृष्टांना रूप
और दूसरा चरित जैसे कथन रूप.इस सूत्र में ३५०००००० धर्मकथा और ५७६०००
पद हैं.(७)उपासक दशांग–इस में श्रावकों के नगर. उद्यान, चैत्य, वनखण्ड, राजा, माता,
पिता, तीर्थंकर के समवसरण,धर्माचार्य, धर्मकथा, इस लोक पर लोक ऋद्धि का विशेपत्व, श्रावक
के बारह व्रत, अग्यारह प्रतिमा, तपोपधान, सूत्र परिग्रहण,उपसर्ग,शल्यैपणा, भक्त प्रत्याख्यान,
पादोपगमन स्वर्ग गमन पुनःसुकुलोत्पन्न यावत् अंत क्रिया वगैरह कथन है.इस का एक श्रुत
स्कंध, १० अध्ययन १० उद्देशे हैं. और संख्याते १०५२००० पद हैं. [८] अंतकृतदशा
इस में कर्मों के अंत करनेवाले के नगर, उद्याने, चैत्य, वनखण्ड, राजा, माता, पिता,
समवसरण, धर्माचार्य, धर्मकथा, इस लोक, पर लोक, ऋद्धि विशेप, भोग परित्याग,
दीक्षा, सूत्र ग्रहण, तपोपधान, साधु की बारह प्रातिमा, दश यातिधर्म, समिति, गुप्ति, अप्रमा-
दित योग, स्वाध्याय, ध्यान, उत्तमसंयम, परिपहजय, कर्मघात, केवलज्ञान, दीक्षा
और कर्यान्तकर मोक्षप्राप्ति वगैरह कथन है. इस का एक श्रुतस्कंध, दश अध्ययन
सात वर्ग सात उद्देशे, दश समुदेश, संख्यात २३०४००० पद हैं (९) अनुत्तरोपपातिक.

...पाश दशा

...न्तकृ दशा

...नुत्त...पपाति

प्रश्नव्या करण

इस में अनुत्तर विमान में उत्पन्न होने वाले भव्यजीवों के नगर, उद्यान, चैत्यें, वनखण्ड, राजा, माता, पिता, समवसरण, धर्माचार्य, इस लोक परलोक, ऋद्धि विशेष, भोग परित्याग, दीक्षा सूत्रपरिग्रह, तपोपधान, सुकुलोत्पन्न बोधिलाभ और अंतक्रिया. इस प्रकार के अनगार महर्षियों का कथन संग्रह है. इस के दश अध्ययन के तीन वर्ग, दश उद्देशे, दश समुद्देशे, संख्यात ९४०४००० पद हैं.(१०)प्रश्नव्याकरण, इस में १०८ प्रश्न १०८ अप्रश्न १०८ प्रश्नाप्रश्न स्तंभनी. वशीकरणी, ओचाटनी आदि विद्या अतिशय नागकुमार सुवर्णकुमारादि के साथ संवाद. विविधार्थीभाषा स्वसमय, परसमय का स्वरूप,अदृष्टअंगुलादि भाषा के विविध प्रकार आमवऔषधादि ज्ञानादि गुण उपशमन ऐसे अनेक गुण पूरित,हितकर्ता,अंगुष्टबाहु,खड्ग,मणिइत्यादि रत्न चला सूर्य शंख,दंडादि सन्मुख से प्रश्नोत्तर प्राप्त करने की विद्या, चिंतितार्थ जानने की विद्या, इत्यादि बहुत प्रभाव शाली विद्या, दशप्रशम युक्त अतीत काल के तीर्थंकरों की स्थिति, सूक्ष्मार्थ सद्बोधक प्रत्यक्ष प्रतीत कर्त्ता ऐसे प्रश्नों के अनेक गुण अनेक प्रभाव शुभाशुभ सूचक. जिनेश्वर प्रणित कथनका संग्रह है, इस का एक ही श्रुतस्कंध ४५ उद्देशे ४५ समुद्देशे, संख्यात(९३११६०००)पद हैं (११)विपाक सूत्र इस में शुभाशुभ कर्म

विपाक

विपाक के फल का कथन है. इस में दो प्रकार का समास है तद्यथा-दुःख विपाक और सुख विपाक, दुःख विपाक के दश अध्ययन में दुःख २ से मोक्ष प्राप्त करने वाले जीवों के नगर उद्यान, चैत्य, वनखण्ड, राजा, माता, पिता, समवसरण, धर्माचार्य, धर्मोपदेश. संसार प्रबंध विस्तार, दुःखश्रेणी, हिंसा, झूट, चोरी, मैथुन, तीव्र कषाय, प्रमाद, पापप्रयोग, पापव्यापार, अशुभ अध्यवसाय, पापकर्मोपार्जन, पापानुभाग, नरक तिर्यंचयोनि के दुःख, तथा पुनः सुकुलोत्पन्न मोक्ष प्राप्ति पर्यंत सब कथन है, और सुख विपाक के दश अध्ययन में सुख से मोक्ष प्राप्त करने वाले जीवों के नगर, उद्यान. चैत्य, वनखण्ड, राजा, माता, पिता, समवसरण, धर्माचार्य, धर्मकथा, इसलोक, परलोक की ऋद्धि, दान महात्म्य, भोग परित्याग. दीक्षा, श्रुत परिग्रहण, तपोपधान प्रतिमा, शल्यैषणा, भक्त प्रत्याख्यान पादोपगमन, स्वर्गगमन पुनः सुकलोत्पन्न, पूर्णआयुष्य दीर्घशरीर, उत्तम जाति, कुल, आरोग्यता प्रबलबुद्धि समृद्धि निरंतर परंपरा से बहुत भवपर्यंत शुभ कर्म के फल भोगवकर मोक्ष गये इन का कथन है. ये दोनों विपाक का हेतु संवेगका हेतु भूत है. इस के २० अध्ययन, २० उद्देशे, २० समुद्देशे संख्याते (१८४०००००)पद हैं. इन अग्यारह अंग का कथन करते हुए प्रत्येक

स्थान सूत्र कार कहते हैं. कि-इन की परिता, वांचना-सूत्र प्रदान रूप, संख्यात अनुयोगद्वार, संख्याते वेष्टित-छंदबन्ध, संख्याते श्लोक, संख्याती निर्युक्ति-अर्थ संघनाकार संख्यात पद, एक२ पद के संख्यात अक्षर, अर्थ परिच्छेद रूप अनंत आमनय, पदार्थ रूप प्रवृतिरूप अनंत पर्यव, परिता त्रस जीवों की व्याख्या, अनंत स्थावर जीव की व्याख्या यह सब द्रव्य नयसे शाश्वात हैं और पर्याय नय से प्रतिसमय या अन्य प्रकार से परावर्तन होता है. यह अंग सूत्र रूप गुथाये हुए जिन प्रणित भावों सामान्य विशेष भिन्न २ प्रकार प्ररूपे उपहान से बतलायें, उपनय निगमादिसे उपदेशे. इस प्रकार एकादशांग रूप श्रुत ज्ञान की गहनता अगम्य होने से यह आगम कहे हैं

(अब देखीये ! बारवा अंग ज्ञान सागर को) १२ दृष्टिवाद इस में-सर्व प्रकार की प्ररूपणा का संग्रह पांच विभाग से विभक्त किया है. जिन के नाम-१ परिक्रम, २ सूत्र. ३ पूर्वांग, ४ अनुयोग और ५ चूलिका. इस में परिक्रम के सात भेद जिस में भी, प्रथम के दो परिक्रम के चौदह २ भेद और पांचवे परिक्रम के अग्यारह भेद

१ ३२ अक्षर का एक श्लोक ऐसे १५०८८६९४१० श्लोक का एक पद होता है.

व्याकि

कहे हैं, सूत्र के सब ८८ भेद, ३ पूर्वांगे के १४ भेद तद्यथा—१ उत्पाद पूर्व के ११००००००० पद, २ अग्राणिय पूर्व के ९६००००० पद, ३ वीर्य प्रवाद पूर्व के ७०००००० पद, ४४ आस्तिनास्ति प्रवाद पूर्व के ६०००००० पद, ५ ज्ञान प्रवाद पूर्व के ९९९९९९९ पद, ६ सत्य प्रवाद पूर्व के १०००००० पद, ७ आत्म प्रवाद पूर्व के २६००००००० पद, ८ कर्म प्रवाद पूर्व के १००००००० पद, ९ प्रत्याख्यान प्रवाद पूर्व के ८५०००००० पद, १० विद्यानुवाद पूर्व के १००१५०.० पद, ११ अवंद्य पूर्व के २६०००००००० पद, १२ प्राणायु पूर्व १५६००००० पद, १३ क्रिया विशाल पूर्वके ९००००.०००पद १४ लोकबिंदुसार पूर्व के १२५०००० पद, ×

× नोट—कहते हैं कि ५०० धनुष्य का हाथी, ३०० धनुष्य की अंबाडी और २०० धनुष्य का ध्वजादंड, यों १००० धनुष्य का हाथी डूबे उतनी स्याही पहिले पूर्व लिखने मे लगे. ऐसे दो हाथी डुबे उतनी स्याही दूसरे पूर्व लिखने में लगे, चार हाथी डुबे उतनी स्याही तीसरे पूर्व के लिखने मे लगे, आठ हाथी डुबे उतनी स्याही चौथे पूर्व लिखने मे लगे यों एक २ पूर्व के दुगुने २ हाथी चउदह पूर्व तक जानना. सब चउदह पूर्व लिखने में १६३८३ हाथी, डूबे जितनी स्याही लगे. इतना किसी ने लिखा नहीं और कोई लिखेगा भी नहीं मात्र अनुमानसे इस का प्रमाण बताया है. अहो आश्चर्य ! श्रुत ज्ञान की अगाधता. ! !

४अनुयोग इस के दो भेद१प्रथमानुयोग इस-में भूत भविष्य व वर्तमान के तीर्थंकरों के नयर, माता पिता, ऋद्धि राज्यावस्था, चारों तीर्थ का परिवार, आयुष्य यावत् मोक्ष प्राप्ति. ऐसे ही चक्रवर्ती, बलदेव, वासुदेव, प्रतिवासुदेव आदि श्लाघनीय पुरुषों का, उत्सर्पिनी, अवसर्पिनी आदि काल का वगैरह कथन है. * ५ चूलिका-प्रथम के चार पूर्व की चूलिका तो उन पूर्व के साथ ही होती है. और शेष चार पूर्व की चूलिका इस में होती है. इस के १०५९४६००० पद हैं.

भव्य गणो ! उक्त प्रकार के तीर्थंकर की दीव्य ध्वनि रूप वाणी द्वारा प्रकाशित ज्ञान का गणधरोंने हृदय कोश में संग्रह कर उस में से समास को पृथक् २ कर शास्त्रों की रचना गत काल में की है. वर्तमान में कर रहे हैं और अनागत में करेंगे. यह उक्त कथित श्रुतज्ञान अनादि अनंत व शाश्वत है. प्रमाण

इच्चेयाइं दुवालस गणि पिडगं ण कयाइ ण पासी, ण कयाइ ण भवति, ण कयाइ ण भविस्सति, भुविंच भवति च भविस्सइ च, धुवे, नितिए, सासए अक्खए, अव्वए, अव्वाट्ठिए, निच्चे से जहा नामए पचत्थी काया ॥ १ ॥ नंदी-ठाणांग.

— कहते हैं कि इस चौथे विभाग मे ५ वात है जिस में से प्रथम वात के ५००० पद और शेष पांच के अलग अलग २०९८९२०० पद है

अर्थ-उक्त द्वादशांगादि आचार्य के खजानें समान जो ज्ञान है वह गत काल में नहीं था वैसा नहीं, वर्तमान में नहीं है वैसा नहीं और भविषत् में नहीं होगा वैसा भी नहीं परंतु गत काल मे था, वर्तमान काल में है और अनागत काल में होगा. इस से यह शास्त्रों का ज्ञान धर्मास्ति काया आदि पंचास्ति काया जैसा धृव, नित्य, व शाश्वत, अक्षय, अव्यय व अवस्थित है.

इस सिवाय और भी व्यवहार सूत्र में पाच शास्त्र के नाम कहे हैं यथा—१ तेय निसग्गवं, २ आसीविष भावना, ३ दिट्ठीविष भावना, ४ महा सुमिण भावना और ५ चारण भावना. और भी स्थानांग सूत्र के दशवे ठाणे में दश शास्त्र के नाम कहे हैं तद्यथा—१ कम्म विवाग दसा, (विपाक) २ उवासगदसा, ३ अंतगडदसा, ४ अनुत्तरोववाइदसा, ५ पसणवागरणदसा, ६ आयारदसा, (दशाश्रुत स्कंध,) ७ खंदपदसा, ८ दोगंधिकदसा, ९ दीर्धदसा, और १० संखेवियदसा. इन में से ६ नाम तो उक्त शास्त्र में आगये हैं. और पीछे के चार शास्त्र इस काल में दृष्टिगत नहीं हैं. यों २९ उत्कालिक, ३१ कालिक, १२ अंग, ५ व्यवहार सूत में कहे सो, और ४ स्थानांग सूत्र के दश नाम में

के अधिक यों सब ८१ शास्त्र तो शाश्वत अनादि अनंत होनें चाहियें.

द्वादशांग तो शाश्वत अनादि अनंत हैं ऐसा श्री समवायांग और नंदीजी सूत्र के मूल पाठ से सिद्ध होता है और द्वादशाग में जिन सूत्रों के नाम होवें वे भी शाश्वते विना सिद्धि के सिद्ध हैं. द्वादशांग में इस प्रकार से सूत्रों के नाम पाये जाते हैं. यथा-सूयगडांग सूत्र के दूसरे श्रुतस्कंध के प्रथम अध्ययन में "रायवण्णओ जहा उववाइए" अर्थात् राजा का वर्णन उववाइ सूत्रानुसार जानना. २ स्थानांग के चौथे ठाने में "चचारि पण्णत्तीओ अंग बाहिरियाओ पण्णत्ताओ तंजहा-चंद पण्णत्ती, सूरपण्णत्ती, जंबुद्दीव पण्णत्ती दीवसागर पण्णत्ती" अर्थात् चार प्रज्ञप्ति सूत्र द्वादशांग के बाहिर कहे हैं तद्यथा— चंद्र प्रज्ञप्ति, सूर्य प्रज्ञप्ति, जंबुद्वीप प्रज्ञप्ति और द्वीपसागर प्रज्ञप्ति." स्थानांग सूत्रके अस्तित्वमें इन का अस्तित्व होने से इन के नामे इस सूत्र में आये हैं.तैसे ही दशवे ठाणे में "आयार दसाणं दस अज्झयणा पण्णत्ता" अर्थात् दशा श्रुतस्कंध के दश अध्ययन कहे हैं. ३ समवायांगकेछव्वीसवे समवाय में "छव्वीसं दसकप्प ववहाराणं पण्णत्ता" अर्थात् दशाश्रुत स्कंध, बृहद्कल्प और व्यवहार इन तीनों के २६ अध्ययन कहे है तद्यथा—१० अध्ययन दशाश्रुत स्कंध के, ६ अध्ययन बृहत्कल्प के और १० अध्ययन व्यवहार सूत्र

के तथा छत्तीसवे समवाय में "छत्तीसं उत्तरज्झयणा पण्णत्ता" अर्थात् उत्तराध्ययन सूत्र के ३६ अध्ययन कहे हैं और उन के नाम भी कहे हैं. ८८ वे समवाय में "दीट्ठिवायस्स अट्ठासीइ सुत्ताइ पण्णत्ताइ तंजहा-उज्जुसुयं परिणया परिणयं एवं अट्ठासीइ सुत्ताणि भाणियव्वा जहां नंदीए" अर्थात् ८८ वे समवाय में दृष्टिवाद के अट्ठासीइ सूत्र कहे हैं और इन के सविस्तर नाम नंदी में दिये हैं. वैसे ही समवायांग के पीछे के अधिकार में "कइविहेणं भंते ! ओही पण्णत्ता ? गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता. तंजहा भवपच्चइए खओवसमिएय एवं सव्वं ओही पदं भाणियव्व" अर्थात् अहो भगवन् ! अवधिज्ञान किस प्रकार कहा ? अहो गौतम ! अवधिज्ञान दो प्रकार कहा तद्यथा—१ भवप्रत्ययिक और २ क्षयोपशमिक. ऐसे ही आहार पद लेश्या पद का भी कथन है यह सब कथन पण्णवणा पद में का है. ४ भगवती-शतक ८ वे उद्देशे २ में "से किं तं सुअ अण्णाणं जमइ अण्णाणीहि मिच्छादिट्ठीएहिं जहा नंदीए" अर्थात् श्रुत अज्ञान के कितने भेद कहे हैं ? जो मति अज्ञान मिथ्या दृष्टि का नंदी सूत्र में कहा वह सब यहां जानना. वैसे ही भगवती शतक ९ उद्देशा ३३ जमाली के अधिकार में "जहा उववाइए" दीक्षाधिकार में जहा "रायप्पसेणिए" वैसे ही भगवती शतक १७ उद्देशे ३ छ भाव के अधि-

कार में जहा अनुयोगदारे और भगवती में जीवाभिगम तथा पण्णवणा की साक्षी स्थान २ पर दीगइ है. इस प्रकार अंग में बहुत स्थान उपांगादि शास्त्रों की साक्षी दीगइ है. तो जब पहिले वे सूत्र थे तब ही दी गइ है. इस अपेक्षा नंदी सूत्र में जिन शास्त्रों के नाम कहे हैं वे सब शास्त्र द्वादशांग जैसे ध्रुव नित्य शाश्वत अक्षय अव्यय, अवस्थित जानना, क्यों कि नंदी सूत्र की साक्षी अंग में होने से वह सूत्र भी तीर्थंकर प्रणित अनादि हैं.

यद्यपि उक्त कथनानुसार महा विदेह क्षेत्र आश्रिय शास्त्र ज्ञान अनादि अनंत है तथापि भरतैरावत क्षेत्र आश्रिय काल प्रभाव से दश क्रोडाक्रोड सागरोपम उत्सर्पिणी तथा अवसर्पिणी काल में मात्र एक क्रोडाक्रोड सागरोपम से कुच्छ अधिक काल पर्यंत ही उक्त ज्ञान प्रसिद्ध में रहता है. श्रुत ज्ञान के प्रकाशक अरिहंतादि महा पुरुषों का विच्छेद होने से ज्ञान लुप्त होता है. और जब अरिहंत भगवान जन्म लेकर तीर्थों की स्थापना करते हैं तब उपदेश द्वारा अर्थ रूप जिनवाणी का प्रकाश करते हैं. इस को गणधर ग्रहण कर द्वादशांग, कालिक व उत्कालिकादि हजारों पइन्ने बनाते हैं. और उक्त नाम स्थापन करते हैं. ऐसा क्रम अनादि काल से चला आता है और भविष्यत में अनंत कालतक चलता रहता है. इस प्रकार

शाश्वत हैं और पर्यायास्तिक नय से शास्त्रों में जो जो
द्रव्यास्तिक नय से शास्त्र रूप श्रुत ज्ञान शाश्वत हैं और पर्यायास्तिक नय से शास्त्रों में जो जो प्राचीन कालमें बनी हुई कथा हैं उसे निकालकर अल्प कालमें बने हुए उस ही प्रकार के बनावों को तथारूप सत्य कथनपने उस स्थान स्थापन कर देते हैं. वैसे ही द्रव्य क्षेत्र काल भाव के फेरफार के अनुसार और भी सम्मास का फेरफार गणधर करते हैं. यद्यपि द्रव्यादि की अनुकूलता प्रतिकूलतानुसार अधिकारों में फेरफार करते हैं तथापि उस अधिकार के मूल आशय से अलग नहीं जाने देते हैं. अर्थात् मूल आशय वैसा का वैसा ही रखते हैं. ऐसा परम प्रभाविक अनादि अनंत श्रुत ज्ञान है.

इस वर्तमान अवसर्पिणी काल का प्रथम आरा सुषमासुषम नामक चार क्रोडाक्रोड सागरोपम का था. दूसरा सुषम नामक आरा तीन क्रोडाक्रोड सागरोपम का था, तीसरा सुषम दुषम नामक आरा दो क्रोडाक्रोड सागरोपम का था. इन तीनों आरे में युगल मनुष्य थे. उस समय श्रुत ज्ञान लुप्त प्रायः था. तीसरे आरे के चौरासी लाख पूर्व * तीन वर्ष, साढी आठ महिने शेष रहे तब अयोध्या नगर में नाभी कुल कर की

* ७०५६००० क्रोड़ क्रोड वर्ष का एक पूर्व.

मान

ऋषभ देव

मरुदेवी रानी की कुक्षि में चउदह उत्तम स्वप्न देकर तीन ज्ञान युक्त पुत्र रत्न उत्पन्न हुवा. ऋषभ (बैल) का स्वप्न तथा लक्षणानुसार ऋषभ देव नाम दिया. वे अवधि ज्ञान से कर्तव्यकर्म के ज्ञाता होने से काल प्रभाव का परिवर्तन होता देख जीताचार अनुसार मनुष्यादि प्राणियों के रक्षणार्थ अपनी ब्राह्मी नामक पुत्री को लीपि (लीखने की) की कला सीखाइ और सुंदरी नामक पुत्री को अंक (गणित) की कला सीखाइ. तैसे ही १०० पुत्र आदि पुरुषों के लिये ७२ कला व स्त्रियों के लिये ६४ कला का कथन किया. ऐसे ही १८ श्रेणी (उत्तम) और १८ प्रतिश्रेणी कनिष्ट यों ३६ जाति की स्थापना की. कल्पवृक्ष के अभाव से क्षुधा पीडित अनेक प्राणियों का संरक्षण किया. जब ऋषभ देव का आयुष्य एक लाख पूर्व का रहा तब जगज्जीवों के उद्धारार्थ धर्मतीर्थ की स्थापना करने के लिये अपनी राज्य ऋद्धि का त्याग कर श्रमण धर्म की दीक्षा अंगीकार की. दीक्षा लेते ही चतुर्थ मनःपर्यव ज्ञान उत्पन्न हुवा. एक हजार वर्ष पर्यंत चार घनघातिक शत्रु व चार कषायों के साथ निरंतर युद्ध करके उस का नाश कर अरिहंत बने, और केवल ज्ञान केवल दर्शन प्राप्त करके

सर्व लोकवर्ती चराचर पदार्थों को और द्रव्य, क्षेत्र, काल भाव को हस्तामलवत जानने देखने लगे, इन के परमातिशय से आकर्षाये हुए ४ जाति के देव, ४ जाति की देवांगना एवं ८ और ९ मनुष्य, १० मनुष्यणी. ११ तिर्यंच और ११ तिर्यंचणी यों बारह प्रकार की परिषद के अनेक श्रोताजन के बीच में एक योजन पर्यंत ध्वनि आवे वैसे महा मेघवत् गर्जारव करती दीव्य ध्वनि रूप वाणी से पूर्वोक्त प्रकार अर्थ धर्म का प्रकाश किया. इसे पुडरीकादि चौरासी गणधरोंने अपने हृदय में धारण किया. और उसके ८४००० पइन्ने बनाये. श्री ऋषभ देव का शासन पचास कोडाकोड सागरोपम तक एकसा चला, इस को आराध कर अनेक जीव मोक्ष गये. फिर दूसरे अरिहंत अजितनाथ हुए. उनोंने भी उक्त प्रकार धर्म की प्ररूपना की उन के ९५ गणधरोंने एक लाख पइन्ने की रचनां की. इस प्रकार नववे अरिहंत श्री सुविधि नाथ तक तो एकसी रचना निरंतर चली आई. अब नववे सुविधि नाथ मोक्ष गये पीछे हुंडा अवसर्पिणी काल के प्रभाव से ऐसा अच्छेरा हुवा कि जैन धर्म का साफ़ व्यवच्छेद होगया. इस से उस समय इस भारत

वर्ष में जैन आगम का भी व्यवच्छेद होगया. फिर दशवे श्री शीतलनाथ अरिहंत हुए उनोंने पुनःउक्त प्रकार ही उपदेश दिया और उन के मोक्ष पधारे पीछे पुनः धर्म का व्यवच्छेद हुवा. ऐसा सतरवे अरिहंत श्री कुंथुनाथ तक चला. इस व्यवच्छेद काल में अनेक अन्यमतावलम्बियों की उत्पत्ति हुइ. अनेक मिथ्याशास्त्रों की वृद्धि हुई, इस के प्रभाव से ज्ञान में बहुत घोटाला हुवा. सतरहवे अरिहंत से चौवीसवे श्री महावीर स्वामी पर्यंत शास्त्र ज्ञान अविच्छिन्न अखंडित एकसा चला आया.

भरत एरावत की प्रत्येक उत्सर्पिणी अवसर्पिणी में चौविस २ ही तीर्थंकर होते हैं ऐसा अनादि काल से चाल आता रिवाज है. उन तीर्थंकरों के समय में साधु, साध्वी श्रावक और श्राविका रूप चारों तीर्थ विनय सरलतादि गुण संपन्न होने से निर्मल बुद्धि के धारक व विशेषज्ञ होते हैं और कितनेकऐसे लब्धिपात्र भी होते हैं कि तीर्थंकरादि गुरुओं के पास से चमत्कारिक प्रकार से विद्या धारन करने में समर्थ होते हैं. अर्थात अट्ठाइस लब्धिमें से पूर्वधर की लब्धि धारक साधु एक मूहूर्त मात्र में "उपन्नेवा,विघन्नेवा,धुवेवा" इन तीन पद के पठम मात्त से चउदह पूर्व का ज्ञान कंठाग्र कर लेते थे पदानुसम

लब्धि वाले भी किसी भी शास्त्र के एक ही पद के पठन मात्र से सपूर्ण शास्त्र कंठाग्र कर लेते थे. अक्षीणमाणसी लब्धि वाले जितना ज्ञान सुनते उतना कंठस्थ होजाता और उसे कदापि भूलते नहीं, बीजबुद्धि वाले का ज्ञान जैसे एक वटादिका बोया हुआ बीज केइवट वृक्षों को उत्पन्न करता है, वैसे ही जिनका अध्ययन किया हुआ ज्ञान का वट वृक्ष जैसे विस्तार करते थे. अवधि ज्ञान की लब्धि वाले अवधि ज्ञान, मनःपर्यव ज्ञान की लब्धि वाले मनःपर्यव ज्ञान और केवल ज्ञान की लब्धि वाले प्राप्त करते थे. उस समय ऐसे २ लब्धिं धारक प्रबल बुद्धि वाले पुरुषो का अस्तित्व होने से पूर्वोक्त शास्त्र ज्ञान का भी अस्तित्व था, परंतु बुद्धि की तीव्रता होने से सब ज्ञान को कठस्थ रखलेते थे, इस से उसे पुस्तकारूढ करने की उस समय आवश्यकता नहीं थी. वैसे ही उतना ज्ञान पुस्तकारूढ करने कोई समर्थ भी नहीं था. क्योंकि एक आचाराङ्ग के १८००० पद होते हैं और ३२ अक्षर के एक श्लोक के हिसाब से एक पद के १५०८८६८४० श्लोक होते हैं. इस हिसाब से १८००० पद के कितने श्लोक होने चाहिये ? इस से दुगुने पद दूसरे सूत्रकृतांग सूत्र, के हैं, यों द्वादशाग सूत्र के पदों की संख्या के हिसाब से उस के ग्रन्थ की संख्या का प्रमाण लगाने से मालुम

होगा. कि एक आचारांग सूत्र का लेख होना ही बडा कठिन है तो सब सूत्रों का तो कहना ही क्या ? अर्थात् सब सूत्रों का संपूर्ण लेख किसीने किया नहीं, कोई करते भी नहीं और करेगा भी नहीं, मात्र मनुष्य बुद्धि से विचार सागर में ही संमावेश होकर टिक सकता है और वेही महा पुरुष ऐसे ज्ञान को पचा सकते हैं.

२४४६ वर्ष पहिले जब चौविसवे अरिहंत श्री महावीर स्वामी सर्वज्ञ सर्व दर्शी विराजमान थे, उनोंने लोकालोकका व लोकमें रहे सर्व चराचर पदार्थों को द्रव्य क्षेत्र काल भाव की संपूर्णता कर जाने देखे. उस में के तारतम्य रूप परम आवश्य कीय कथन कि जो वाणीद्वारा प्रकाशने योग्य होते हैं वे ही दीव्य ध्वनि द्वारा प्रगट होते हैं. अर्थात् केवल ज्ञान में जिन २ पदार्थ को व भाव को जाने देखे जाते हैं उन २ सब को वाणीद्वारा कहने के लिये पाटानुपाट अनंत केवलज्ञानी भी प्रयत्न करे तो भी सब पदार्थोंका अनंतवा भाग भी कहने समर्थ होवे नहीं. क्यों कि केवल ज्ञान अनंत हैं और जगत में पदार्थ भी अनंत हैं. जिस में एक २ पदार्थ की पर्याय परिणमन परिवर्तन रूप अनंत विवक्षा होती हैं, वह सब किस प्रकार प्रकाश कर सके.

इस में अरिहंत केवल ज्ञानियों शक्तिकी न्यूनता नहीं समझना परंतु अनहोती बात नहीं होती है. इस लिये केवल ज्ञान में देखे हुए पदार्थों में से अनंतवे भाग के पदार्थ और एक २ पदार्थ का अनंतवे भाग का स्वरूप अरिहंत श्री महावीर स्वामीने कथन किया है. और जिस आशय के जिस परिणाम से श्री महावीर स्वामी के कथन किया था उन के सर्वांश आशय को गणधर नहीं ग्रहण कर सकते हैं. क्यों कि ऐसा ही गहन गांभीर्यता पूर्वक सर्वज्ञों का कथन होता है, अनंतज्ञानियों का कथन अनंत नयात्मक होता है उस का संपूर्ण आशय तो अनंत ज्ञानी ही समज सकते हैं. छद्मस्थों की इतनी क्या शक्ति है. जैसे महा समुद्र के औघ समान अनंत ज्ञानियों के ज्ञान का प्रवाह घडे समान श्रुत ज्ञानियों की बुद्धि संपूर्णता से किस प्रकार ग्रहण कर सके. अर्थात् सर्वांश आशय ग्रहण नहीं कर सके. इस लिये श्री महावीर स्वामी द्वारा प्रकाशित हुवा अनेक नयात्मक ज्ञान का अनंतवा भाग ग्रहण कर भव्य जीवों के उपकार के लिये सूत्र गुंथन करने की परम लब्धि के धारक परमोपकारी गणधरोंने श्रुत ज्ञान को चिरस्थायी बनाने के लिये परम्परा से उपरोक्त प्रकार द्वादशांग कालिक उत्कालिकादि १४००० पइन्ने आवश्यकादि विभाग में विवक्षित कर शास्त्र की रचना रची कि जो शास्त्र इस समय अस्तित्व में हैं.

ज्ञान हानी

श्री महावीर स्वामी के अग्यारह गणधरों में से ९ गणधर तो उन के समय में ही मोक्ष पधार गये और महावीर स्वामी के मोक्ष पधारे बाद एक प्रहर में श्री गौतम स्वामी जी सर्वज्ञ सर्वदर्शी बने. इस सबब से श्री श्रमण भगवान महावीर स्वामी के पाट पर पांचवे गणधर श्री सुधर्मा स्वामी को आचार्य पद प्राप्त हुवा. यह भी श्रुत केवली थे. श्री सुधर्मा स्वामी के ज्येष्ट शिष्य श्री जम्बू स्वामी थे. उन को गुरुने ज्ञान सिखाया. परंतु जैसा स्वतः को ज्ञान था वैसा ज्ञान देसके नहीं. अगाध अर्थवाले आगम का पूर्ण आशय जिस प्रकार जानने में आता है उस प्रकार वाणी द्वारा उच्चारण नहीं होसकता है, इस लिये धारण किये हुवे ज्ञान का अनंतवा भाग का शास्त्र ज्ञान श्री जम्बु स्वामी को धारण करा सके. और जिस आशय से श्री सुधर्मा स्वामीने श्री जम्बू स्वामीको ज्ञान दिया था उस संपूर्ण आशयको श्री जम्बू स्वामी भी धारण कर सके नहीं. क्यों कि उत्सर्पिणी काल प्रभाव से मनुष्यों की बुद्धि में मंदता प्रतिसमय होजाती है. इस तरह वे संपूर्ण आशय को नहीं समजने से प्रकाशित ज्ञान का अनंतवा भाग धारण कर सके. ये दोनों ही सर्वज्ञ बन मोक्ष पधारे. श्री महावीर स्वामी जी मोक्ष गये पीछे ६४ वर्ष पर्यंत केवलज्ञानी रहे. और श्री जम्बू स्वामी मोक्ष गये पीछे दश बोल विच्छेद गये जिन में-१ केवल ज्ञान, २ मनःपर्यव ज्ञान और ३

अवधि ज्ञान ये तीन ज्ञान हैं अर्थात् इन तीनों ज्ञान का व्यच्छेद होगया ! इस से इस भरतक्षेत्र में ज्ञानकी महा हानि हुई अर्थात् इस से प्रत्यक्ष प्रमाण ज्ञानका विच्छेद हो गया.

श्री जम्बू स्वामीजीने अपने ज्येष्ट शिष्य श्री प्रभवा स्वामी को ज्ञान सिखाया था, उनोंने भी अनंतवे भाग का ज्ञान धारन किया. यह दृष्टिवाद में से मात्र १४ पूर्व से कुच्छ विशेष धार सके, शेष दृष्टिवाद छिन्नभिन्न होगया. इस प्रकार श्री महावीर स्वामी जी क निर्वाण पीछे १७० वर्ष अर्थात् ७वे पाट पर श्री भद्रबाहुस्वामी १४ पूर्व के पाठी हुए. उस समय जो अग्यारह अंग रहे थे उन ज्ञान का स्मरण रखना भी साधुओं की शक्ति के बाहिर का कार्य समज कर पाटलीपुर नगर में सभा कर विवर्ण सहित समज में आवे उस प्रकार पूर्वोक्त शास्त्रानुसार ही अग्यारह अंग संक्षिप्त किये.

श्री भद्रबाहु स्वामी के शिष्य श्री स्थूलिभद्रस्वामी दश पूर्व का ज्ञान पूर्णतया धारन कर सके नहीं. उस समय से श्रुत केवली का व्यवच्छेद हो गया. अब जो ज्ञान रहा था उस में भी काल प्रभाव से हानि होते २ श्री महावीर स्वामी के निर्वाण पीछे

८१४ वर्ष अर्थात् २०वें पाट पर श्री स्कंदिलाचार्य हुए उनने अपने शिष्यों को कंठस्थ ज्ञान का विस्मरण होता देखकर मथुरा नगरी में सभाकर पूर्वोक्त सूत्रों को संकुचित बनाकर संक्षिप्तार्थ में सूत्रों का लेख किया. इसे अधुना माधुरी वांचना भी कहते हैं.

उक्त प्रकार काल प्रभाव से ज्ञान की मंदता से सूत्र ज्ञान संक्षिप्त होता हुवा श्री महावीर स्वामी के निर्वाण से ९७० वर्ष पीछे अर्थात् २७वे पाटपर परमोपकारी श्री देवर्द्धिगणी क्षमा श्रमण एक पूर्व के ज्ञाता हुए. एकदा वे सूचिका रोग निमित्त सूंठका गांठिया लाये. आहार किये पीछे उस को उपयोग में लेने का होने से उसे कान में रखा. परंतु उसे भूलगये और प्रतिक्रमण की आज्ञा के लिये वंदना करते नीचे पडगया. ऐसा देख आचार्य खेदित होकर विचारने लगे कि अभी एक पूर्व ज्ञान होने पर भी बुद्धि की इतनी मंदता होगइ है तो नमालुम आगे क्या होगा ? जिस प्रकार मैं सूंठ का गाठिया भूल गया इस प्रकार ही जो कभी शास्त्र ज्ञानका विस्मरण होजायगा तो भरतक्षेत्र में घोर अंधकार हो जायगा. ऐसा श्री उत्तराध्ययन सूत्र के १०वे अध्ययन में भगवानने कहा है कि.

गाथा-न हु जिणे अज्ज दिस्सइ, बहुमए दिस्सइ मग्गदेसिए। संपई णेयाउए पहे, समयं गोयमा मा पमायए ॥ १ ॥

अर्थ—आगे पांचवे आरेमें जिनेश्वर भगवान के दर्शन का तो अभाव होजायगा परंतु अरिहंत पथ के प्रकाशक साधु तथा अरिहंत प्रणीत सूत्र बहुत रहेंगे, इसलिये अहो भव्यों ! उन से ज्ञानादि ग्रहण करने में किंचिन्मात्र, प्रमाद मत करो.

इन वचनानुसार अभी शास्त्र ज्ञान ही धर्मसाधक को परम आधार भूत है. जो इस का ही विच्छेद हो गया तो आगमिक काल में साधुओं जैन धर्म का प्रकाश किस प्रकार करेंगे ? जैन मार्ग का अस्तित्व किस प्रकार रहेगा ? इस लिये ऐसा उपाय करना चाहिये कि श्रुतज्ञान आगे के लिये बना रहे. वह उपाय एक यह ही है कि शास्त्रों पुस्तकारुढ होजाय. परन्तु उस समय जितना ज्ञान था उतना सब ज्ञान लिखने का अवकाश व सामर्थ्य नहीं होने से और सब शास्त्र विना धर्म का अस्तित्व कठिन होने से सब शास्त्रों की सन्धीकर जो जो समास परम आवश्यकीय था उसे संक्षिप्त उद्धार कर लिखना परम उचित समजा. ऐसा

* कोइ कहते है कि वेलधर देवता की आराधना कर शास्त्र की लीपि प्राप्त की और तदनुसार शास्त्र लिखे

विचार कर सब की सम्मति लेने के लिये वल्लभिपुरमें एक सभा विद्वान साधुओं की कायम की गई. इस का प्रारंभ श्री महावीर स्वामी के निर्वाण पीछे ९८० वर्ष में हुवा. और ९९३ वर्ष अर्थात् १३ वर्ष पर्यंत इस सभा का कार्यक्रम चालू रहा. जिन २ साधुओं को जो २ शास्त्रज्ञान कंठाग्र था. उनोंने वे शास्त्र लिखने सुरु किये. विस्मरणता से जहां २ मतांतर हुए वहां पाठांतर करदिये अर्थात् दोनों बातें लिखदी. उस प्रकार आचारांग के दो श्रुत स्कंध के ९ अध्याय थे. जिस में ८ वा अध्याय पंचम आरे के योग्य नहीं जानकर निकाल डाला और शेष अध्याय लिखे. दूसरे श्रुतस्कंध के १६ अध्याय लिखे. सब मिलकर मात्र २५०० श्लोक में ही संधी करके सारांश खेंच लिया. २ सुयगडांग के दो श्रुतस्कंध प्रथम श्रुतस्कंध के १६ अध्याय और दूसरे के ७ सब मिलकर २१०० श्लोक में सारांश खेंच लिया. ३ स्थानांग का एक ही श्रुतस्कंध १० अध्याय ४२०० श्लोक, ४ समवायांग का एक श्रुतस्कंध, एक ही अध्याय १६६७ श्लोक ५ विवाह प्रज्ञप्ति (भगवती) शतक ४१ अंतर शतक मिलकर १३८ उद्देशे १९२५ अंतर उद्देशे मिलकर १०००० हैं और सब १५७५२ श्लोक हैं. ६ ज्ञाता धर्मकथांगके दो श्रुतस्कंध. प्रथम श्रुतस्कंध के ९ और दूसरे श्रुतस्कन्ध के २११ अध्ययन हैं सब मिलकर ५००० श्लोक. ७ उपासकदशांग एक श्रुतस्कंध

तथा

१० अध्ययन और सब मिलकर ८१२ श्लोक ८ अंतकृतदशगां १ वर्ग १० अध्ययन और ९०० श्लोक ९ अनुत्तरोपपातिक में तीन वर्ग ३३ अध्ययन २९२ श्लोक १ प्रश्नव्याकरन में इस का वर्णन जो समवायांगजी तथा नंदीजी सूत्र में किया है वह अंगुष्टादि प्रश्नों का अधिकार पांचवे आरे के जीवों के अयोग्य जानकर निकाल डाला और प्रथम आश्रव द्वार के ५ अध्ययन तथा दूसरे संवर द्वार के ५ अध्ययन, यों १० अध्ययन सब १२५० श्लोक और ११ विपाक. इस के दो श्रुत स्कंध १ दुःख विपाक, और २ सुखविपाक दोनों के दश २ अध्ययन, यों सब मीलकर २० अध्ययन १२१६ श्लोक इस प्रकार अग्यारह अंग के समासों को संक्षिप्त कर लेख किया है.

उपांग

जिस प्रकार शरीर के साथ हस्तादि उपांग होते हैं वैसे ही सूत्र के अंग के साथ निकट संबंध रखने वाले अर्थात् जिस में अग्यारह अंग के अधिकार से विशेष संबंध रखता हुआ अधिकार होने से वे उपांग कहे गये हैं. वे सब मीलकर बारह हैं जिन के नाम—१ उववाइ आचारांग सूत्र का उपांग यह सलंगसम्बन्ध एक ही सूत्र रूप है. इस में राजा रानी, समवसरण, तीर्थंकर, साधु, देशना

गति गमनादि और मोक्ष का अधिकार है. इस के ११६७ श्लोक २ राजप्रश्नीय सुयगडांग सूत्र का उपांग, इस में राजा और साधु के प्रश्नोत्तर, करनी के फल प्रदर्शक सूर्याभ देवता का अधिकार है. इस के २०१८ श्लोक हैं ३ जीवाभिगम-ठाणांग का, उपांग इस में जीवों का भिन्न २ स्वरूप दर्शने वाला प्रथम सविस्तर अनंतर संक्षेप में दश पतिवृत्ति है. इस के ४७०० श्लोक ४ पन्नवणा समवायांग का उपांग इस के ३६ पद में जीव की गति आगति अल्पाबहुत्व वगैरह अधिकार इस के ७७८७ श्लोक * ५ जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति-विवाह प्रज्ञप्ति का उपांग है. इस में सब द्वीपों के सार रूप जम्बूद्वीप के क्षेत्र पर्वत, नदी, आदि का, तीर्थंकर के जन्म व निर्वाण

---

* इसे कितनेक श्यामाचार्य कृत कहते हैं. परंतु यह असंभवित है. क्योंकि श्यामाचार्य तो महावीर स्वामी के निर्वाण से ३७६ वर्ष में २३ वी पाट पर हुए हैं तो क्या पहिले पन्नवणा सूत्र नहीं था? ऐसा नहीं है. भगवती सूत्र में पन्नवणा सूत्र की प्रति स्थान साक्षितये दी है इसलिये अंग के साथ ही उपांग जानना परंतु किसी भी आचार्य कृत उपांग नहीं है. आचार्य कृत ग्रन्थ में भगवान भाषित सूत्र की साक्षी दी जाय परंतु भगवद् भाषित सूत्र में आचार्य कृत ग्रन्थ की साक्षी कदापि नहीं होती है पन्नवणाजी प्रथम की तीन अथवा पांच गाथा जो है वे कदाचित आचार्य कृत हो सकती है. उक्त गाथाओं में श्यामाचार्य को नमस्कार किया है, इस अनुसार भी उक्त गाथा अन्य कृत होनाही चाहिये.

उत्सव, चक्रवर्ती की ऋद्धि और कुच्छ ज्योतिषियों का अधिकार है इस के पहिले तो ३०५०० पद थे परंतु सब की संधीकर सार रूप ४१४६ श्लोक लिखे-६-७ चंद्र प्रज्ञप्ति व सूर्य प्रज्ञप्ति यह दोनों ज्ञाताधर्मकथांग का उपांग हैं. इन में चंद्र सूर्य मंडल. विमान परिवार गति संवत्सरादि का अधिकार है. इस में चद्रप्रज्ञाति के पहिले ५५०००० पद थे. और सूर्य प्रज्ञप्ति के ३५०००० पद थे. किन्तु संधी कर दोनों के अलग २ २२०० श्लोक लिखे * ८ निरयावलिका-उपासक दशांग का उपांग. इस में आवलिका बंध नरकावासे में जाने वाले का कथन हैं. ९ कप्पिया-अंतकृत दशांग का उपांग. इस में देवलोकगामी का कथन है. १० पुप्फिया-अनुत्तरोपपातिक का उपांग है, इस में चंद्र सूर्य शुक्र आदि की करणी का कथन है. ११ पुप्फचूलिका- प्रश्नव्याकरण का उपांग है. इस में श्री ह्री धृति आदि देवियों की करनी का कथन हैं. और १२ वण्हिदशा विपाक का उपांग-इस में स्वर्ग गामिनी जीवों का कथन हैं. इन

* चंद्र प्रज्ञप्ति व सूर्य प्रज्ञप्ति में नाम मात्र भेद देखा जाता है. इन दोनों के मूल पाठ एकसा है. कितनेक इस मलयागिरि आचार्य कृत कहते हैं परंतु यह अनुचित है क्यों कि स्थानांग सूत्र में इन सूत्रों के नाम दिये गये हैं. इस लिये द्वादशांग जैसे यह भी शाश्वत है.

पांचो सूत्रों का एक ही ग्रंथ लिखागया. जिस के सब ११०९ श्लोक लिखे

और भी सूत्र लिखे जिनके नाम-१ व्यवहार—इस में साधु के पांच व्यवहारादि आचार का वर्णन है. इस के ६०० श्लोक २ वृहत्कल्प—इस में साधु के कल्प का कथन है-इस के४७३श्लोक ३ निशीथ-इस में दूषित साधु के प्रायश्चित्त का कथन है इस के ८१५ श्लोक ४ दशाश्रुतस्कंध इस में करणी के नियाने आदिका वर्णन है. इस के १८३० श्लोक है दोषोंकर छेदित हुए संयम को प्रायश्चित से शुद्ध करना इस से छेद शास्त्र कहा गया है. × ५ दशवैकालिक इस के १० अध्ययन में साधु के आचार का कथन है. इस के ७०० श्लोक है ÷ ६ उत्तराध्ययनजी इस के ३६

× कितनेक पंचकल्प व जीतकल्प मीलाकर ६ छेद शास्त्र मानते है. परतु इन दोनो के नाम नंदीजी सूत्र में नहीं है

÷ इसे कितनेक स्वयंभवाचार्य कृत कहते है परतु यह अयोग्य है इस का नाम नंदी सूत्र मे है और नंदीजी का नाम भगवतीजी में है इसलिये भगवती जैसे यह भी शाश्वत है

अध्ययन में विविध प्रकार की धर्म नीति का कथन है. इस के २१०० श्लोक + ७ नंदजी इस में पांच ज्ञान का कथन है. इस के ७०० श्लोक ८ अनुयोगद्वार इस में चार अनुयोग नय निक्षेप व प्रमाण का कथन है. इस के १८९९ श्लोक लिखे ये चार सूत्र धर्म के मूलरूप होने से इन्हे मूल कहते हैं और ९ आवश्यक- (प्रतिक्रमण) इस के मात्र १०० श्लोक ही लिखे.

उक्त ११ अंग १२ उपांग ४ छेद ४ मूल और १ आवश्यक एवं ३२ सूत्र तो इस समय तीर्थंकर प्रणित, गणधर रचित जैसे थे वैसी ही उन के सम्मास को संकुचित कर लिखे और वैसे ही आज कल उपलब्ध होते हैं. इन सिवाय और भी सूत्र देवर्द्धिगणी क्षमा श्रमणने लिखे थे. यथा—१ दशाकल्प, २ महानिशीथ, ३ ऋजु भाषित,

× इसे कितनेक श्री महावीर स्वामी प्रणित मानते हैं परंतु इस का नाम समवायांग में है इसलिये यह भी समवायांग जैसे शाश्वत है. मात्र महावीर स्वामीने निर्वाण पधारते समय विपाक सूत्र जैसे स्वाध्याय रूप कहाथा.

२ इसे कितनेक देवर्द्धिगणी कृत मानते हैं परंतु इस सूत्र का दाखला भगवतीमें होने से भगवती की तरह यह भी शाश्वत है. मात्र स्थविरावलि की ५० गाथा तथा रोहा आदि की कथा का देवर्द्धिगणीने प्रक्षेप किया होवे ऐसा संभवता है.

४ द्वीपसागर प्रज्ञप्ति, ५ खुड्डिया विमान प्रविभक्ति, ६ महल्लिया विमान प्रविभक्ति, ७ अंग चूलिया, ८ वंगचूलिया, ९ विवाह चूलिया, १० अरुणोववाइ, ११ वरुणोववाइ, १२ गरुडोववाइ, १३ धरणोववाइ, १४ वैश्रमणोववाइ, १५ वेलंधरोववाइ, १६ देविंदोववाइ, १७ उत्थान सूत्र, १८ समुत्थान सूत्र, १९ नागपरियावलिका, २० कप्पियाकप्पिय, २१ मूलकप्पसुयं, २२ महा कप्पसुयं, २३ महा पन्नवणा, २४ पमायापमायं, २५ देवेन्द्रस्तव, २६ तंदुलवेयालियास्तव, २७ चंद्र विजय, २८ पोरसी मंडल, २९ मंडल प्रवेश, ३० विज्जाचारण विच्छिन्नी, ३१ गणाविज्जा, ३२ झाणविभक्ति, ३३ मरण विभक्ति, ३४ आयविसोही, ३५ वियारसूत्र, ३६ संलेखणा सूत्र, ३७ विहार कल्प, ३८ चरण विसोही, ३९ आयुरपच्चक्खाण, ४० महा पच्चक्खाण, दृष्टिवाद एवं ४० सूत्र लिखे सब मिल ७२ सूत्र का लेख देवर्द्धिगणी क्षमा श्रमणने वल्लभिपुर पाटण की सभा में किया. इन ही सूत्र के नाम नंदीजी में दिये हैं. इतने सूत्र का मूल मात्र लेख उस समय हुवा था. उक्त सब शास्त्र तीर्थंकर प्रणित व गणधर रचित हैं न कि किसी आचार्यादि प्रणित है. सूत्रों से स्पष्ट मालुम होता है कि अंग व उपांग में स्थान २ पर भंते ! और गोयमा ! का पाठ है. यदि आचार्य प्रणित होवे तो

भगवान व गौतम के प्रश्नोत्तर कैसे होवें और शास्त्र में "एकादशांग अहिज्जित्ता, द्वाद-शांग अहिज्जइ" ऐसा जो कथन है इस से ऐसा जाना जाता है कि जैसे अंग में उपांग का समावेश होता है वैसे ही उक्त द्वादशांग में भी सब शास्त्रों का समावेश होता है, अर्थात् शाला में पढनेवाले किसी विद्यार्थी को पूछे कि तू क्या पढता है ? तो वह उत्तर देता है कि मैं पांचवी सातवी पुस्तक पढता हूं तो इन के साथ इतिहास, भूगोल आदि अन्य विषय पढे जाते हैं. ऐसे ही द्वादशांग में जहां २ अन्य सूत्रों के दाखले दिये हैं वे सूत्र भी कंठस्थ होने से अलग कहने की कोई जरूर नहीं है.

विज्ञों ! उक्त लिखित शास्त्रों के श्लोकों की संख्या से और प्रथम दिये हुए शास्त्रों के पदों की संख्या से स्पष्ट मालुम होता है कि प्राचिन काल में अरिहंत प्रणित ज्ञान कितना विस्तृत था. उस ज्ञान के महा प्रताप से ही उस समय जैन धर्म इस भारत वर्ष में अद्वितीय रूप धारण कर रहा था. सुरेन्द्र नरेन्द्रों का वंदनीय पूज्यनीय बन रहा था. इस की स्पर्धा कोई भी नहीं कर सकता था.

अब तो उक्त लिखित सब शास्त्र के श्लोक एकत्र करे तो भी पूर्वोक्त एक आचारांग सूत्र के प्रमाण में भी नहीं आसकते हैं. इस बात का स्मरण होते कलेजा थर्रा उठता है. इस में विशेष क्या कहे ! इस कलिकाल के जीवों के दौर्भाग्य की निशानी है. स्मरण शक्ति की मंदता से इतना ज्ञान का नाश होगया. और सागर में बिन्दु समान ज्ञान रहगया. परंतु ऐसे अफसोसमें भी हर्ष का विषय है कि कलिकाल के जीवों के कुच्छ भाग्योदय से परमोपकारी देवर्द्धिगणी क्षमाश्रमण ने महा परिश्रम उठाकर १३ वर्ष पर्यंत महा प्रयास कर इतनी भी महा प्रसादी भव्य गणोंके लिये थिर स्थायी करगये. ऐसे महा पुरुषों का सर्व जैन बडे आभारी हैं. ऐसे आचार्य के शास्त्र लेखन की खुबी तो यह रही हुइ है. कि इतना ज्ञान का संक्षेप करने पर भी सन्धि सम्मास वगैरह सब अखण्डित सलंग मीलते हुए दीखाते हैं.किसी स्थान भी त्रुटी का नाम निशान नहीं है. आद्योपांत सब सूत्र समास कर अविच्छिन्न प्रतिपूर्ण यथा तथ्य--मालूम होते हैं. यह अलोकिक बुद्धि का चमत्कार बडे २ विद्वानों को भी आश्चर्य चकित करने वाला है.

अहो भव्यों ! इस कथन से ऐसा विचार नहीं करना कि जब सूत्र ज्ञान को इतना संकुचित बनाकर लिखा तो ये सूत्र खास. तीर्थंकर प्रणित व गणधर रचित नहीं रहे किन्तु आधुनिक आचार्य कृत ही हैं. जैसे भरे हुए धान्य के कोठार में से वांदगी-नमुने के लिये निकाला हुवा मुठीभर धन्य भी उस कोठार में का ही है न कि मुठी में का. इस ही प्रकार जो परमाचार्य ने संकोचकर सूत्र लिखे हैं वे सूत्रों के वचन अरिहंत प्रणित और गणधर रचित ही हैं न कि आचार्य कृत. ऐसा निश्चयात्मक बनना. परंतु भ्रमितज्ञों के कथन से जिन वचनों के जिन गुणों का आच्छादन कर अनन्त संसार की वृद्धि करने वाले कदापि नहीं होना.

दिगम्बर अम्नाय के भगवती आराधना में कहा है कि,—

गाथा—सम्मादिट्ठी जीवों, उवइट्ठं पवयणं तु सद्दहइ ॥ सद्दहइ असंभवं, अजाणमाणो गुरु नियोगा ॥३२॥
सुत्तादत्तंसम्मं, दरिसिज्जंतं जदाण सद्दहादि॥सो चेव हवादि मिच्छा, दिट्ठी जीवा तओ पहुदि ॥३३॥
सुत्तं गणहरें कहियं, तहेव पत्तेय बुद्धि कहियं च । सुदकेवलिणा अभिण्ण दस पुव्वि भणिया ॥३४॥
णिंदित्थो संविग्गो, वत्थुव देसेणं संकाणिक्कोहुसो, चेव मंदधम्मो, अत्थुव देसम्मि भयणिज्जो ॥३५॥

अर्थ—सम्यक् दृष्टि जीवों को कदापि विशेष ज्ञान नहीं होवे तो भी जैसे अपने गुरु के पास से ज्ञान श्रवण किया होवे उस पर श्रद्धा रखे ॥ ३२ ॥ कोई भी समदृष्टी दंड ग्राही व अभिमानी बनकर गुरु के उपदेशे सूत्र पर श्रद्धा नहीं करे तो वह जीव उस ही समय मिथ्यादृष्टी हो जाता है ॥ ३३ ॥ श्री गणधर महाराज प्रत्येक बुद्ध, निर्ग्रंथ केवली, और अभिन्न दश पूर्व के धारक यह चार ही सूत्रकार होते हैं इन सिवाय अन्य के रचे हुए सूत्र नहीं माने जाते हैं. परंतु पूर्ण अप्रमाणिक ग्रन्थ माने जाते हैं॥ ३४॥ जो ग्रहितार्थ हो अर्थात् आत्मार्थ को प्रमाण नय कर गुरु परम्परा कर शब्द ब्रह्म का सेवन कर स्वानुभव प्रत्यक्ष कर सम्यक् प्रकार सत्यार्थ को ग्रहण किया होवे और वह संसार देह भोग से विरक्त हो वही सम्यक ज्ञानी शास्त्र उपदेश में शंका करने योग्य नहीं है. अर्थात् उक्त गुण उक्त ही सत्यवक्ता या उपदेशक होता है ॥ ३५ ॥

गाथा—पदमक्खरंपमेकंपि जो णरो णोदि सुत्ताणिदिट्ठं॥सेसं रोचंतोविहु,मिच्छादिट्ठी मु णयव्वो ॥३९॥

अर्थ—जो मनुष्य जीनेन्द्रप्रणित सूतका एक अक्षर मात्र हीका श्रद्धान नहीं करेतो उसे मिथ्यादृष्टि जानना.॥ ३९ ॥

उक्त प्रकार शाला का [illegible] भंडार में रखे, और, येही सूत्र वर्तमान में चारों संघ को बडे आधारभूत हो रहे हैं. इन के प्रभाव से अरिहंत प्रणित धर्म स्थिर रहा और उस का प्रवाह आगे प्रचलित बना रहा, परंतु कलिकाल की गति बडी विचित्र है, देवर्द्धिगणी क्षमा श्रमण स्वर्ग पधारे पीछे कितनेक वर्षों व्यतीत होगये बाद बारह वर्ष का महा भयंकर दुष्काल पडा. जिस में साधुओं को निर्दोष आहार पानी मीलना दुष्कर होगया. तब ७८४ साधु अपने संयम के रक्षणार्थ आत्मा को ख्रासकर संथारा कर के स्वर्गवासी बने. और कायर साधुओं श्रद्धा से व्याकुल बने. शुद्धाशुद्ध का विचार नहीं करते जैसा आहार मीला वैसे आहार से काम चलाने लगे. आगे दुष्काल ज्यों २ भयंकर रूप धारण करने लगा त्यों २ लोगों क्षुधा से तृषा से व्याकुल बने हुए कार्याकार्य का योग्यायोग्य का कुच्छ भी विचार नहीं करते हुए जिस उपाय से अन्नादि प्राप्त होवे उस ही प्रयास में लगे. श्रीमानों को भी अपना घर संभालना कठिन हो गया. दुःखी दीन पुरुषों के टोले मिलकर धाडा पाडने लगे. खान पान के पदार्थ देखने में आये के तुरत ही उसे बलात्कार से छीन लेते. ऐसे भयंकर दुष्प्राप्य समय में भी जैन साधुओं को तो आहार पानी मिल जाता था. साधुओं को

आहार मिलता देख अन्य क्षुधा पीडित लोगों उन से आहार छीन लेने लगे. तब वे साधुओं त्रासित बन उदरपूर्णार्थ जिस चिन्ह स जैन साधु पहिचाने जाय उस चिन्ह को बदलादिया. अर्थात् मुख वस्त्रिका को मुख से दूर करके हाथ में रखी. कितनेक समय पीछे किसी भी चिन्ह से जैन साधु को भिक्षुक पहिचानने लगे तब उन से अपना बचाव करने के लिये हाथ में बडा दंड धारण किया. गृहस्थ लोग भी भिक्षुकों के मारे द्वार बंध रखने लगे तब "धर्म लाभ" शब्द से पुकार कर लोगों से द्वार खोलाकर आहार लेने लगे. इस प्रकार उस बारह वर्ष के दुष्काल में जैन साधुओं के पूर्वापर आचार और लिंग में बहुत भिन्नता होगई. दुष्काल की निवर्ति हुए पीछे और प्रदेश से धान्यादिक की विपुलता होने से लोगों में शांति हुई परतु काल के दुःख से धर्म भ्रमित बने हुए लोगों को जो कोइ जिधर झुकाता उधर ही वे झुकने लगे. राजा महाराजाओं की भी यही दशा हो गइ. उस समय सच्चे जैन साधुओं का तो प्रायः अभाव ही होगया. * और नामधारी जो कोइ जैन साधु रहे थे वे जैन समाज को सभाल सके नहीं परतु अवसर देखकर वेद धर्मी, वैष्णव धर्मी, चारवाकादिक

* कहते है कि उसवक्त जो साधुओ देशोल्घन कर के प्रदेश मे चले गये थे वे सुकाल होते पीछे इधर आगये जिन से साधुओ का साफ विच्छेद नहीं हुआ

शक्ति, भक्ति, आदि उपाय से, मंत्रादि के प्रभाव से, धन स्त्री आदि की लालच से, गान तान आदि इन्द्रिय पोषण में ही धर्म की स्थापना कर अपने २ मतावलंबी बनाने लगे. उनके धर्मग्रन्थ प्रायः करके संस्कृत भाषा में होने से उनोंने शेठ श्रीमानों राजा महाराजों वगैरह को संस्कृत भाषा के काव्य छंद वगैरह के शोकीन बनाये. उनोंने संस्कृत भाषा की वृद्धि के लिये पाठशाला और धर्म पुस्तकों का बहुत प्रसार किया.

कहेते हैं कि एकदा श्री सीमंधर स्वामीने भरत क्षेत्र के किसी आचार्य के ज्ञान की शक्रेन्द्र सन्मुख प्रशंसा की. इन्द्रने आचार्य के पास जाकर पूछा कि मेरा आयुष्य कितना है ? तब आचार्यने श्रुत ज्ञान के प्रभाव से दो सागर का आयुष्य जान उसे शक्रेन्द्र के नाम से बोलाया. इन्द्र आश्चर्य चकित हो वंदन करके जाने लगा तब आचार्य बोले कि शिष्य बाहिर से अभी आवेंगे. आचार्यने तो मात्र शिष्यों को इन्द्र का दर्शन कराने का था इसीसे ऐसा कहा था और इन्द्र समजा कि आचार्य अभिमान में आकर शिष्यों को बताना चाहते हैं कि मेरे दर्शन के लिये इन्द्र जैसे आते हैं. ऐसे ज्ञानी को भी इतना अभिमान है तो आगे ज्ञान की न्यूनता होने से अभिमान विशेष होगा. न मालुम वे लोग देवता से कैसा काम करावेंगे. इत्यादि विचार कर आचार्य के स्थानक के द्वार

का सुख मिलाकर इन्द्र स्वर्ग में गया और सबै देवताओं को आज्ञा दी कि भरत क्षेत्र का कोइ भी मनुष्य आराधन करे तो किसी भी देव को मूल रूप मे जाना नहीं. इससे देवों का आवागमन भी यहां बंध होगया.

उक्त कारनों से जैन धर्म का और जैन आगमों के मागधि भाषा का लोप होता देख और अन्य मतावलंबियों का और संस्कृत भाषा का प्रसार होता देख उस समय रहे हुए जैनाचार्य बडे रंज में पडगये. धर्मोन्नति के उपाय की अनुप्रेक्षा करने लगे. कितनेक प्रभावशाली जैनाचार्यने मंत्रादि प्रयोग से चमत्कार बताकर राजा महाराजाओं को वश में किये और जैन धर्म का प्रभाव लोगों पर जमाया. बडे २ विद्वान ब्राह्मणों को प्रतिबोध कर जैन मतावलंवी बनाये. उन में से कितनेक विद्वान ब्राह्मणोंने दीक्षा अंगीकार की. वे प्रभावशाली होने से उन को आचार्य पद दिया. वे आचार्य संसार में संस्कृत के अच्छे अभ्यासी होने से जैन शास्त्र ज्ञान की अलौकिक खुबियों संस्कृतके ज्ञाता पुरुषों के हृदय में ठसाकर जैनागम के प्रेमालु बनाये. श्री जैन धर्म प्रचारार्थ श्री महावीर स्वामीजीके निर्वाण के १२४२ वर्ष में शैलांगाचार्य ने आचारांग और सूयगडांग की टीका बनाइ

१५९० वर्ष पीछे अभयदेव सूरीने स्थानांग से विपाक पर्यंत९ अंग की टीका बनाइ इस के बाद मलयगिरि आचार्यने राजप्रश्नीय. जीवाभिगम, पन्नवणा, चंद्रप्रज्ञप्ति, सूर्यप्रज्ञप्ति व्यवहार और [illegible] सूत्र की टीका बनाइ, चंद्रसूरीजीने निरयावली का पंचक की टीका बनाइ.ऐसे ही अभयदेव सूरी के शिष्य हेमचंद्राचार्यने अनुद्धार की टीका बनाइ. क्षेमकीर्तिजीने बृहत्कल्प की टीका की. शांतिसूरीजीने श्री उत्तराध्ययनजी की वृत्ति टीका भाष्य, चूर्णिका निर्युक्ति वगैरह सहित सविस्तर बनाया,इन टीका कारोंने अनेक स्थान मूल सूत्र की अपेक्षा रहित व वर्तमान मे स्वतःकी प्रवृति को पुष्टकरने जैसे मनःकल्पित अर्थ भरदियें वैसे ही अज्ञ पुरुषों का मन जैन धर्म की तरफ अकर्षित करने के लिये अन्य मतावलम्बियों के जैसे जैन के देवालय वगैरह भी स्थापन कर आरती पूजा प्रभावना, स्नान, गान तान आदि से बहुत लोगों को जैन धर्म के रागी बनाये × और अपने मतलब के भी सुख साधनी बने. तब जैनधर्म चारों जातियों में से वैश्य जाति में विशेष फैला.

× भावनगर से प्रसिद्ध होता आत्मानंद प्रकाश मासिक पुस्तक १५ वे वर्ष के १० वे अंक के २३४ वे पृष्टपर ऐसा प्रसिद्ध हुआ है कि-धर्म घोषसूरीए पोताना प्राकृत कल्प ग्रन्थमां संप्रति विक्रम अने शालिवाहन राजाओं ने शत्रुंजय गिरिनां उद्धारक बनाव्या छे. परंतु तेनी वधारे सत्यतामाटे इज

दुष्काल

छेदमूल

कितनेक वर्षो बाद पुनः एक सात वर्ष का और एक पांच वर्ष का यों लगोलग बारह वर्ष का भयंकर दुष्काल पडा. इस में साधुओं और धर्म की बडी हानि हुई. इस अरसे में

सुधी कोइ विश्वासनीय प्रमाण मली शक्यु नथी, " बाहड मंत्री नो उद्धार " वर्तमानमां जे मुख्य मंदिर छे ते विश्वस्थ परथी जणाय छे के गुर्जर महात्म्य बाहड (बागभट्ट) मंत्रीथी उद्धरेल छे. विक्रमनी तेरमी सदीना प्रारंभमां जे वखते महाराजा कुमारपालराज्य करता हता ते वखते तेना उक्त मंत्रीने पोताना पिता उदयन मंत्रीनी इच्छानुसार ते मंदिर बनाव्यु छे. प्रबंध चिंतामणीना कर्ता मेरुतुंगसूरी आ उद्धारना संबंधमा जणावे छे के काठियावाडना कोइ सुंवर नामक मंडलिक शत्रुने जीतवा, माटे महाराजा कुमारपाल राजाए उदायन मंत्रीने मोटी सेना आपीने मोकल्यो. ढवाण शहर नी पासे ज वखते मंत्री पहोंच्यो ते वखते शत्रुंजय गिरि नजदिक रह्यो जाणी सैन्यने आगल काठियावाडमां रवाना कर्यु; पोते गिरिराजनी यात्रा करवा शत्रुंजय रवाना थयो. जलदी थी शत्रुंजय उपर पहोंची त्यां भगवत प्रतिमा नु दर्शन वंदन पूजन कर्यु. ते वखते मंदिर पत्थरनु नहीं परंतु लाकडा नुं हतु. मंदिरनी स्थिति बहुज जीर्ण हती अने ठेकाणे २ फाटफूट पडी गइ हती. मंत्री पूजन करी प्रभु प्रार्थना करवा माटे रंगमंडपमां बेठा अने एकाग्रताथीस्तवन करवा लाग्या, ते वखते मंदिरनी कोइ फाटमांथी एक उंदर नीकल्यो ते दीवानी वत्ती मोमा लइ पाछो बपाक चाल्यो गयो. आप्रसंग देखीने मंत्रीए दीलगीरी साथे विचार कर्यो

मुसल्मीन बादशाहओ क राज्य का प्रप्राक्त था. वे हिन्दु धर्म के द्वेषी होने से उनोंने बहुत देवस्थान लूंटे और शास्त्रों के भंडार जला दिये. जिस से जैन शास्त्रों की बडी हानि हुई. तथा शंकराचार्य ने भी जैन शास्त्रों का बहुत नाश किया. इस प्रकार पुस्तकों पर लेख हुए पीछे भी जैनागम पर बडी भारी विपत्तियों आ पडी. इस में बहुत चमत्कारिक व खगोल भूगोल के गूढ ज्ञान के अनेक शास्त्रों का तथा आचार्यों कृत ग्रन्थों का नाश होगया. इस आपत्ति से बचने के लिये किसी गुप्त भंडारों में शास्त्रों को रखे परंतु कर्म योग वहांपर भी ऋणी (दीमक) आदि जन्तुओंने बहुत से शास्त्रों को

के मंदिर काष्ट मय अने जीर्ण होवाथी आवीरीते दीवानी बत्ती थी कोई वखते अग्नि लागी जाय तो तीर्थनी महाअसातना थवानो भय छे.म्हारी आटली संपति तथा प्रभुता शुं कामनी छे? एम दीलगीर थइते मंत्रीए प्रतिज्ञा करी के आ युद्ध पूर्ण थया बाद आमंदिरनो जीर्णोद्धार करीश. काष्टस्थाने पत्थरना मजबूत मंदिर बनावीश वगेरा.॥ नन्तर यह मंत्री तो संग्राम में काम आगया और पिता की आज्ञानुसार वाहड और अंबड दोनों पुत्रोनें विक्रम संवत् १२११ में १६०००००० रूपयेका खर्च कर मंदिर बना प्रतिष्ठा कराइ. इस लेखपर से शत्रुंजय की शाश्वतता का कैसा अच्छा भान होजाता है!

छिन्न भिन्न कर डाले ! अहो भाविष्य.

कल्प सूत्र के कथनानुसार श्री महावीर स्वामी की नाम राशी पर बैठा हुवा २००० वर्ष की स्थिति वाला भस्मग्रह समाप्त हुवा अर्थात् महावीर निर्वाण हुए पीछे ४७० वर्ष पीछे विक्रम संवत चला, और विक्रम संवत १५३० में भस्मग्रह महावीर स्वामी की नाम राशी से दूर हुवा. तब पुनः श्री अरिहंत प्रणित जैन धर्म की शुद्ध प्रवृत्ति की वृद्धि होने का सुअवसर प्राप्त हुवा. गुजरात देश के मुख्य शहर अहमदाबाद के जैन उपाश्रय में कितनेक जैन यतियों एकत्त हो प्राचिन अर्वाचिन जैन धर्म सबंधी वार्तालाप करते विचार करने लगे कि—अपने धर्म को स्थिर रखनेवाले अरिहंत प्रणित शास्त्र हैं. वे बहुत काल से भंडारों में स्थापन कर रखे हैं. अपन तो पेटार्थी बन अनेक कल्पित नविन बनाये हुए ग्रन्थों व रासों आदि से काम चलाते हैं परंतू धर्म का पक्का पाया अरिहंत प्रणित शास्त्र से ही रहेगा ! इन की संभाल किये बहुत वर्ष बीत गये. इन की भंडारों में क्या दशा हुई है सो अब प्रतिलेखना करना परमावश्यकीय है. इत्यादि विचार कर शास्त्र भंडार, खुले किये. शास्त्र निकालकर देखते हैं तो उन्हे दीमक लगने से बहुत से शास्त्र तो साफ नष्ट हो गये. कितनेक कुच्छ सडे,

और कुच्छ साबूत रहे वे भी जीर्ण पर्याय चूर २ होने जैसे हो गये. कितनेक अखण्ड भी निकले. इस प्रकार शास्त्रों को देख कर वे यतिवर्य बडे अफसोस में हो गये और सब की एक ही सम्मति हुई कि रहे हुए शास्त्रों का किसी प्रकार जीर्णोद्धार करना चाहिये. यह कार्य करने को न अपने में कौन योग्य है? इस प्रकार के प्रश्न का विचार करते उन में कोई भी शास्त्रोद्धार का कार्य करने की योग्यतावाला व शक्तिवाला देखने में आया नहीं तब बहुत चिताग्रस्त हो तर्क वितर्क करने लगे.

उस समय वहां अहमदाबाद शहर में राजमान्य श्रीमान, धार्मात्मा पुण्यप्रभाविक प्रभावशाली दृढधर्मी धर्मधुरंधर कार्यदक्ष और अर्धमागधी भाषा के ज्ञाता तथा शीघ्रता से सुंदर व शुद्ध लिपी लिखने वाले लौंकाजी नामक श्रावक रहते थे. वे साधु दर्शन के प्रेमी होने से प्रातःकाल में यतियों के दर्शनार्थ उस उपाश्रय में आये. लौंकाजी को देख यतियों बहुत ही खुशी होकर मान पूर्वक वचनों से कहने लगे कि-अहो शाहजी ! आप के योग्य एक महा कार्य है. यदि आप उस कार्य को करेंगे तो जैन धर्म को चिर स्थायी बनाने के लाभ के सद्भागी बनोगे. जैन समाज पर आप का

वडा भारी उपकार होगा. इस में आप को परिश्रम तो जरूर होगा परंतु आप सिवा अन्य कोई भी इस कार्य करने की योग्यता रखने वाला नहीं है. इस लिये आप को ही चेताया है. उक्त प्रकार से यतियों का वचन श्रवण करके लोंकाजी आश्चर्यचकित वने और नम्रता पूर्वक कहने लगे कि-कहिये महाराज ! मेरे लायक ऐसा कौनसा काम है ? उसे मैं भी यथाशक्ति करना चहता हू. तब उन यतियोंने जीर्ण पर्याय प्राप्त हुए शास्त्रो लोंकाजी को वताये और कहने लगे कि इन की पुनरावृति लिखकर जीर्णोद्धार करने की परम आवश्यक्ता है; क्यों कि इस पंचम आरेमें अरिहंत प्रणित धर्म को चिरस्थायी रखने का यह एक ही उपाय है. इस समय तीर्थंकर, केवल ज्ञानी, श्रुतकेवली पूर्वधर प्रमुख धर्माधिकारियों का तो साफ विच्छेद हुवा है. अब तो जो कुछ ज्ञान दान दाता, धर्मात्माको परमाश्रय दाता, महा उपकार कर्ता और पूर्ण विश्वास नीय यह जिनेश्वर जैसे जिनेश्वर के वचनों ही रहे हैं. आगे जैन धर्म इन शास्त्रों के आधार से ही चलेगा. इसलिये यह महा उपकारी काम आप को जरूर करना चाहिये.

उक्त प्रकार का आग्रह पूर्वक मुनियों का वचन लोंकाजी श्रवण कर व जीर्ण

शास्त्रों का अवलोकन कर शास्त्रोद्धार कार्य अपने व अन्य अनेकों के आत्मा को परोपकार का कर्ता जान उस कार्य करने की स्वात्मशक्ति का भान कर महालाभ वाला कार्य को अपने हाथ से करने के लिये उत्साही बने. और कहने लगे की-इन सब शास्त्र में से प्रथम कोइ छोटा शास्त्र दीजीये. उस की पुनारावृति करके आपको दीखलाबूं. आप को जिस से यह मालुम होवे कि यह कार्य यथा योग्य हुवा है तो आगे अन्य शास्त्र लिखने का प्रारभ करूंगा. इस प्रकार लोंकाजी के वचन सुनकर उन यतिवर्यने बहुत प्रसन्नता पूर्वक छोटा सूत्र दशवैकालिक निकाल कर लोंकाजीको दिया. लोंकाजी उसे अपने घर ले गये. उसे दत्तचित्त से आद्यन्त पठन कर बडे ही आनंदाश्चर्य में गरकाब बने. जिनेन्द्र पद का अपूर्व पदार्थ उन को मालुम हुआ. वर्तमान साधुओं के आचार और शास्त्र कथित आचार में महदाकाशी अंतर दिखा. परंतु अपनी ज्ञानान्तराय के क्षयार्थ मौन रहे: और अपन को सदैव ज्ञान लाभ मीलाकरे इस बुद्धि से उस की दो प्रत लीखने लगे. पूर्ण प्रत लिखे बाद दोनों प्रतों यतियों को ले जाकर बताइ. यतिजी के पूछने पर कहा कि एक आप के लिये और एक मेरे लिये लिखी है. यह सुन वे सरल स्वभावी और ज्ञान प्रचार के बडे प्रेमी यतिजी खुश होकर बोले अच्छा आप भी पढना. और हमारे शिष्यों

को भी पेछाना. यों कह और भी शास्त्र निकाल कर लोकाजी को दिये. इस प्रकार यतियों की आज्ञा से प्रत्येक शास्त्र की दो दो प्रतियों लिखने लगे: एक २ उन को देते गये और एक २ आपकी पास रखी. इस तरह लोंकाजी के पास जैन शास्त्र भंडार हो गया.

लोंकाजी शास्त्रों का जीर्णोद्धार कर रहे हैं ऐसा जानकर बहुत भव्य ज्ञानार्थी लोकाजी के पास आने लगे, शास्त्रार्थ पुछने लगे, लोकांजी भी उन को जिनेन्द्र प्रणित शास्त्रों का श्रवण कराकर संतोपित करने लगे. इस प्रकार जिन प्रणित गणधर रचित शास्त्रों की अपूर्व वाणी श्रवण करने से भव्य जनों का चित आकर्षित होने लगा. प्रति दिन श्रोताओं की संख्या वृद्धि पाने लगी, परिषदा में अपूर्व आनंद प्राप्त होने लगा, सच्चे अखण्डित साधु समाचारी का लोगों को भान होने लगा. उक्त प्रकार लोंकाजी की माहिमा लोगों के मुख से श्रवण कर यतियों को द्वेप उत्पन्न हुवा और लोकाजी को शास्त्र देने बंध कर दिये. जितने शास्त्र लोंकाजी के हाथ गये उतने का ही उद्धार हुवा और बाकी के शेष शास्त्र भंडार में रह गये कि जो दीमक वगैरह जंतुओंके भोग बनगये.

* देवार्द्धिगणीने ७२ सूत्रों का लेख किया था. जिनमें से ३२ सूत्र तो अखण्ड जैसे थे वैसे ही रहे, जिन के नाम. ११ अंग, १२ उपांग, ४ छेद. ४ मूल और १ आवश्यक. इन के नाम आगे दिये गये हैं. बाकी के सूत्रों का विच्छेद होगया ऐसा पक्षिक सूत्र में लिखा है. विच्छेदहुए सूत्रों के नाम इस प्रकार हैं—१ कप्पियाक प्पियं, २ मूल कप्पसुयं, ३ महाकप्पसुय, ४ महा पन्नवणा, ५ पमायापमाय, ६ पोरसी मंडल, ७ मंडलपवेसो, ८ विज्जाचारण विणिच्छिओ, ९ झाणविभत्ति, १० मरणविभत्ति, ११ आयविसोही, १२ संलेहणासुय, १३ वीयरायसुयं, १४ विहारकप्पो, १५ चरण-विहा. (यह १५ उत्कालिक) १६ खुड्डिया विमाण पविभत्ति, १७ महल्लिया विमाण पविभत्ति, १८ अंग चूलिया, १९ वंग चूलिया, २० विवाह चूलिया, २१ अरुणोववाइ, २२ वरुणोववाइ, २३ गरुलोववाइ, २४ धरणोववाइ, २५ वेसमणोववाइ, २६ वेलंधरो-ववाइ, २७ देविंदोववाइ, २८ उत्थानसुयं, २९ समुत्थानसुयं, ३० नाग परियावन्लिया, ३१ कप्पियाकप्पियाणं, ३२ आसिविसभावणाण, ३३ दिट्ठीविसभावणा, ३४ चारण भावणा, ३५ महासुमिण भावणा, ३६ तेयग्गिनिसग्गाणं, (यह २१ कालिक) यों ३६ शास्त्र का विच्छेद हुवा. इस का लेख पक्षिक सूत्र में है. उक्त नाम वाले कितनेक

सूत्र इस समय उपलब्ध होते हैं; परंतु वे सब आचार्य के बनाये हुए हैं. वैसा ही उन के लेख पर से मालुम होता है, जैसे कि चंद्राविजय पइन्ना में लिखा है कि—

गाथा–उज्जेणीए नयरीए आवंती नामेणं विस्सुओ आसी। पाउवगपवन्नो मुसाण मझिम पगंतो ॥ १ ॥

इस गाथा में कहे हुए आवंती सुकुमाल पांचवे आरे में हुए हैं. ऐसे ही और भी लेख हैं. महानिशीथ सूत्र हरिभद्रसूरी आदि आठ आचार्य का बना हुवा है. और उस के कथन पर से ऐसा ही भाष्य होता है. क्यों कि एक स्थान तो लिखा है कि दो मुखव-स्त्रिका [मुहपति] रखनेवाला साधु अधिक उपकरण रखने के दोष से मरकर जलमान साधु हो वज्रमय वट में पिसाया गया. और दूसरे स्थान लिखा गया है कि साधु से ब्रह्मचर्य नहीं पले तो लोहार की धमण धमकर द्रव्य प्राप्त कर इच्छा पूर्ण करे. वैसे ही एक स्थान तो लिखा है कि कमलप्रभाचार्यने भ्रष्टाचारियों की प्रभा नहीं करते शुद्धोपदेश दे करके तीर्थंकर गोत्र के दलिये उपार्जन किये. और फिर लिंगडालिंगडी(भ्रष्टा-चारियो) के मोह में फसकर मंदिर बनाने का आदि सारंभी उपदेश देकर तीर्थंकर गोत्र के

दलिये बिखेर कर अनंत संसार का वृद्धि की, + और भी एक स्थान लिखा है कि साधु किंचिन्मात्र पट्काय के जीवों की हिंसा करे नहीं और दूसरे स्थान ऐसा भी उपदेश है कि यदि मंदिर पर पीपली का वृक्ष ऊगा होवे तो रजोहरण से पुंजकर उसे यत्ना पूर्वक काट डाले. इस प्रकार परस्पर विरुद्धता वाले तथा अयोग्य कर्तव्य कथन के शास्त्र अरिहंत प्रणित तो क्या परंतु किसी भी शुद्धाचारी साधु प्रणित भी नहीं हो सकते हैं. यह कथन तो विद्वद्वरों को निष्पक्षपात से विचारना चाहिये.

अनुयोग द्वार के टीकाकार श्री हेमचन्द्राचार्य कहते हैं कि ३२ दोष रहित और ८ गुण सहित जो शास्त्र होवे उने ही शास्त्र कहना—

गाथ'—अप्पगंथ महत्थं, बत्तीसा दोसविरहिअं जं च। लक्खणजुत्तं सुत्तं, अट्ठहिगुणेहि उववेयं ॥ १ ॥
अलिय मुवंघायजगुणयं.निरत्थय अनवत्थत्थदुहिलं। निस्सार महिअ मूलं पुणसत्त वाहित मजुत्तं ॥२॥

+ यह अध्ययन अलग ही लिखा हुवा कमलप्रभा नामक पुस्तक जैन बुकसेलरों के पास से मील सकता है,

कम्मभिन्न वयणभिन्न विभत्तिभिन्नं च लिंगभिन्नंचा अणभिहिअ मपद मेवय, सहावहिणंच ववहियंच कालं ॥
जतिच्छवि दोसो समय विरुद्धं वयणमित्तंच । अत्थावत्तीय दोसा नेव्य समास दोसोय ॥ ४ ॥
उवमा मवण दोसो निद्देस पयत्थ संधिदोसोय । एए सुत्तदोसा बत्तीसं हुंति णायव्वा ॥ ५ ॥
निद्दोसं सारवंतं च हेउजुत्त मलंकियं । उवणीय सोवयारंच, मियं महुर मेवय ॥ ६ ॥

अस्यार्थ—जो ग्रन्थ सूत्र छोटा हो परंतु उस का अर्थ बडा भारीगहन हो,जो ३२ दोष रहित हो तथा ८ गुण सहित हो उसे सूत्र कहना. ॥ १ ॥ उन बत्तीस दोषों के नाम कहते हैं.—१ आलिक—जिस में होते भाव की नास्ति और अनहोते भाव की आस्ति हो. २ उपघात—जिस मे हिंसा उत्पादक बोध हो. ३ निरर्थक—असंबंध वचन हो, ४ अनवस्था. अवांछितार्थ हो, ५ स्थानदोष—विविक्षितार्थ का उपघात हो, ६ दुहिल दोष—निरर्थक व पापव्यवहार का उपदेशक हो, ७ निस्सार—असार अर्थ हो, ८ अधिक दोष-अक्षरपद मात्र अधिक हो, ९अन-अक्षर पद हीन तथा हेतु दृष्टांत से ही न हो, १० पुनरुक्त—दोष के दो भेद-शब्द से तथा अर्थ से एक ही कथन वारंवार कहा हो ११ व्याघात पूर्व के वचन को उत्तर के वचन घातक हो,१२ अयुक्त—वचन युक्ति से अनमीलाता हो, १३ क्रमभिन्न-अनुक्रमता रहितहो, १४ वचन भिन्न-वचन की विपरीतताहो, १५ विभक्ति

भिन्न-विभक्ति की विपरीतताहो, १६ लिंगभिन्न-लिंग की भिन्नता हो, १७ अविहित-वोध सिद्ध नहीं किया हो, १८ अपद-पदस्थान अन्य पद हो, १९ स्वभाव हीन-वस्तु स्वभाव से अन्यथा हो, १० व्यवाहित-प्रारंभ में सम्मासका सविस्तार वर्णन कर पुनःवर्णन कियाहो २१ कालदोप-त्रिकाल के प्रयोग में भूल हो, २२ मिित्दोप अर्थ कथन उल्लंघे तथा नहीं अटकने के स्थान अटके, २३ छवीदोप-अलंकार रहित, २४ समयाविरुद्ध-सिद्धांत विरुद्ध, २५ बचन मात्रदोप-मात्र वाक्पटुता हो, २६ अर्थपाति दोप-विना हेतु वचन हो, २७ असमास-एक समास के स्थान अन्य समास हो, २८ उपमादोप-न्युनाधिक उपमा हो, २९ रूपक दोष जैसे पर्वत के कथन में समुद्र का कथन ३० निर्दोष दोप-कहे हुए शब्दों की ऐक्यता न हो, ३१ पदार्थ दोप-वस्तु पर्याय को अन्य कल्पे हो, और ३२ सान्धि दोप-सदोप सन्धी की हो, अथवा समास की सन्धी न की हो. इन ३२ दोपों में से एक भी दोप हो तो उसे शास्त्र नहीं कह सकते हैं ॥ अब ८ गुण कहते हैं—१ निर्दोष कुदरती अर्थ वाले हो परंतु कृत्रिम अर्थ वाले न हो, २ सार्थ-सारभूत अर्थ वाले हो कि जिन के पठन से अंतःकरण में चमत्कारिक उर्म्मियों उत्पन्न होवे, ३ हेउजुत्तं-अन्वयव्यतिरेक हेतु युक्त सूत्र की भाषा हो, ४ मलंकिया-वचन और कथन के

अलंकार युक्त होवे, ५ उपनित-उपनय दृष्टांत युक्त हो कि जिस में आध्यात्मिक अर्थ झलकता हो, और जिस से अनंत ज्ञानी के आगमिक वचनों की खूबी का दर्शन पाठक कर सके, ६ सोपचार-सूत्र की भाषा ग्राम्य भाषा जैसी तुच्छ न हो, परंतु ऊंच व व्याकरण के नियम से बद्ध हो और शिष्ट पुरुषों को माननीय हो, ७ मित-गद्यमय तथा पद्यमय शब्दों के क्रिया कर्म कर्ता के नियम विरुद्ध न हो वैसे ही अनुष्टुयादि छंदो के नियम प्रधान भाषानुबद्ध हो और ८ मधुरसूत्र—पाठक को और श्रवण से श्रोता के हृदय में ज्ञान लहरका मधुराश्रव श्रवित होता हो परंतु अप्रीति उत्पादक दुःखप्रद व द्वेषवर्धक शब्द न हो.

उक्त बत्तीस दोष रहित और आठ गुण सहित जो होतें हैं वेही शास्त्र कहे जाते हैं. वेही शास्त्र सर्व माननीय होते हैं ऐसे शास्त्र अरिहंत प्रणित व गणधर रचित होते हैं अन्य नहीं होते हैं ऐसा प्रत्यक्ष प्रमाण व आगम प्रमाणद्वारा ३२ शास्त्रों को ही शास्त्र देख सकते हैं, इन सिवाय अन्य शास्त्र कि जिन के नाम प्राचिन भी होवे तथापि उक्त ३२ दोषों में के अनेक दोषोमय होने से अरिहंत प्रणित व गणधर रचित किसी

प्रकार नहीं होसकते हैं और इसीसे वे मानने योग्य व पूजने योग्य नहीं हो सकते हैं.

उक्त प्रकार लौंकाजी ३२ शास्त्रों का भंडार अपने आधीन कर अरिहंत प्रणित सत्य शास्त्र का स्वरूप दर्शाने के लिये स्वेच्छासे आये हुए लोंगो को सत्य धर्म का उपदेश करने लगे और शंका शील पुरुषों की शंका का उद्धार भी शास्त्र से करने लगे. लौंकाजी का सद्बोध लोगों को वडाही वैराग्य उत्पादक हुवा. एक वक्त यतियों के उपदेश से यात्राको जाते हुवे चार संघ अहमदावाद में एकत्र हुवे. वे लौंकाजी का सद्बोध सुन सच्चे वीतराग प्रणित धर्म के श्रद्धालु बने, उन में से १५२ पुरुषों को वैराग्य प्राप्त हुवा. वे बोले कि जो आप शास्त्रानुसार दीक्षा धारन करो तो हम भी आप के शिष्य होने तैयार हैं. यह सुन लौंकाजी परमानन्दी बने और प्रथम मुख पति मुख पर बान्ध पंच परमेष्टी को वंदना कर स्वयं दीक्षा धारन की, फिर १५२ पुरुषों को दीक्षादी, लौंकाजीको अपने परमोपकारी जान गच्छका नाम, लोंका गच्छ स्थापन किया. उन साधुओंके साथ आर्यमडल में बहुत वर्ष विचर कर सत्य धर्म का प्रसार किया. फिर आलोचना निन्दा युक्त १५ दिन के संथारे आत्मोद्धार किया. तत्पश्चात् भाणजी नामक सद्गृहस्थने ४५ महा पुरुषों

साथ मुखपर मुखवस्त्रिका बांधकर दीक्षाधारन की लोंकागच्छ शास्त्रानुसार शुद्धाचार पालन करते कितनेक काल बाद शिथिलाचारीयों की संगत से वेभी शिथिलाचारी बनगये!*

लोंकाजी पर्यन्त इस भारत वर्ष में मागधी भाषा का प्रचार बहुत अच्छी तरह चलता था. उस वक्त के अन्य मतावलम्बियों के भी ग्रन्थ नाटक, काव्य वगैरह बनाये हुए अधुना भी उपलब्ध होते हैं. मागधी भाषा का विशेष प्रचार होने से ही पाणनीयने और हेमचन्द्राचार्य ने मागधी भाषा के व्याकरण बनाये हैं. परंतु जब मागधी भाषा के बोलने वाले देवताओंका आवागमन बंध होगया और दुष्काल से पीडित लोगों जैन के सच्चे साधु के अभाव से अन्यमत का स्वीकार करने लगे. जैसे सूर्य के अभाव में ताराओं तथा खद्योत प्रकाश करते हैं, तैसे ही अन्य मतावलम्बियों की दांभिक क्रिया से इन्द्रिय पोषक धर्म के बडे२राजा महाराजा शेठ साहुकार उपासक बने.इस से उन के शास्त्र की संस्कृत भाषा के भी वे लोगों शौकिन बने. यहां से प्राकृत भाषा से संस्कृत भाषा

---

* बहुत सी मतों में लोंकाजी ने दीक्षा नहीं है ऐसा भी कथन है. परंतु संवत् १८८४ की हस्त लिखित प्रतजो की लिम्बडी (काठीया) वाड के प्राचीन भंडार में है तदनुसार वरोक्त लेख किया है. और भी योग्य है क्यों कि साधु ही आचार्य होते है और साधु के नाम से ही गच्छ चलता है नाम ग्रहस्थ के नाम से !!

का प्रचार विशेप होने लगा. और इस भारतवर्ष में प्राकृत भापा प्रायःलुप्तही होगई.

उक्त प्रकार लौंकाजीने धर्म का प्रसार किये याद १५२तथा४५ पुरुषोंने जो दीक्षा धारन की थी वे सव वैश्य थे. उन के प्रसंग से जैन के साधु वैश्य ही विशेप होने लगे. जिस से वैश्य वर्ण में ही जैन धर्म का प्रसार अधिक हुआ. वे लोग अर्ध मागधी भापा में नहीं समझने लगे और वुद्धि की मंदता से पढाते २ भी विस्मरण होने लगा. शास्त्रार्थ के अनजान होने से शास्त्र प्रेम तो बहुत कमी होने लगा और प्रचलित भापा में वनाये हुए कथा, रास, ढाल व स्तवनादि का प्रेम अधिक होने लगा, तव जैनाचार्योंने जैन शास्त्र का प्रचलित भापा में अर्थ लिखना उचित समझा. उस समय *विक्रम संवत १५५० में तपागच्छीय श्री पार्श्वचंद्र सूरीने गुजराती मारवाडी मिश्रित भापा में कितनेक शास्त्रों का टव्वार्थ लिखा. उन के याद संवत् १५६० में जीव विजयजी यतिवर्यने भी कितनेक शास्त्र के टव्वे लिखे. यह टव्वार्थ के शास्त्र भव्य जीवों को वडे आधारभूत वने.

उक्त प्रकार लोंकागच्छ के यति शिथिलाचारी बने. उन में से शिवजी ऋषिजी के शिष्य श्री धर्मसींहजीने संवत १६८५में अपने गुरु से अलग हो शुद्धाचार की प्रवृत्ति की. इनोंने 'दरियाखा' पीर को प्रतिबोधा, जिस से इन की दरियापुरी संप्रदाय कहाती है. इन के श्रावक श्राविका आठ कोटी से सामायिकादि के प्रत्याख्यान करते हैं. इन के साधु साध्वी गुजरात काठियावाड में विशेष कर विचरते हैं. श्री धर्मसिंहजी मुनिने २८ सूत्र का टब्बार्थ लिखा है. इन का टब्बा विशेष सरल और संक्षेप में विशेष खुलासा वाला होने से साधुमार्गीय जैन को विशेष माननीय है.

संवत १७०५ में सुरत के वीरजी वोराकी पुत्री फूलाबाइ के पुत्र लवजी लोंका गच्छ के यति के पास शास्त्राभ्यास कर वैरागी बने. और शास्त्रानुसार आचार पालने के लिये नाना (माता के पिता)की आज्ञा मांगी.उनोंने कहा कि यदि तू लोंकागच्छ में दीक्षा अंगीकार करे तो बडे उत्साह से मैं दीक्षा दिलावूं. लवजीने अवसर देख ज्ञान दाता गुरु वरजांगजीके पास दीक्षा धारन की.कालान्तर में वहजांगजी से कहने लगे कि-अहो पूज्य !

* प्रथम का टबा परंपरा का कहलाता है. यह किस समय में लिखा जिस की सात्र संवत का पता नहीं है

शास्त्र में तो साधु का इस प्रकार आचार है. और अपनी प्रवृत्ति तो इस से बहुत विरुद्ध है. अहो स्वमिन ! शुद्धाचार पालने से ही आत्म कल्याण हो सकता है और लोगों में भी धर्म का प्रसार व प्रेमअधिक होता है. गुरु बोले-शुद्धाचार पालने की मेरी तो शक्ति नहीं है, यदि तेरी शक्ति हो तो तू सुखपूर्वक उसका आचरन कर. गुरु की आज्ञा प्रमाण करअपना और अन्य अनेकों की आत्मा का उद्धार करने के लिये गच्छ में से १ लहुजी ऋषिजी, २ सोमजी ऋषिजी, ३ कहानजी ऋषिजी और ४ कालाजी ऋषिजी ये चार यतियों निकल कर पुनः दीक्षा धारन कर शुद्धाचार पालन करने लगे, व शास्त्रानुसार शुद्ध सद्बोधकर जैन साधुओं के शुद्धाचार की खुबियों लोगों के हृदय में ठसाते ग्रामानुग्राम विचरने लगे. इन का सद्बोध श्रवण कर व शुद्धाचारादि गुणों का अवलोकन कर गुनोंसे अकर्षाये हुए बहुत लोगो शिथिलाचारी यतियों के गच्छका त्यागकर शुद्ध सम्यकत्व सहित श्रावकपना व साधुपना अंगीकार करने लगे. इन की ऐसी प्रतिष्टा शिथिलाचारी यति लोग सहन कर सके नहीं, इन का समुल नाश करने के लिये जितना परिश्रम हो उतना किया. जब ये साधु सुरत में गये तब वीरजी वोराने स्वयं नवाब को कहकर साधुओं को कैद कराये, वहां ज्ञान ध्यान में तन्मय बने हुए

साधुओं को देख कर बेगमने नवाब से कहा कि-फकिरों, को क्यों सताते हो ! वे बददुवा देंगे तो अच्छा नही है. तब नवाबने साधुओं को छोड दिये. अहमदाबाद के मंदिर में कालुजी ऋषिजी को तरवार से मारडाले, ब्राहानपुर में सोमजी ऋषिजी को विषमय पक्वान्न पारने मे देकर मारडाले. यों उन साधुओं पर महा परिश्रम पडे तैसे ही इन के कोइ श्रावक होते थे उनको भी उनके प्रतिपक्षीयों ने जाति बहिष्कार किये, कि वहु नापिक को हजामत करनेकी मनाभी करदी ! और कूवेपर पानी भरना भी बंद किया. इत्यादि बहुत दुःख दिये परंतु उनधर्मधुरंधरोंने उन उपसर्गों से बिलकूलही कायर नहीं बनते हुवे २ २ शास्त्रानुसार शुद्धाचारका पालन स्वयं करनें लगे और अन्य के पास पालन कराते बहुत से मनुष्यों को सनातन जैन धर्मावलम्बी बनाये. वे लोगशुद्धाचार पालने वाले साधुके शिष्य होने से साधु मार्गीय उपनाम से प्रसिद्ध हुए. एकदा लवजी ऋषिजी को किसी स्थान अच्छा मकान नहीं मीलने से फुटे तुटे मकान में रहे. जिस सबब से द्वेषियों ढूंढक नाम से बोलाने लगे. उस का भी उनोने सीधा अर्थ किया कि—भस्मगृह के महा अन्धकारमें वीतराग प्रणित धर्म लुप्त प्रायः होगया उसी शास्त्ररूप दीपक से ढूंढकर निकाल जिससे ढूंढक नाम भी योग्य है. उक्त चार साधुओं में से श्री काहनजी ऋषिजी महाराज

दीर्घायुष्यी और महाप्रतापी होने से आचार्य पद पर नियत हुए. इस समय जो ऋषिजी की उपाधि से विभूषित साधु हैं वे सब इन ही महात्मा की संप्रदाय के हैं.

पूर्वोक्त देवर्द्धि गणी के समय में ७२ शास्त्र नंदीजी में कहे सो और १० शास्त्र ठाणांगजी तथा व्यवहार सूत्र में कहे सो यों ८२ शास्त्र का लेख द्वारा उद्धार हुवा. और बाकी के जैन ज्ञान के महा समुद्र रूप द्रष्टिवाद में से लाखों शास्त्रों का विच्छेद हो गया. श्वेताम्बर मंदिर मार्गी भी उक्त ८२ नाम वाले सूत्र मानते हैं; परंतु वास्तविक में ५० सूत्र विच्छेद होगये हैं और ३२ सूत्र ही रहे हैं. श्रुत ज्ञान के इतने आधार मात्र से इस समय अरिहंत प्रणित जैन धर्म के ज्ञान; क्रिया और करणी सर्वोत्तम हो रहे हैं. यह सब प्रताप देवर्द्धिगणी का तथा लोंकाशाह का है.

उक्त शास्त्रों का लेख कितनेक वर्ष पर्यंत तो विद्वान मुनिवरों और यतियों के हाथ से होता रहा. फिर वे प्रमादी बन सुंदर अक्षरवाले शिष्यों से लेख कराने लगे. उन की प्रमाद दशा में अच्छे लिखने वाले ब्राह्मणों के पास सूत्रों का उतारा करवाने लगे.

त्र
क

वे जैन धर्म के पूर्ण द्वेषी व शास्त्र ज्ञान के अजान लोग मात्र उदरपोषण के लिये ही लहिये बन बैठे हैं. वे शास्त्रों का उतारा कर मन माने भाव से सूत्र बेचने लगे और अपनी उपजीविका करने लगे. इस समय बहुत से शास्त्र उदर पोषणार्थ काम धंधा लेकर बैठे हुए अज्ञान लहियाओं के पास से उपलब्ध होते हैं. वे शास्त्री लीपि सिवाय और कुछ भी नहीं जानते हैं. मात्र अक्षरशः उतारा करते हुए श्लोकों की नियत संख्या पर ही लक्ष रखते हैं. उन को शुद्धाशुद्ध का भान कुछभी नहीं रहता है. ऐसे के हाथ से शास्त्र का लेख होने से बहुत से पाठ खण्डित होगये हैं. अर्थ भी छिन्न भिन्न होगया है. तो फिर दीर्घ ह्रस्व काना मात्रा की भूल का तो कहना ही क्या? ऐसी लीपि-वाले शास्त्र पठन करने में साधु साध्वी भी खेदित होते हैं. तो दूसरे का तो कहना ही क्या? द्वियार्थवाले सूत्र होने पर भी बहुसूत्रियों ही उस में समज सकते हैं. अन्य के समज में आने बहुत मुश्किल होगये हैं. मानो इस से ही जैन लोक शास्त्र पठन से खेदित बनकर अन्य ग्रन्थों रासों तथा छन्देहुए नोवेलों पर विशेष लक्ष लगाते हैं. इस प्रकार शास्त्र ज्ञान की बहुत हानि होने से जिनेन्द्र प्रणित ज्ञान पुनः लुप्त होने लगा है. और शास्त्र ज्ञान के अभाव से ही जैन धर्मियों की संख्या में भी बहुत हानि होने लगी है. मैंने संवत १९४० के बाद सुना था कि

२१०००००जैन हिन्द में हैं. अब सुनने में आता है कि मात्र ११०००००जैन रहे हैं. मात्र ३५ वर्ष के अरसे में १०००००० जैनों की हानि होगई तो आगे के २५ वर्ष में कितने जैनी रहेगें ? यह भी जरा सोचीये ! जिस प्रकार बारह काली दुष्काल में जैन धर्म लुप्त होने पर था उस ही प्रकार अब भी देखा जाता है. इस लिये धर्म को चिरस्थायी बनाने के लिये पूर्वोक्त प्रकार ही शास्त्रोद्धार होने की पुनः परमावश्यक्ता है.

सुज्ञ पाठकों ! पूर्वोक्त लेख के पठन से सहज ही समज में आया होगा कि धर्म को चिरस्थायी बनाने का सच्चा और अच्छा उपाय श्रुत ज्ञान की विद्यमानता पर निर्भर है. आज दिन पर्यंत ज्ञान की आस्ति से धर्म की आस्ति और ज्ञान की नास्ति से धर्म की नास्ति हुई है. ज्ञान के पुनरोद्धार से धर्म का पुनरोद्धार होता है. इस तरह सिंहावलोकन की दृष्टि से दिग्दर्शन करने पर भी अपने जैनाचार्यों व धर्मधुरंधरोंने सिंधु में से बिन्दु मात्र रहे हुए ज्ञान को भी लुप्त होने जैसा कर रखा है. बहुत स्थान भंडारों में बहुत प्राचिन शास्त्र हैं कि जो पडे२ सडगये हैं. उन के रखवालों को उन की प्रतिलेखना करने की भी फुरसद नहीं है. फिर पठन करने का तो कहनाही क्या ? कोई उन के दर्शन करना चाहे तो वह भी कठिन होगया है. तो

फिर वाचने के लिये प्राप्ति की आशा आकाशकुसुमवत् ही समजना. * जो कुच्छ शास्त्रों भंडार से बाहिर थे उन के भी अलग ,२ स्वामी बनगये और उस में से एक श्लोक भी अन्य को प्राप्त होना कठिन होगया. कुच्छ शास्त्र लहियाओं के हाथ में रहे है वे अक्षरशः उतारा करके उन का विक्रय कर रहे हैं. उन्हे श्रीमान ही प्राप्त कर सकते हैं. और भी वर्तमान में गुरु परंपरा से सूत्रों का रहस्य प्राप्त करने वाले बहुत थोडे रहगये हैं. अहता की वृद्धि होने से विनीत शिष्य का योग बनना कठिन होगया है. और ज्ञान के सागर मुनिवर पात्र विना अन्य किसी को ज्ञान नहीं देने से उन के मरण साथ ही ज्ञान का भी मरण होजाता. है ? इस तरह भी श्रुत ज्ञान की हानि बहुत हो रही है.

वर्तमान में साधु साध्वी श्रावक, श्राविका इन चारों तीर्थों के प्रमुख साधु हैं. वे साधु 'णाणेण मुणिणो होइ' अर्थात् ज्ञान करके साधु होते हैं. गतकाल में तो प्रायः

---

* यहां के शास्त्रोद्धार कार्य के लिये चाहते हुवे शास्त्रों डिपाझीट रख कर मांगने परभी कितनेक स्थान से साफ ना उत्तर मिलाया !

मुनियों

राव साधुओं के लिये यह पाठ चला है. "एगारस अंगं अहिज्जित्ता, दुवालसंग महिज्जिता" अर्थात् एक दशांग या द्वादशांग के पाठी होते थे. और वर्तमान में एक अंग के जानने वाले भी साधु बहुत ही थोडे मीलेंगे. जो कोई व्याख्यान दाता साधु भी हैं उन में भी खास शास्त्र की अलौकिक खूबियों समझाने वाले या चमत्कारिक वृत्ति से लोगों को समझाकर जमाने वाले कोइ क्वचित ही पावेंगे. कितनेक तो मात्र अपनी पंडिताइ का ढोल जमाने एक ही गाथा का सदैव उच्चारण कर उस का अर्थ सार रूप तो थोडा और अन्य गपोडे से चार २ महिने बीता देते हैं! चतुर्मास जैसे शांति के समय में एक शास्त्र तो दूर रहा परंतु एक अध्ययन भी सुना नहीं सकते हैं. इतना भी शास्त्र ज्ञान प्राप्त करने श्रोतागण भाग्यशाली न हो सके यह कुच्छ कम अफसोस की बात नहीं है. इस प्रकार के व्याख्यान श्रवण करने से वर्तमानके श्रोताओं का प्रेम शास्त्र पर से प्रतिदिन कम होता जाता है. जहां शास्त्रका वांचन व उनकी खुबियों समजाने वाले पंडित व्याख्यान देते हैं वहां बहुत ही कम श्रोता एकत्रित होते हैं, और जहां ढालों, कथा, कविता लावणी और गझल वगैरह के झपाटे लगते हो वहां हजारों श्रोता जमा हो जाते हैं! यों प्रति दिन शास्त्र ज्ञानकी तो हानि हो रही है. और ढाल कथाओं आदि तुच्छ साररूप ज्ञानकी वृद्धि होती जाती है. इस तरह

मिथ्याभिमान में फसे हुए साधु भी शास्त्राभ्यास में तो अत्यत प्रमादी बन गेय हैं और उक्त प्रकार के गपोडे से श्रोताजन को खुशीकर पंडित नाम से पूजा रहे हैं. यों श्रुत ज्ञान की दिनोंदिन बडी जब्र हानि हो रही है.

अहो जैन बंधुओं जरा बाह्य दृष्टि से अवलोकन किजीये कि—जो जो मतान्तरो चंद दिनों में उत्पन्न हुवे हैं उनकी जन संख्या कितनी अधिक होगइ है ? जैसे कि आर्य समाज वाले, क्रिश्चियन लोग, इन के अनुयायी लाखों मनुष्य होगये हैं. और हो रहे हैं. इस का खास कारन देखेंगे तो मालूम हो जायगा कि-क्रिश्चियन लोगों का धर्म शास्त्र बाइबल है और आर्य सामाजीयोंका सत्यार्थप्रकाश है. जिन का जिनोंने अनेक भाषा में भाषांतर करवा कर लाखों वल्के करोडों प्रतियों छपवा कर देशोदेश में प्रचार किया. वैसे ही और भी बहुत छोटे बडे पुस्तक, हेंडबिल वगैरह क्रोडों की संख्या में फैला रहे हैं. और भी वे विद्या वृद्धि के लिये स्थान २ पाठशाला, हाइस्कूल, कॉलेज, गुरुकुल, बोर्डिंग, अनाथाश्रम, विधवाश्रम वगैरह अनेक संस्थाओं भी अनेक स्थान में स्थापन कर रहे हैं. इन में आबाल वृद्ध सब कोइ, हजारों लाखों की संख्या में एकत्रित

जरा देखो

हैं आहार वस्त्रादि सुख साधन से संतोषित बने हुए विद्याभ्यास कर रहे हैं.उन को शिक्षण देते ही उनके माननीय धर्म का ऐसे संस्कार डालते हैं कि जिस से बालकों के कोमल अंतःकरण पर सचोट असर होती है, वैसे ही सुखोपभोग के साधन से संतुष्ट बने हुए युवकों के हृदय में भी आभार की लागणी से धर्म का अच्छा संस्कार पडता है. इस से कुल परंपरा से चला आता धर्म की भी वे दरकार नहीं रखते हुए उस ही धर्म में दृढबन जाते हैं. और भी उन के धर्मिक ज्ञान में प्रविण बने हुए बहुत से उपदेशको भी ग्रामानुग्राम परिभ्रमण कर हजारों मनुष्यों के वृन्द में खडे रहकर अच्छे प्रभावशाली जाहिर व्याख्यान से उन के हृदय में अपना धर्म की अच्छी ऊंडी असर डालते हैं तैसे ही उन के वडे२ विद्वान व श्रीमान लोग भीक्षा मांगकर लाखो क्रोडो रुपये एकत्रित कर गरीबों को धन की, स्त्री की, नोकरी की लालच देकर अपने धर्म के अनुयायी बनाते हैं. फिर उन को धर्म का अभ्यास कराकर उन को भी धर्मोपदेशक बना देते हैं. यों अनेक उपायों से अपने धर्म ज्ञान का प्रसार करने के लिये उनोंने विविध प्रकार के साधन बना रखे हैं. जिस से ही उन का धर्म इस समय इस भारत वर्ष में अद्वितीय रूप धारन कर रहा है.

उक्त प्रकार से अपनी २ उन्नति करने वाले को देखकर अन्य अनेक धर्मानुयायीयों उन का अनुकरण करके अपने २ धर्म का फैलाव करने लगे हैं. ऐसे जमाने में हमारे जैन धर्मानुयायीयों को देखकर बडा ही रंज होता है. जैनीयों कहते हैं कि-हमारा धर्म सर्वोत्तम है हमारे देव इन्द्रों के भी माननीय पूज्यनीय हैं, हमारे गुरु परम निर्गन्थ हैं, हमारा सर्वोत्तम दयामयी धर्म है, हम ही सम्यकत्व धारन करने वाले हैं. अन्य सब मिथ्यात्वियों हैं वगैरह २ परंतु जब कर्तव्य देखते हैं तो जैनीयों ने अपने धर्म को सब से हीन बना रखा है लाखों जैनों में से अधिकतर श्रीमान लोग हैं वे स्वतंत्र हैं वैसे ही बहुत लोगो राजवर्गीय भी है अर्थात् रजवाडों में अच्छा २ सन्मान पाते हैं. और बहुत अच्छे २ उच्च पदपर कार्य करने वाले हैं. बहुत से विद्वान होकर अच्छी२ डीग्री धारन करनेवाले भी हैं. तथापि वे लोग धर्म के लिये बडे बेदरकार हैं. जैनियों का क्रोडों रूपये का द्रव्य प्रतिवर्ष अन्य धर्म के खर्चे में जाता है. व्यापार में बालाजी, माताजी का हिस्सा रखते हैं. जन्म, लग्न व मरण क्रिया प्रसंग में ब्रह्मभोजन कराते हैं. इस तरह अनेक प्रकार के खर्च करते हैं; परंतु खास अपने धर्म निमित्त कुच्छ भी लाग नहीं रखते हैं. अफसोस !! हमारे जैन साधुमार्गीयों के न तो

कोई हाइस्कूल,कॉलेज या गुरुकुल है. न कोई उक्त प्रकार धर्म पुस्तकोंका प्रचार है, और न कोई उक्त प्रकार धर्मोपदेशक हैं. कदाचित् किसीने महाप्रयास से उक्त लांछन मीटाने के लिये कोई भी संस्था कायम भी की,तो वही विशेष लांछन रूप बन गई है। जैसे रतलामका कॉलेज, बंबईका बोर्डिंग हाउस,अहमद नगरका बालाश्रम और कॉन्फरन्स ऑफिस. ये सब बच्चों के खिलोने जैसे जराक चमक दमक बताकर अलोप होगये. वैसे ही केई साप्ताहिक, केई पाक्षिक व केई मासिक पत्र उदय पाकर अस्त हो गये हैं. इस तरह केई कार्यों के प्रारंभ में तो बडा जोर शोर बताया परतु पिछेसे देखे तो कुछ भी नही. इस पर से 'आरंभेशूरा' की कहावत् साधुमार्गीय जैनोंने सिद्धकर बताइ है।कैसी शोचनीयदशा साधुमार्गीयोंकी हो रही है.

सबूर ! इस काम में श्रावक क्या करे हमारे साधुओं को उपदेशशैलीही इस प्रकार की है. हमारे बहुत से साधुओं क्षेत्र काल का विचार नहीं करते कितनेक व्यवहारिक धर्म के मूलरूप कार्य का जड सूके वैसा उपदेश कर रहे हैं, बच्चों को पढने में पुस्तकों छपाने में किंबहुना शास्त्र संबंधी ज्ञान भी दूसरे को देने में भी पापबताते हैं. पाप पाप पापका ही उपदेश कर.जैन अनुयायी यों को सत्वहीन कर्तव्यहीन व उत्साह -हीन बना दिये हैं. अब

कहिये इस प्रकार के धर्माव्यक्ष्य व धर्मानुयायी के जमाने में किस प्रकार धर्मोदय होसके।

हमारे महावीर मिशनरियों समान दुनिया में अन्य मिशनरियों मीलने ही दुर्लभ हैं. ये कुच्छ सो दोसो की संख्या वाले नहीं है अपितु दो तीन हजार की संख्या में हैं वे धर्मोपदेश द्वारा अपने अत्मा के साथ अन्य के आत्मा का उद्धार करने के लिये ही अपना संसार संबधी सर्वस्व का त्याग कर साधु साध्वी बने हैं. उन को रहने के लिये स्थान, खान पान के लिये अन्नपानादि, पहिनने ओढने के लिये वस्त्रादि विना प्रयास सीधे मीलजाते हैं तो भी खमा२ के गर्जारव से वे महाराजा अपना कर्तव्य भूल गये हैं. इतना ही नहीं परंतु कितनेक तो इतने प्रमादी बनगये हैं कि अच्छे २ भोजन के लिये संयोजनादि दोष युक्त भोगना और सुख से तानखूंटी सो रहना अथवा तो साता उपजाने वाले की खुशामदी करना. बस यही धर्म उनको प्रत्यक्षमें सुखदायी व माननीय होगया है. कोइ व्याख्यान दे सके वैसा साधु होवे तो वे भी बैठनेकी डाली पर कुहाडा चलाने जैसे कर्म करने वाले बने हैं, अर्थात् अपनी स्थापना व अन्य अपने ही स्वधर्मीयोंकी उत्थापना करते हैं. किं बहुना आप के सिवाय अन्य साधु को आहार पानी देने में मिथ्यात्व

लगता बताते हैं,ऐसे उपदेश वाले साधु भी विद्यमान हैं. वे उपदेश द्वारा श्रोताओं में परस्पर द्वेष उत्पन्न कराकर भाइयों २ में झगडा करवाते हैं, अन्य संप्रदाय में से अपनी संप्रदाय में लाने वाले को धर्म धुरंधर कहते हैं. यों संप्रदाय, गच्छ, पंथ वगैरह की वृद्धिकर जैन समाज के टुकडे २ हो गये. वे मतानुयायी लोग अपने धर्म में बंधाये हुए मत पक्ष की शृंखला में ऐसे जकडागये हैं कि जिन में से छोडाने के लिये देवेन्द्र की भी शक्ति नहीं है. तो अन्य का तो कहना ही क्या ?

इस प्रकार साधु मार्गीय जैनकी स्थिति देखकर बडा ही अफसोस होता है.इस तरह अन्य धर्म की उन्नति व अपने धर्म की अवनति प्रति दिन होती हुइ देख कर भी किसी के चक्षु नहीं खुलते हैं. क्या वे लोग ऐसा ही चाहते हैं कि हमारे धर्म का समूल नाश हो जावे विहां तक भी हम हमारा कदाग्रहका कदापि त्याग नहीं करेंगे, ऐसे अधर्मशील कुलांगारों जैसे को विचार तो करना चाहिये कि धर्म के परम प्रसाद से हम पूज्यनीय और सुखी बने हैं. उस ही धर्म को डुबाने का उपाय कर रहे हैं. तो हमारी या हमारे अनुयायियों की आगे क्या दिशा होगी! अफसोस! कहिये पाठकगण !इस प्रकार के साधन जिस धर्म में उपस्थित हैं उस धर्म को ऊंचे आने की आशा किस प्रकार कीजावे ? यह

विचार हृदय में कारी घा जैसा लगता है. अहो जैन भाइयों ! अब लग कुच्छ विशेप नहीं विगडा है. पतंग और पतंग की सब डोर उड गई परंतु चार अंगुल डोरी अबी हाथ में रहगई है. इसलिये जब लग वह छूटे नहीं तब लग ही शीघ्रतासे सावधान बनो और अपने परम पवित्र व माननीय धर्म के पुनरोद्धार के लिये कमरखस कर परस्पर संप्रदायों का, पक्ष का, इर्षा का, और कुसंप का त्याग कर सब समान धर्मावलम्बियों एकत्र बन जाओ, और प्रतिपक्षीयों व निन्दकों की दरकार नहीं करते हुओं अपने पूर्वजों की तरह दुःख परिषह से अडग बन डुबते धर्म को ऊंचा लाने के लिये प्रयत्नशील बनो. जैसे अन्य मतवाले अपने २ धर्म को उन्नाति में लाने के उपाय कर रहे हैं उन में से तुम को भी जो योग्य व अच्छे मालुम हो वैसा तुम भी करो. अहो महावीर के पुत्रो ! तुम भी महावीर बनो. और धारन किये हुवे कार्य को पूर्ण किये विनो मत बैठो अहो अनेकान्त वादियों; जिस प्रकार अपने तीर्थकरोंने समय का परावर्तन देख पांच महाव्रत के स्थान चार और चार महाव्रत के स्थान पांच महाव्रत स्थापन किये हैं तथा अचेलक धर्म का सचेलक धर्म और सचेलक धर्म का अचेलक धर्म स्थापन किया, यों मूलगुण और व्यवहारोपयोगिक कामों में भी परावर्तन किया तो अन्य वातों का कहना ही क्या? अब ऐसा अनुकरण तुम को

भी करना उचित है, क्यों कि समय का परावर्तन अब होगया है, अनेक मतावलम्बियोंने अपने शास्त्र प्रसार रूप झनकार से लोगों को जगा दिये हैं. अब वे लोग पोप लीला से. निरर्थक वातों से, मीठाई आदि की प्रभावना से, ढोंगों से, और तुम्हारी शुष्क क्रिया से जैन धर्म के सन्मुख होवे ऐसी आशा स्वप्न में भी नहीं करना. भगवान ने पांच व्यवहार कहे हैं; उन का भी जरा अवलोकन कीजिये.।वीतरागों का और छद्मस्थों का, साधु का व श्रावकों का भिन्न २ कर्तव्य का भी अवलोकन कीजिये।जो सदैव एकसा आचार होता तो पूर्वोक्त प्रकार खास तीर्थंकर प्रणित महाव्रत और वेशलिंग में फेर करने की क्या जरूर थी? जब तीर्थंकरों की विद्यमानता में भी मूलगुण और व्यवहारिक लिंग में परावर्तन करने की जरूर हुई तब अन्य छद्मस्थों की स्थापित रीतियों का तो कहना ही क्या ? अहो पूज्य मुनिवरों व सुज्ञ श्रावकों ! उक्त कथन को ध्यान में लेकर सागर समान गंभीर बनो. अपने धर्म की अवनति के उपाय जो परस्पर फूट, ईर्षा, वितंडावाद,संवत्सरी जैसे महा-पर्व की भिन्नता, स्थानक मंदिर के क्लेश. ऐसे २ निर्माल्य भेदान्तर का देश निकाल कर अहंता व ममता का त्याग कर सब स्वधर्मीयो एकत्रित होजाओ. " दोहिं चधेणं राग चधेणं देस बंधेणं " इस जिन वचन को ध्यान में रखकर राग द्वेष के उत्पादक और तुम्हारे

में कुसम्प करानेवाले नामधारी तुम्हारे गुरु भी हो तो भी उन के उपदेश को मान्य मत कीजिये. " सुनना सब की और करना दिल की " इस कहावत अनुसार धर्मोन्नति के कार्य को आप स्वयं कीजिये. कार्य होता हो उस में वृद्धि कीजिये. जो कोई कार्य करनेवाला हो उन को उत्तेजन दीजिये. भ्रातृगणों ! यदि आप पूर्ण विश्वास से कहते हो कि अन्य धर्म से हमारा धर्म विशेष पवित्र है तो आप उन अन्यधर्मियों से अधिक कर्तव्य परायण बन आप के सच्चे धर्म की उन के अन्त करण पर छाप पडे वैसा वर्तावकर छाप लगाकर जैन जैन ऐसा नाम दिगन्त तक गर्जा दीजिये.

न्यायशील विद्वद्वरों को किसी भी वस्तु को अशक्य बनाने का मुख्य उपाय यह है कि-जिन महाशयों को जिस की खास खुबीयों का दिगदर्शन करने का विचार होवे उसे वे बहुत शीघ्रता व सरलता से समज सके उस प्रकार उस वस्तु का रूप बनाकर उन क सन्मुख रखना उस से वे उन के गुणानुरागी बने अर्थात् न्यायशील विद्वद्वरों के हृदय में यदि तुम जैन धर्म का प्रभाव डालने की आशा करते हे तो उन को सहज में समज सके वैसी भाषा में जैन शास्त्रों अनुवादित कर उन के सन्मुख

रखो.इस से उन का पठन मनन निदिध्यासन से तत्त्वार्थका अवलोकन करनेवाले बनेंगे और स्वतः की मति प्रेरणासे उस वागेश्वरी के भक्त बनकर उस का बहुमान करेंगे.यद्यपि उपदेश द्वारा धर्म की असर अन्य लोगों के हृदय में अवश्यमेव कर सकते हैं तथापि भारत वर्ष के सर्व धर्मेच्छु को सद्बोध कर सके इतने उपदेशक निकलना असंभवित है. कदाचित कोइ हो भी तो उन को इस समय के साधु के आचार कर्तव्य प्रसिद्ध सभा सोसायटी आदि में जाने को, जाहिर में खडे रहकर व्याख्यान देने को अटकाव करते हैं. वैसे ही मतों की वाडाबन्धी से एक २ के सहवास में एक दूसरे मत वाले आने भी बडा कठिन है. उसी कारन से इस समय में जैन में हजारों उपदेशक होने पर भी वे अपने अनुयायीयों को भी संभाल नहीं सकते हैं तो अन्य को सदुपदेश देकर जैन बनाने की आशा आकाश कुसुमवत् है यह प्रत्यक्ष ही है कि-कैई जैन धर्म के साधु व श्रावक धर्मेच्युत हो गये हैं.उस से जहां लग जैन उपदेशक कर्तव्य परायण नहीं बने वहां लग धर्मग्रन्थों का जितना प्रसार हो उतना ही अच्छा जाना जाता है. धर्मग्रन्थों जाति का धर्म का बिलकूल ही भेद नहीं रखते हुवे हरेक को घर बैठे सहलाइ से मिल सकते हैं. पाठक उस का लाभ जब लेना चहावे तब ले सकते हैं मतलबी वाक्यों का मनन निदिध्यासन करने का

अवसर भी अच्छा मिल सकता है इत्यादि विचार से धर्मग्रन्थों का प्रसार करना सत्यपक्षी न्याय शीलदीर्घ विचार वाले मतान्तरों के ज्ञाता के बनाये ग्रन्थों ऐसे जमाने में अच्छे उपकारी होते हैं. वर्तमान में अपने पाडोस में रहे हुवे अपने भ्रातों दिगम्बरों को देखीये। उन में त्यागी उपदेशकों का तो प्राय: अभाव ही है. कहीं २ भट्टारको व पंडितो उपदेश करते हैं उन उपदेशको से भी उन में धर्मग्रन्थों का बहुमान है. वे उन के शास्त्रों को "अजिणा जिणसंकासा" मानते हैं. और इस काल में जैन ज्ञान के गहन रहस्यों के जान जितने दिगम्बर हैं उतने श्वेताम्बर कम देखे जाते हैं. क्यों कि छोटे २ गामों में जहां दिगम्बरों के ५-७ घर भी होंगे वहां भी ५-७ शास्त्रोंका संग्रह पा जावेगा. और सदैव उन में से एक मनुष्य तो शास्त्र वांचता है, सब जन सुनते हैं. यह रिवाज अनेक ग्रामों में मैंने दृष्टी से देखा है. अवल तो दिगम्बरों में शास्त्र छपाने का बडा प्राति बन्ध किया था. लाखों रूपे के खरच से शास्त्र की प्रतियों उतराते थे. परंतु जब छापे से उन को लाभ मालुम हुवा तो अब उन के भी अनेक ग्रन्थों की लाखों प्रतियों छपगइ है. यों हस्त लिखित व मुद्रित शास्त्रों की प्रतों का प्रसार बहुत स्थानों में भंडारो में है. उन का लाभ हरेक ले सकते हैं. इस प्रकार

श्रुतज्ञान का प्रसार उन में होने से जैन के तीनों फिरके में उन की संख्या ज्यादा है. मद्रास कर्नाटक दक्षिण विभाग में इस धर्मावलम्बीयों बहुत से हैं. और भी अनेक देशो में दिगम्बरों की वस्ति है. इस प्रकार अपने सगे भ्रातोंका ही दाखला देखके ही कर्तव्य पारायण बनीये. तुमारे पास भी ज्ञान का खजाना व शक्ति की कुच्छ न्युनता नहीं है फक्त उत्साह और सदुधम की ही खामी है. सच्चे मन से जमानानुसार उद्यम शील बनो तो सब जोगवाइ मोजूद है. किसी भी प्रकार किसी से पीछे रहने जैसे अपन नहीं है. चडना नहीं चडना यह इच्छा नुसार है.

ज्ञनोदय के इच्छको ! प्राचीन काल में श्रुतज्ञान की वृद्धि व प्रसार मे जितना परिश्रम व द्रव्य का तथा समय का व्यय करना पडता था उतना करने की अब जरूर नहीं है. अर्वाचीन काल में भाग्योदय से मुद्रायण-यंत्रालय का साधन होने से थोडे परिश्रम में व थोडे द्रव्य के तथा समय के व्यय से प्रथम से सहस्रों गुना अधिक इस वक्त श्रुतज्ञान का प्रसार बहुत ही सुलभता से हो सकता है, यह अपूर्व मौका प्राप्त हुवा देख प्रायः सब ही मतावलम्बीयों अपने २ माननिय धर्मज्ञान के व अन्य अनेक प्रकार

के प्राचीन ग्रन्थ व अर्वाचीन ग्रन्थों अनेक भाषाओं में अनुवाद करके व करवाके हजारों लाखों कॉपी प्रत छपवाकर बहुत से समूल्य व कुछ अमूल्य देकर अनेक देश देशांतर में उन का प्रसार कर रहे हैं. इन से कितनेक पुस्तकविक्रेयी धन संपत्ति प्राप्त कर धनेवान बने हैं. इस ही प्रकार श्वेताम्बरों भी अपने धर्म ज्ञान का प्रसार करने प्रयत्न शील बने हैं, और इस प्रकार कितनेक अन्ने२ धर्म के तत्वों के अन्य को अनुभवी रसीले बनाने का प्रयास कर रहे हैं. यों चारों ओर २ धर्म शास्त्रों का अनेक भाषाओं में अनुवाद कर प्रसिद्ध में ला रहे हैं. इस प्रकार के जाहो जलाली के जमाने में अपने साधुमार्गियों को मुह छिपाना उचित नहीं है, अपितु सब से आगे बढना चाहिये।

कितनेक साधुमार्गीय उपदेशकों के भ्रममय उपदेश के भ्रम में फस कर अपने शास्त्रों को छापने में पाप समज जैन पश्चात रहे हैं. इस के मुख्यता में पांच कारन जाने जाते हैं.- १ कितनेक कहते हैं कि जब ज्ञान की दुष्करता से प्राप्ति है तब ज्ञान पर प्रेम रहता है और सुलभता से प्राप्त होता ज्ञान की कोई कदर नहीं करता, २ कितनेक कहते है कि जब श्रावक ही शास्त्र का पठन पाठन करेंगे तो फीर साधु की मान पूजा कहां से होगी. ३ कितनेक कहते हैं कि गृहस्थ साधु के आचार विचार से परिचित होंगे तो वे साधु के

मुनियों

छिंद्रग्राही वन जायेंगे. ४ कितनेक कहते हैं कि छपे हुए शास्त्र की यरना नहीं होने से अशातानाा होती है और५ कितनेक छपानेमें हिंसा होती है ऐसा कहते हैं. इत्यादि केई प्रकारकी कल्पनाकर अपने परम माननीय परम पवित्र धर्म को डुवाने की अनी पर लारखा है. जैसा विचार वर्तमान के जैनियों को होता है वैसा ही यदि तीर्थंकर, गणधरों को होता तो आज दिन पर्यंत जो यह धर्म स्थिर हो रहा है वैसा कदापि रहता हीं नहीं ! इस का नाश कभीका ही होगया होता? क्योंकि १ दुर्लभता से प्राप्त होते ज्ञान के ही जो लोग प्रेमी होवे यदि ऐसा ही होता तो तीर्थंकर वगैरह को स्थान २ में परिभ्रमण कर उपदेश देने की क्या आवश्यक्ता थी. मात्र एक ही स्थान बैठे रहना था. दूर देश देशांतर से लोग उन के पास आकर ज्ञान ग्रहण करते ! क्यों वडा भारी समवसरण में विराज-मान होकर एक योजन पर्यंत सुन सके ऐसी दीव्य ध्वानि से देव दानव मनुष्य पशु वगैरह सब अपनी २ भाषा में समज सके ऐसी भाषा में तीर्थंकर उपदेश देते ?. २ श्रावक शास्त्र के ज्ञाता बन जायेंगे तो साधु की मान पूजा नहीं करेंगे. तो तीर्थंकरोंने श्रावकों को ज्ञान क्यों दिया ? सूत्रों में जहां २ श्रावकों का कथन चला है वहां २ " अभिगया जीवाजीवे " सुय परिग्गहिए, निग्गंथ पावयणे सावए सेवि कोविए, लद्धट्ठा, गहिअट्ठा "

वगैरह पाठ दृष्टिगत होता है. राजमती को भी " बहुसुआ " बहुत सूत्र की ज्ञाता कही है, तुंगिया नगरी के श्रावकोंने श्री पार्श्वनाथजी के संतानीये. से कैसे २ प्रश्नोत्तर किये हैं. शंखजी पोखलीजी, शंखजी की स्त्री जयवंती बाइ, और उपासक दशांग में कहे दश श्रावकों वगैरह शास्त्र के ज्ञाता थे तब ही साधु की कितनी अधिक सेवा भक्ति करते थे ३ गृहस्थ साधु के आचार से परिचित होने से छिद्रग्राही बनेंगे ऐसा विचार शिथिलाचारी साधुओं को तो अवश्य होगा. क्यों की वे अपने गुप्त दोषों छिपाने वाले होते हैं. परंतु साधु आचार के ज्ञाता श्रावक शुद्धाचारी साधु के विशेष अनुरागी होते हैं. और जो शिथिलाचारी होते हैं उन को हित शिक्षा देकर धर्म में स्थिर भी करते हैं. ४ छपे हुए शास्त्र की असातना तो दमडे को शास्त्र मानने वाले ही करते हैं परंतु जिन को शास्त्र ज्ञान का अच्छा अनुभव है उन को तो हस्त लिखित मुद्रित यों दोनों ही समान होते हैं. और ५छपाने में जो हिंसा का दोषारोपन करते हैं परंतु हस्त लिखित से क्या वर्तमान समय में दोष नहीं होता है, आजकाल लिखने वाले लहिये होते हैं वे क्या यत्ना पूर्वक ही लिखते हैं. पहिले साधु लोग स्वय लिखते थे, जिस से यत्ना से [illegible] और द्रव्यव्ययभी नहीं होता था, परंतु आजकाल के जमाने में सूत्र

के लिये सैंकडो रुपये खर्च करने पडते हैं. मुद्रित करने से कम खर्च में बहुतसा लाभ मील जाता है. दया पलाने का, दीक्षा दिलाने का, व्याख्यान सुनने आने का, वगैरह कितनेक धार्मिक कार्यों का उपदेश गृहस्थ को साधु देते हैं, तैसे ही ज्ञान वृद्धि का उपदेश भी किया जाता है. इस प्रकार किये विना धर्म .वृद्धि होती ही नहीं है. योगों की प्रवृति में क्रिया तो अवश्यमेव लगती है. परंतु लाभालाभकी न्यूनता अधिकता का लक्ष सम्यग् दृष्टिको अवश्य करनाही चाहिये. दीक्षा दया व्याख्यानके कार्यों से शास्त्रोद्धार का कार्य क्या कुच्छ कम उपकार वाला है ? निष्पक्षपात पना से विचार करने से इस का पता लग सकता है. देखो छपाने में क्या हिंसा होती है सो विचार करो—जगत् में अनेक मुद्रायंत्र चल रहे हैं जिस के लिये प्रेस श्याही टाइप वगैरह बनते हैं और तैयार मील सकते हैं. उस में पानी की जरूर रहती है तो अचित्त पानी का संयोग भी मील सकते हैं. इस तरह छपने से एक ही दिन में १००००—२०००० पाने तैयार होसकते हैं कि-जिसे लिख लिये ते छमहिने भी पूरा होना कठिन है ! इस प्रकार के कार्य का ज्ञान विचारशील मनुष्य होते हैं वे ही समज सकते हैं. अभि तो लकीर के फकीर बनने वालों को समजाना दुर्लभ है. इसलिये जो पूर्वोक्त रीतिसे छापने

के काम दोषारोपण स्थापन करते हैं वे अयोग्य व अनुचित हैं.

जैन के कुच्छ शास्त्रों व ग्रन्थों छपवाकर प्रसार हुवे हैं और वे पाश्चिमात्य विद्वानों के हाथ लगे हैं जिन की खूबीयों का अवलोकन कर हरमन जेकोबी तो मागधी भाषा के अद्वितीय ज्ञाता गिने जाते हैं. और भी अनेक जैन बन गये हैं. जैनधर्म की व्यवहारिक प्रवर्ती खूबीयों व क्रिया करतूत का अवलोकन कर भी वे लोग जैन का बहुमान करने लगे हैं. मानो उस ही प्रेम से अकर्षाये हर्मन जेकोबी हिन्द में आये तब साधुओं के दर्शनार्थ गये. जैनधर्म के श्रुतज्ञानका यह कुच्छ कम चमत्कार नहीं है? इतने दूर देशावर में रहे जन्म से ही जैन के अनभिज्ञोंने, इस प्रकार धर्म के प्रेमी बन उत्तम धर्म को ढूढ लिया. यह किस का प्रताप है, सच्च कहो तो प्रसिद्धी में रखा हुवा श्रुतज्ञान का ही है तो फिर अर्हन्त प्रणित शास्त्रों प्रसिद्धी में आने से विज्ञजनों को उसका पठन मनन निदिध्यासन करने का गुह्यखूबीयों दिगदर्शन करने का अवसर प्राप्त होवे और वे सत्य ग्राही ऐसे अपूर्व ज्ञान के अशक्य बन जैनधर्म को दीपाने प्रयत्न करें तो जैन की स्थिती जैसी प्राचीन काल में थी वैसी अर्वाचीन काल में बने इस में आश्चर्य ही क्या? इस

प्रकार श्रुतज्ञान प्रसार से होते हुवे लाभ को जानते हुवे भी जो उक्त प्रकार की कुतर्कों करना नहीं छोडते हैं उनको धर्मवृद्धि के इच्छक किस प्रकार जाने जावें ? अहो मुनिवरों ! अहो श्रावको ! उक्त कथन को जरा ध्यान देकर परस्पर का द्वेष ईर्षा पक्षपात आदि दुर्गुनों का त्याग कर पूर्वापर विचार कर समयानुसार प्रवर्तक बनो तो बहुत ही अच्छा है. जो कदापि आप को उक्त कथन मान्य नहीं होवे तो अथवा उक्त काम नहीं बनी आवे तो अन्य धर्मोन्नति करने वालों की निन्दाकर उन का उत्सहा मंद कर अनेक जीवों को ज्ञानादि गुनकी प्राप्ति में अन्तराय देकर ज्ञानावरणीयादि कर्मबन्ध करने के अधिकारी नहीं बनीये. इतनी ही प्रार्थना मैं सविनय नम्र हो करता हुं सो ध्यान में लेने कृपालु बनीये !

धर्मोन्नति का मुख्य उपाय श्रुतज्ञान का प्रसार ही है ऐसें श्रद्धालु वर्तमान में कितने साधु साध्वीयों बनकर कितनेक वर्षों से मुद्रायंत्रकी सहायता द्वारा ग्रन्थ प्रकाश करानेका कार्य सुरु किया है; जिनके स्तुत्य प्रयाससे अभी सेंकडों ग्रन्थोंकी लाखों प्रतीयों दृष्टीगतकी होने लगी है हमारे धर्म धुरंधरों की यह प्रवर्ती आगामिक काल में धर्म को प्रदिप्त करने वाली बनेगी ऐसा जान हर्षानन्द उत्पन्न होता है. पुज्य श्री कहानजी ऋषिजी महाराज के सम्प्रदायके

के महात्मा कवीवरेन्द्र श्री तिलोकऋषिजी महाराज कृत "ज्ञाना दीपिका" और प्रतिक्रमण-सद्बोध, महाराज श्री देवलोक पधारे बाद अहमदनगर के श्रावको ने छपाइ, इन ही के शिष्यवर्य पुज्यपाद श्री रत्नऋषिजी महाराज कृत "तिलोक चन्द्रिका" विनय विनोद-रास" श्री अमीऋषिजी कृत "स्तवन लावणी संग्रह" तथा "सुबोध अमृतावली" श्री रघुनाथजी की सम्पदाय के पंडित शोभाग्य मलजी कृत "विविध रत्नप्रकाश" नवतत्व प्रश्नोत्तर "साधु समाचारी" पंजाबी पुज्य श्री अमरसिंहजी महाराज की सम्प्रदाय के पुज्य श्री सोहनलालजी, उपध्याय श्री आत्मारामजी, श्री उदयचंदजी, श्री ज्ञान चंदजी, श्री रत्नचंदजी तथा प्रवर्तनीजी महासती श्री पारवतीजी आदि की तरफ से भी अनेक ग्रन्थों प्रसिद्धी में आये हैं. तैसे ही पुज्य श्री हुकमचंदजी महाराज के सम्प्रदाय के श्री नंदलालजी श्री हीरालालजी, श्री चौथमलजी श्री खूबचंदजी श्री जवाहरलालजी, इन साधुओं के तरफसे भी बहुत से ग्रन्थ प्रसिद्धी में आये हैं. पुज्य श्री मनोहरदासजी के सम्प्रदाय के महात्मा श्री माधवमुनिजी श्री मूलमुनिजी पुज्य श्री जयमलजी महाराज के सम्प्रदाय के श्री रामचन्द्रजी श्री प्रभाकर सुरजी (प्रसन्नचंदजी) श्री नथमलजी श्री जोरावरमलजी. इन सिवाय गुजरात खंभात सम्पदाय के पुज्य श्रीगिरधरऋषिजी काठीयावाड के श्री उत्तम-

चंदजी, मोहनलालजी, मणिलालजी शतावधानी पंडित श्री रत्नचन्द्रजी प्रमुख बहुत मुनिवरों हैं.और कच्छ देश के पुज्यवर्य श्री कर्मसिंहजी महाराज के शिष्य श्री नागचन्द्रजी, श्री तिलोकचन्द्रजी इत्यादि अनेक मुनिवरों की तरफ के प्रसिद्धी में आये हुवे ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं. और भी अनेक मुनिवरों के जैन अखबारों में तरह २ लेख भी प्रसिद्धी में आये हैं. किं वहुना जो छापने के काम को दोषित ठहराते हैं उन की तरफ से भी वहुत से लेखों अखबारों में प्रसिद्धी में आये हैं. वे अपने हाथ से लिखाये हो या अन्य के पास लिखा भेजो, दिल चहा वैसा करो परंतु ज्ञान प्रसिद्धी में रखने का चटका तो उन को भी लगा है. यह बात जग जाहिर होगइ है. ऐसे ही कितनेक मुनि महात्माओं की सहायता से बहुत से श्रावकोंने भी जैन शास्त्रों व ग्रन्थों प्रसिद्ध किये हैं. आचारांग सुयगडांग ज्ञाताजी उपासकदशांग अनुत्तरोववाइ जीवाभिगम. निरियावलीका पंचक बृहद्कल्प, दशवैकालिक उत्तराध्ययनजी वगैरा शास्त्र कितने मूल अर्थ युक्त कितनेक फक्त भावार्थ युक्त प्रसिद्धी में आये हैं. डॉ. जीवराज घेलाभाइ, वाडीलाल मोतीलाल शाह, पोपटलाल केवलचंद शाह आदि इस काम के वडे उत्साही हैं. ऐसे ही साधुमार्गीय धर्म के त्रिमासिक मासिक पक्षिक साताहिक अखबारों भी प्रसिद्धी में आये

हैं. इस प्रकार साधु मार्गीय धर्मावलम्बीयों भी अपने धर्म की कीरणों जगत् में चमका कर चमत्कार उत्पन्न करने लगे हैं. यह भविष्य धर्मोदय के चिन्ह हैं.

उक्त प्रकार ज्ञान के कीरणों की झलक यहां दक्षिण हैद्राबाद में पडी, जिस के प्रकाश में बहुत कुछ लाभ प्राप्त कर उस के प्रकाश को आगे बढाने के लिये यहां भी ज्ञान वृद्धि खाता स्थापन किया-जिस द्वारा जैन तत्त्व प्रकाश, परमात्ममार्ग दर्शक, मुक्ति सोपान, ध्यानकल्पतरु, वगैरा बडे छोटे ग्रन्थों. मदन श्रेष्टी चन्द्रसेन लीलावती जिन दास सुगुनी, आदि चरित्रों वगैरह ७५००० पुस्तकों का प्रसार भारत वर्षादि देश में किया. ऐसे यहां की पुस्तकों प्रसार हुई उससे जो २ धार्मिक व व्यवहारिक सुधारे हुवे, जैन जैनेतर लोगों का जैन धर्म तरफ प्रेम वगैरह जो उपकार हुवा, उस के हजारों की संख्या में प्रशंसा पत्र, मानपत्र आदि प्राप्त हुवे हैं, उन का जो कभी उल्लेख किया जावे तो एक बडा ग्रन्थ बन जावे. इस अनुभव पर से ही निश्चयात्मक हो कहता हूं कि—एक श्रुतज्ञान ही बडा जबर उपकारी है.

उक्त प्रकार यहां से ज्ञानवृद्धि होती देख बहुत से साधु महाराजाओं के तर्फ से और सुज्ञ श्रावकों के तरफ से सूचना प्राप्त हुई कि—जिस प्रकार आप पुस्तकों प्रसिद्ध करने में महा परिश्रम व द्रव्य व्यय करते हो तैसा ही उद्यम जो अपने परम माननीय ३२ सूत्रों प्रसिद्ध करने में किया जावे तो महा लाभ कर्ता होगा. यह कथन आप को जरूर ध्यान में लेना चाहिये. इस सूचना को पढकर मन में तरंगो तो उठने लगी की यह आवश्यकीय है. जो पुस्तकों प्रसिद्धी में आने से इतना उपकार हुवा तो शास्त्रों प्रसिद्धी में आने से विशेष उपकार हो इस में आश्चर्य ही कौनसा ? जिस वक्त गुजरात में जैन धर्म का अधिक प्रसार था तब गुजराती भाषानुवाद के शास्त्रों की परमावश्यकता थी. वह तो परम उपकारी श्री धर्मसिंह मुनि के परम प्रयास से फलित हुई. अब तो चारों दिशाओं में और चारों वर्ण के लोगों में जैन धर्म का प्रसार हुवा है. इस लिये सब की समज में आवे इस प्रकार की भाषा में अर्थात् सब की मातृभाषा में शास्त्रोद्धार होना ही परमावश्यकीय है. यह काम होना असंभवित है क्यों कि—हिन्द में प्रवर्तती सब भाषा का जानकार जैन शास्त्र का ज्ञाता होवे वही भाषानुवाद कर सके, और अनेक भाषा में अलग २ शास्त्रों प्रसिद्धी में रखने का

खरच भी बहुत होता है, वह करने वाला भी होना असंभवित है. यद्यपि जैन मतावलम्बीयों अनेक देश में श्रीमान हैं परन्तु ऐसे उत्तम कार्य में द्रव्य व्यय करने वाले निकलने मुशकिल हैं. बहुत से जैनीयों मिथ्याभिमानीयों बनकर लग्न में मृत्युकेबाद वगैरे मिथ्या कार्य में तो शक्ति से अधिक खरच कर गुजरते हैं; परन्तु धर्मार्थ खरच करने में बहुत ही पश्चात रह हुअे हैं. इस लिये सब की मातृभाषा में जैन शास्त्रोद्धार होना तो असंभवित है. एक ही ऐसी भाषा और ऐसी लिपी हो की जिस में हिन्द निवासी जैन जैनेतर सब लोगों सरलता से समझ सके लाभ प्राप्त कर सके ऐसी भाषा तो हिन्दी और ऐसी लिपी देवनागरी है. याने हिन्दी भाषा के जान और देवनागरी लिपी के पढनें वाले प्रायः हिन्द के प्रत्येक देशों में मिल सकते हैं इस वक्त हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपी का मान हिन्द में बहुत ही बढगया है, हिन्दी भाषा के हिमायती हिन्द के अग्रेसरों बने हैं, कितने देशों में राज दरबारी कानूनो भी हिन्दी भाषा में हुवे व हो रहे हैं, हिन्दी भाषा के अखबारों भी बहुत निकलते हैं. और सिक्कों पर भी यह छाप पडने लगी है. इस लिये जैन शास्त्रोद्धार हिन्दी भाषा और देव नागरी लिपी में होवे तो अवश्यही प्रायःसर्वमान्य और परम उपयोगी बन

जावे. परन्तु ३२ ही शास्त्रों का अर्थ परमार्थ का जान, लेखनकार्य में दक्ष जिन के
सामान्य लेख भी सर्व मान्यबने हों ऐसा ऐसे कार्य करने का खंतीला, और सब शास्त्रों
का हिन्दी भाषानुवाद लिखने का महा परिश्रम उठाने वाले कोइ महात्मा . हो वह
निरापेक्ष सत्याग्रह से भाषान्तर करे और उन सब शास्त्रों को प्रसिद्धी में रखने का
अमूल्य व लाभ देने वाला कि जिस से शास्त्रों का महा लाभ गरीब व श्रीमन्त एकसा
प्राप्त कर सके ऐसा श्रीमान दानवीर सद् गृहस्थ का जोग बने तो ही यह परमो
त्कृष्ट अर्थ सिद्ध होवे. ऐसा जोग इस काल में मिलना बडा ही अशक्य मालुम पडने
लगा जिस से उक्त मन की भंग तरंगो मन की मन में ही दबगई. × परंतु जो
कार्य होने का होता है उस का जोग भी वैसा ही बन जाता है. यह आगे इस ही
पुस्तक में अवलोकन कीजीये !

* इति प्रथम प्रकरण समाप्तम्. *

× ☞ उक्त विचार मेरे मन में हुआ था तब मुझे ख्याल मात्र नहीं था कि इस जन्म में यह कार्य मेरे हाथ से होगा. इस लिये उक्त शब्दों से बताया श्लेष दोषित मुझे न बनाइयेजी !

॥ दूसरा प्रकरण-वर्तमान शास्त्रोद्धार. ॥

इस पांचवे आरे के वर्तमान समय में श्री अरिहंत प्रणित सनातन दर्शन के यथा तथ्य पालन करने वाले साधु मार्गीय अपर नाम-स्थानकवासी धर्म महा प्रभावशाली आचार्य तथा साधु साध्वी आदि के सद्बोध से वैसे ही श्रीमान धीमान श्रावक श्राविकाओं के प्रभाव से संपूर्ण भारत वर्ष में और पाश्चिमात्य के देशों में विस्तृत हुवा है. ऐसे समय में इस हिन्द भूमि के मरुस्थल (मारवाड-राजपूताना) देश की जोधपूर राज्यधानी में प्रसिद्धी पाया हुवा मेडता नगर में वडे साथ ओसवाल जाति के विशुद्ध व माननीय सकलेचा गोत्रान्तर्गत कॉसटीया गोत्रीय श्रीमान शेठ कस्तुरचंदजी रहते थे. कुलपरम्परा से वे श्वेताम्बर मंदिरमार्गीय जैन थे. प्रसंगानुपेत उन का लग्न संबंध चिचोडगढ निवासी साधुमार्गीय जैन के अन्तर्गत तेरापंथी के अनुयायी श्रीमान छोगमलजी कोठारी जी की पुत्री के साथ हुवा. उन का नाम जवाराबाइ थी. बाल्यावस्था में ही साधु साध्वी की संगति होने से प्रतिक्रमण, चर्चा के बोल का अभ्यास वगैरह से चुस्त धर्मात्मा बनी थी.

वह अपने श्वशुर गृह में भी सदैव धर्मसाधन करती थी. ऐसा देख एकदा उनके देवर को आगे रखकर कहलाया " भोजाइजी हमारे घराने में किसीने मुहपति नहीं बांधी है, इस से तुम भी मुहपति मत बांधो. ऐसा सुन जवाराबाइने विचार किया कि यदि मैं इस समय दब जाऊंगी और उत्तर नहीं दूंगी तो ये लोग मुझे धर्माचरण नहीं करने देंगे और मैं धर्मच्युत होजाऊंगी.इसलिये इस वक्त ही इस बात का निकाल करदेना ही सर्वोत्तम है. इस से आगे क्लेश का काम ही नहीं रहे. ऐसा विचार करके उत्तर दिया कि लालजी शाह ! मैं आप के घर में संसार संबंध से आइ हूं इस में अगर किसी प्रकार की न्यूनता देखो तो मुझे उचित शिक्षा करो. परंतु धर्म सबंध किसी के दबाने से कदापि नहीं छोडूंगी. धर्म स्वेच्छा का है परंतु जबरदस्ती का नहीं है. मैं प्राणांत इस ही धर्म का आराधन करूंगी. यदि आप को यह योग्य होवे तो आप मुझे घर में रखे, नहींतर आज्ञा देवे कि मैं दीक्षा अंगीकार करूं. और भी उसने कहा कि लालजी शाह ! मुख तो माल वाले भाजन का बांधा जाता है खाली भाजन का मुख कौन बांधता है ? ऐसा जवाराबाइ का उत्तर सुनकर घरवाले सब चुप होगये. और अन्य अनेक अपचेष्ट करने लगे. परंतु जवाराबाइने उन किसी पर ध्यान दिया नहीं. और अपना धर्म कर्म

निश्चय व्यवहार वगैरह जिम २ समय जो २ साधन करने का था उस का साधन करने लगी.एकदा कस्तूरचन्दजी व्यापारार्थ मालव देश के भोपाल राज्य के अन्तर्गत आष्टे शहर में आये. वहां व्यापार अच्छा चलने से अपने सब कुटुम्ब परिवार को भी मारवाड से बुलवा लिये. कस्तूरचन्दजी की माता बडी धर्मात्मा थी. और मास २ क्षमण की तपश्चर्या भी किया करती थीं. उस की सेवा भक्ति जवाराबाइने बहुत अच्छी की थीं. अब आष्टे आये पीछे जवाराबाई स्वतंत्र होगइ जिस से सदैव चार घडी रात्रि रहते उठकर सामायिक प्रतिक्रमण नियम व्रत धारन व स्तवनादि वगैरह किया करती थीं. फिर उस से निवृत्त होकर बहुत यत्ना पूर्वक घर की प्रमार्जना कर रसोइ सामग्री तैयार फिर यत्ना सहित चुला सलगा कर अच्छे भोज्य पदार्थों निपन्न करती थी रसोइ से निवृत्ति पाये वाद धर्म कार्य ही किया करती थीं.

यहां पर जवाराबाइ को अनुक्रम से चार पुत्ररत्न की प्राप्ति हुई. जिन के नाम १ खुशाल चंदजी, २ केवल चंदजी, ३ रतनलालजी और ४ माणकचंदजी. इन पुत्रों को भी धर्म श्रवण कराना, छोटे २ व्रतनियम धराना नवकार मंत्रादि का अभ्यास कराना

वगैरह क्रिया मे धर्म की लगन लगाती थी. मालव देशमें आद्य मध्यस्थान होनेसे तथा वहा साधु मार्गीय जैन की वसति भी बहुत होने से साधु साध्वी का आवागमन बहुत होता रहता है. जावाराबाई साधु साध्वियों के दर्शनका व्याख्यान श्रवणका लाभ हरवक्त लिया करती थी. आहार पानी धर्म वृद्धि की दलाली से साधु साध्वियों को साता उपजाकर धर्म वृद्धि करती थी. कुशालचंदजी व केवल चंदजी का योग्य वय में ही. लग्न संबंध कर दिया और रतनलालजी को इन्दोर निवासी श्रीमान मानमलजी कौंसटीया को दत्त पुत्र पने दिये. उस समय आठ में हैजे (कोलेरा) का बडा उपद्रव हुवा उस में कस्तुरचंदजी, खुशालचंदजी केवलचंदजी की पत्नी और माणकचंदजी इन चारों का थोडे २ अंतर से आयुष्य पूर्ण होगया. संसार की ऐसी विचित्रता देख जवाराबाई को वैराग्य हुवा. और खुशालचंदजी की विधवा स्त्रीके साथ दीक्षालेकर संयम मार्ग में अपना शेष आयुष्य व्यतीत करने का निश्चय किया. परंतु कर्मोदय से खुशालचंदजी की स्त्री ने कबुल किया नहीं, तब जवाराबाई ने धर्मदासजी के संप्रदाय में गुलाबकुंवरजी आर्याजी के पास दीक्षाली और वह मेवाड जाकर तेरपंथी में मीलगइ. वहां अठारह वर्ष संयम पालकर स्वर्गगामीनी बनी.

उस काल उस समय में मालव देश के गोंडवाणे देश की राज्यधानी भोपाल शहर बहुत प्रख्याती पाया हुआ था. वहां पर परम पूज्य श्री कहानजी ऋषिजी महाराज के संप्रदाय के चतुर्थ पाटवीय श्री धनजी ऋषिजी महाराज पधारे. उन के प्रभाव शाली व्याख्यान से प्रति बोधित होकर वैष्णवधर्मीय १२५ घर मोडवनीयों के साधु-मार्गीय बने और ५० घर ओसवालों में से आधे साधुमार्गीय व आधे मंदिरमार्गीयों सब मीलकर वर्तमान में १५० घर साधुमार्गी के हैं. तथा एक विशाल भव्य धर्म स्थानक है. अपनी माता पत्नी तथा बंधुओं के वियोग से केवलचंदजी का चित्त उद्विग्न रहता था. इस से वे अपनी भुजाइ को साथ लेकर भोपाल में अपने काका रीखभदासजी के पास आकर रहे. कुल परंपरा से वहां पर पांच प्रतिक्रमण नवस्मरण नवपदपूजा वगैरह कंठाग्र कर सदैव पूजा वगैरह धर्म क्रिया करने लगे. १२ वर्ष पर्यंत जवारा बाइ जैसी माता की छाया में दया धर्म का अवलोकन करते हुए रहे थे. जिस से उन के कोमल अंतःकरण पर दयाका अच्छा प्रभाव पडा था. वे परम्परा से उक्त क्रिया करते थे तथापि उस पर उन की रुचि नहीं होती थी. प्रति समय यही विचार होता था कि मेरी माता तो हरी वनस्पतिथ, कच्चा पानी की त्यागिनी थी.

छोटे, जीवों की सदैव यत्ना करती थी. खानपान भाजन वगैरे विना देखे काम में नहीं लाती थी, सांसारिक आरंभ कार्य का भी पश्चाताप करती थी. कहीं तो ऐसा दयामय धर्म और कहां ये धर्मस्थान के कर्म. यहां तो सदैव हंडो से गरम पानी होता है. अनेक मनुष्य अनन्त काय वाली मोरी पर स्नान करते हैं, कीडों से कलवलती हुई मोरी में गरम पानी जाते वे कीडे भस्म होजाते हैं. असंख्यात संमूर्छिम जीवों का धमसान होता है, सदैव संख्यात त्रस और असंख्यात व अनंत स्थावर जीवों के पिण्डमय पुष्पों के गजरे, तुरे, हार और कौमल कलियों की छावों आती है. तरह २ के फल मेवे, धूप, दीपक का कायोत्सर्ग में बैठे देवों को भोग लगाते हैं. जब रोशनाइ होती है तब विना गिनती के फुदे पतंगिये मच्छर वगैरह का विनाश होता है. यह कैसा धर्म ! यों शंकाशील बनते थे. एकदा पूजा कर कपडे पहिनते हुए तिबारे में पडे हुए शुष्क पुष्पो के पुंज में सैंकडो कलवलते हुए कीडे देखे, तब नौकर से बोले-रे भाइ ! ये फूल क्यों जमा किये हैं ? तब वह बोला-आज पानी लाने जाऊंगा तब तालाव में डाल दूंगा. केवल चंदजी बोले तालाव में डालने से तो सब जीव मर जायेंगे. तब लालचंदजी नाम के श्रावक कि जो वहां सामायिक में बैठे थे वे बोले-अन्य स्थान पुष्पों डालने से पांव नीचे आवे

द्धा
फिर

तो असातना होवे. ऐसे धार्मिक कार्य में हिंसा नहीं जानना. इस प्रकार वयोवृद्ध पुरुष के वचन सुनकर केवलचंदजी चुप होगये और मन के मन में ही कहने लगे कि एकांतमें डाले तो पांव नीचे भी आवे नहीं और जीव भी मरे नहीं. अब आजसे मैं कदापि पुष्प नहीं चढावूंगा. इस प्रकार हिंसा कर्म से परिणाम शिथिल होने लगे.

उस समय वहां पर चन्द्र विजयजी सम्वेगी साधु का चतुर्मास हुवा था. एकदा केवलचंदजी चतुर्मासी पक्खी का पौषध मंदीर के नीचे पौषधशाला में किया. प्रातःकाल देव वंदन करने ऊपर मंदिर में गये. रात्रि को रोशनाइ खुब हुइ थी जिस से वहां मरे हुए पतंगिये का बिछोना देख उन के रोमांच खडे होगये. पुनः एकदा व्याख्यान सुनते अधिकार आया कि निंब, कटुक गिलो, मूत्र वगैरह अनाहारक वस्तु है, उस को यदि चौविहार उपवासमें भोगव लेवे तो भी उपवास भंग नहीं होता है, केवलचन्दने स्वाभाविक ही प्रश्न किया कि निम्बोली एकेन्द्रिय होती है? तब चंद्रविजय बोले कि-पीसे पीछे एकेन्द्रिय क्या रहती है? तब केवलचंदजी बोले कि गेहुं भी पीसे पीछे ॥ एकेन्द्रिय क्या रहता है. ? इतना सुनते ही चंद्रविजयजी क्रोधातुर हो गये और खडे हो कर मिच्छामिदुक्कडं " देने का बोले. लो गो

आग्रह से लाचार होकर केवलचंदजीने वैसा किया. तब चंद्रविजयजीने केसरीया नाथ की जय बोलाइ. केवलचंद्रजी ऐसा देख खेदित हुए और पुनः मंदिर में जाने का सदैव के लिये त्याग किया.

उस काल उस समय में रतलाम शहर निवासी माता सिरदारांजी, पुत्री हीरांजी, और पुत्र कुंवरजी व त्रिलोकचंदजी इन चारोंने परम पूज्य श्री कहानजी ऋषिजी महाराजके संप्रदाय के पूज्य श्री धनजी ऋषिजी महाराज के शिष्य श्री एवंता ऋषिजी महाराज के पास दीक्षा धारन की थी. दोनों माता पुत्री दयाजी महासतीजी की शिष्यणी बनी कि-जो साध्वी संप्रदाय में बहुत प्रभावशाली स्थंभ समान बनी. श्री त्रिलोक ऋषिजी महाराज कवित्व में अच्छे प्रख्याती पाये. इनोंने दक्षिण में धर्म का बीज आरोपन किया है, जिस का वृक्ष अब फुला फला बना है. और बडे श्री कुंवर ऋषिजी महाराज सदैव एकांतर उपवास करते तथा सदैव एक ही चदर रखते थे. ऐसे महात्मा उग्र विहार करते २ भोपाल पधारे. भव्य जीवों को खबर होते ही बहुतसे लोग सन्मुख साधु दर्शन के लिये गये. और बडे आदर सत्कार सहित भोपाल शहर में लाये. वहां स्थानक के दारोगे की आज्ञा लेकर

स्थानक में ठहरे. अमृत धारा समान सूत्रकृतांग सूत्र की व्याख्यान रूप वर्षाकर भव्य जीवों को संतुष्ट करने लगे. चतुर्मास काल प्राप्त होने से श्रावकों के अत्याग्रह से वहां ही चातुर्मास किया और धर्म तप प्रभावना वगैरह बहुत होने लगे. भोपाल में धाडीवाल गोत्रीय बडे साथवाले दृढ साधुमार्गीय फुलचन्दजी रहते थे. वे शास्त्रज्ञ व व्रतधारी थे. एकदा व्याख्यान श्रवण करने जाते मार्ग में केवलचंद्रजी मील गये. तब फुलचंद्रजी बोले—" केवलचंद्रजी " तुम्हारी माताने तो इधर ही दीक्षा ली उन के तुम पुत्र होकर भी साधु साध्वी के दर्शन भी नहीं करते हो. यह कैसा आश्चर्य की बात है. अब तो महाराजश्री के व्याख्यान सुनने चलो. ये महाराज बडे गुणवान व विद्वान हैं. इन का व्याख्यान एकवार तो अवश्य ही सुनना चाहिये. यों आग्रह कर केवलचंदजी को स्थानक में ले गये. दोनों महाराजश्री को वंदना कर व्याख्यान सुनने बैठे. उस समय सूत्रकृतांग सूत्र के प्रथम अध्ययन का चौथा उद्देशा चल रहा था. उस की दशवी गाथा महाराजश्रीने बडे बुलन्द अवाज से सुनाइ. " एवं खु णाणि णो सारं, जं न हिंसइ किंचनं ॥ अहिंसा समयं चेव, एतावता विजाणिया " अर्थात् सब मतांतरो के ज्ञान का साराश यही है कि किंचिन्मात्र भी हिंसा नहीं करना. जो किसी प्रकार से हिंसा नहीं करता है

वही ज्ञानी कहलाता है. इस कथन को दृष्टान्त दलीलों से सिद्ध करके श्रोता जनों के हृदय में उस का अच्छा असर जमाया. केवलचंद्रजी तो पहिले से ही दयाद्रहृदयी थे. इस से उन की इन का असर तत्काल ही हुवा. और अपनी शंकाओं का समाधान के लिये महाराजश्री के पास एकान्त में आये, वंदना नमस्कार कर निम्नोक्त प्रकार प्रश्नोत्तर करने लगे.

१ प्रश्न—पूज्य श्री आप का मत दो सो तीन सो वर्ष से ही चला है तो अरिहंत प्रणीत किस प्रकार हो सकता है? उत्तर—अहो भाईजी! नवकार मंत्र तो अनादि काल का है. इसी का पांचवा पद " नमोलोए सव्वसाहूणं " है. इस में साधु का नमस्कार किया है परंतु सम्वेगी अथवा यति को कहीं नमस्कार करने का पाठ नहीं है. फिर नये कौन और पुराने कौन इस का ख्याल किजीये. कल्प सूत्र के कथनानुसार श्री महावीर स्वामी के नाम राशी पर दो हजार वर्ष का भस्मग्रह था. इस के प्रभाव से जैन साधु प्रायः लुप्त प्राय हो गये थे. और जैनाभास बहुत हो गये थे. दो हजार वर्ष पूर्ण होते ही अरिहंत प्रणीत शास्त्रानुसार पूर्वोक्त प्रकार शुद्ध सनातन जैन धर्म की पुनः प्रवृत्ति हुई. इस से इस को

नया धर्म कैसे माना जाय. और भी नया पूराना धर्म का जो तुम्हारा ख्याल है तो क्या नया डुबाता है और पुराना तारता है ? तीर्थंकरादि अपना २ शासन नया ही चलाते हैं. और प्रथम के साधु भी इस का स्वीकार किये बिना मुक्ति में नहीं जासकते हैं. इस लिये नये पुराने का भ्रम मीटाकर जिनोक्त शास्त्रानुसार शुद्धाचार और शुद्ध वर्तन ही सच्चा धर्म आत्माका सुधारा करने वाला होता है. इस को अपनी विवेक बुद्धिसे ही अपन देख सकते हैं. २ प्रश्न–रावणने जिन प्रतामा के आगे नृत्य करने से तीर्थंकर गोत्र उपार्जन किया. क्या आप इसे मानते हैं ? उत्तर–यह कथन मिथ्या है. क्यों की नवपदजी की पूजा में भी कहा है कि "तीजे भव वर स्थानक तप कर जिन वंधो जिन नामो" अर्थात् प्रथम के तीसरे भव मे तीर्थंकर गोत की उपार्जना होती है और रावण मृत्यु पाकर चोथी नरक में गया. चौथी नरक में से निकला हुवा जीव कदापि तीर्थंकर नहीं हो सकता है. यह शास्त्र प्रमाण है. ३ प्रश्न–जंघाचार विद्याचारण मुनी प्रतिमा को नमस्कार करने गये हैं. यह तो सूत्र में कहा है. उत्तर–यह कथन इस तरह नहीं है. अर्थ विपरीतता से ऐसा समजने लगे हैं. तात्पर्य यह है कि वे केवलज्ञानी कथित पदार्थों श्रवण कर छद्मस्थ पने की उच्छरंग से उन को उक्त पदार्थ देखने की इच्छा होती है तब वे भगवान की

आज्ञा का उल्लंघन कर लब्धि फोडकर मानुषोत्तर पर्वत, नंदीश्वर द्वीप वगैरह स्थान जाते हैं. यहां जिन कथित पदार्थों को यथावस्थित देखकर कहते हैं कि " चेइय वंदेइये " अर्थात् धन्य है ज्ञानी के ज्ञान को. उनोंने जैसा प्रकाश किया वैसा ही है. यों ज्ञान की प्रशंसा करते हैं. यदि नमस्कार करने का होता तो नमंस्सइ शब्द का प्रयोग क्यों नहीं करते ? मानुषोत्तर पर्वत पर प्रतिमा नहीं है तथापि वहां पर भी " चेइय वंदेइयं " ऐसा पाठ कहा है. ४ प्रश्न—द्रौपदीनं जिन प्रतिमा की तो पूजा की है क्या ? उत्तर—द्रौपदीने प्रतिमा की पूजा की है. यहां जिन का अर्थ तीर्थंकर देव नहीं होसकता है परंतु मनोज्ञ पति की प्राप्ति के लिये किसी अन्य जिन की पूजा की होगी. स्थानांगजी में तीन प्रकार के जिन कहे हैं तद्यथा—१ अवधि ज्ञानी, २ मनःपर्यव ज्ञानी और ३ केवलज्ञानी. तो अवधिज्ञानी कोइ देवता हो सकता है.. और भी जिन-अरिहंत की प्रतिमा की पूजा की है ऐसा माना जाय तो उस समय उन को सम्यक्त्व भी नहीं था, और सम्यक्त्व नहीं होने से श्राविका भी नहीं थी. क्यों कि सम्यग् दृष्टि के घर में मांस मदिरा नहीं निपजता है. और उस के विवाह में निपजा हैं. इस पर से द्रौपदीने जिन-अरिहंत की प्रतिमा का पूजन किया वैसा किसी भी प्रकार सिद्ध नहीं होता है. ५ प्रश्न—आणंदजी अंबडजी आदि श्रावकोंने भी जिन प्रतिमाकी पूजा

की है तो यह किस तरह हैं ? उत्तर—यह कथन भी मिथ्या है. क्यों कि प्रतिमा से कुच्छ वार्तालाप नहीं किया जाता है और प्रतिमा को कुच्छ आहार पानी नहीं दिया जाता है. जब आनंदादि श्रावकोंने अरिहंत चैत्य कि जिन को अन्य मतीने ग्रहण किये उन से वार्तालाप करने की और आहार पानी देने का नियम किया है. इसलिये यहां भ्रष्ठ साधु समझना परंतु प्रतिमा नहीं समझना. और भी भाइजी ! जो तीर्थंकरों की ही प्रतिमा होती तो शास्त्रमें स्थान २ पर यक्ष की प्रतिमा का वर्णन क्यों किया है. किसो भी श्रावक ने तीर्थंकर की प्रतिमा पूजी हो ऐसा क्यों नहीं चला, सूर्याभ देव विजय पोलिया आदि देवोंने अपने जिताचार अनुसार पूजा की है न कि धर्मार्थे. वहां तो जो कोइ सम्यग् दृष्टि मिथ्यादृष्टि उत्पन्न होते हैं वे सब ही पूजा करते हैं. यदि वे शाश्वती प्रतिमा तीर्थंकरों की होती तो उन के आगे भूत यक्षादि की प्रतिमा क्यों कही. वहां तो गणधर साधुओं की प्रतिमा चाहियेथी. भाइजी ! इन बातों में कुच्छ तत्त्व नहीं है. ९ प्रश्न-मखपर मुख वस्त्रिका सदैव रखने से थूक में संमूर्च्छिम जीवों की उत्पत्ति होती है.इस से मुहपती बांधने से उन जीवों की घात होती है. उत्तर-भगवानने समूर्च्छिम जीवों को उत्पत्ति के १४ स्थानक कहे हैं, जिस में थूकका नाम नहीं है. न मालुम यह पन्नरवा स्थानक कहां स

निकाला ? अंगरखी अंग में ही पहिनी जाती है, पगरखी पांव में ही पहिनी जाती है, वैसे ही मुखपति मुखपर ही बांधी जाती है, इस प्रकार शांतता से सब प्रश्नों के उत्तर श्रवण कर केवलचंदजी बहुत आनंदित हुए. उत्काल ही खडे होकर सम्यक्त्व धारन किया. चौविहार का स्कंध किया. स्थानक में सदैव आने लगे. प्रतिक्रमण पच्चीस बोल का थोक कंठाग्र करते २ वैराग्य में रक्त बने. और अपने वेष का परावर्तन कर साधु होने के लिये स्थानक में जाकर बैठे. घर वालों को यह खबर होते ही वे स्थानक में आये और केवलचंदजी को पकडकर लेगये. परस्पर कहने लगे कि इन के पर भुरकी डाली है वगैरा अपने शब्दोच्चार कर केवलचंदजी को हीजामत स्नानादि कर्म कराया, और स्थानक में जाने का प्रतिबंध किया. भोगावली कर्मोदय से भोपालसे १७ कोश की दूरी पर खेडीग्राम के निवासी छोटमलजी घाडीवाल की सुपुत्री " हुलासा बाइ " के साथ पुनःलग्न संबंध किया. फिर केवलचन्दजी सपत्नी अलग मकान में ही रहने लगे. वहां स्वतंत्र होने से सदैव देवसी रायसी प्रतिक्रमण, चौदह नियम की धारना. महिने में १५ दिन ब्रह्मचर्य वगैरह धर्माराधन करने लगे. साधु ग्राम में होवे तो व्याख्यान श्रवण, ज्ञान सम्पादन, दान दलाली का लाभ यथा शक्ति लेने लगे.

इस तरह अपना संसार व्यवहार चलाते केवलचंद्रजी की पत्नी हुलासाबाइ ने संवत १९३२ के भाद्रपद वद्य चतुर्थी के प्रहर दिन आते पुत्र को जन्म दिया; जिस की वधाइ के लिये बडारन केसरबाइ केवलचंदजी की पास गइ. उस दिन किसी व्यापार में विशेष लाभ की प्राप्ति होने से वे आनंद में बैठे थे. उस वक्त जाकर पुत्र जन्म की वधाइ दी. यह सुन केवलचंदजी खुशी हुए और केसरबाइ को अच्छा पारितोषिक दिया. फिर यथाशक्ति जन्मोत्सव किया. लाभानुसार पुत्र का नाम अमोलकचंद स्थापन किया. दूसरा पुत्र संवत १९३६ के अश्विन मास में हुवा. जिस का नाम अमीचंद रखा. यह वर्तमान में भोपाल में सराफा बजार में सराफी का धंधा करते हैं. अब अमोलखचंद की वय पांच वर्ष की हुइ कि वहां अच्छे पंडित लच्छीरामजी के पास पढाने बैठाया. वहां स्वल्प समय में लेखनकला गणितकला आदिका अच्छी तरह विद्याभ्यास किया.

कितनेक समय पीछे केवलचंदजी को व्यापारार्थ होसंगाबाद सीवनी हल्दे व्यापारार्थ जाना पडा. सीवनी में विशेष निवास होने से अपने परिवार को भी वहां ही

बुलवा लिया. हुलासाबाइ मीवन कसीदा आदि कार्यमें विशेष प्रविण होने से वहांपर फुरसद के समय में वही कार्य किया करती थी. जिस से शरीर में गरमी होने से आंखों दुःखनी हुई. बिमारी वढती देख केवलचंदजी सहकुटुम्ब पुनः भोपाल आये. संवत १९४० के श्रावण मास में हुलासाबाइ का भी आयुष्य पूर्ण होगया. दोनों पुत्रों का पालन करने के लिये कुटुम्बने पुनः लग्न के लिये प्रेरणा की. और केवलचंदजी के ना कहने पर ही मारवाड में सादी करने के लिये दागिने भेज दिये. लग्न निमित्त केवलचंदजी भोपाल से मारवाड जाने लगे. रास्ते में रतलाम आया. वहां परम प्रतापी पूज्य श्री उदयसागरजी महाराज विराजमान थे. उन के दर्शन के लिये उतरे.

रतलाम में छोटे साथ ओसवाल लसोड गोत्रीय कस्तुरचन्दजी श्रावक रहते थे. उनोंने अपनी ३३ वर्ष की और पत्नी को २८ वर्ष की वय में सजोड जावज्जीव का ब्रह्मचर्य व्रत धारन किया था. और वे सदैव चारों तीर्थों की परम हर्ष के साथ यथोचित सेवा भक्ति करते थे. दो पुत्र और हजारों रुपये की संपत्ति होनेपर भी आप निर्दोष भिक्षा-वृत्ति से अपना निर्वाह करते थे. आहार,औषध, वस्त्र,पात्र, शास्त्र आदि साधु के खपने योग्य

वस्तु का योग साधु आदि चतुर्विध तीर्थ के लिये सदैव अपने पास रखते थे. प्रातःकाल होते ग्राम में जितने साधु साध्वी होवे उन के दर्शन करके उन को इच्छित वस्तु की आमंत्रणा करते थे. पूज्य श्री उदयसागरजी महाराज के सन्मुख सदैव दो प्रहर को एक प्रहर पर्यंत नविन २ शास्त्रों व ग्रन्थों का पठन करते थे. यों अंतिम अवस्था पर्यंत धर्माचरण कर अंतिम पांच मास के चतुर्मास में तीन महिने तक आहार का प्रत्याख्यान किया था. ऐसे गुणीजन श्रावक अपने मकान में बैठे थे. उस वक्त केवलचंदजी उस ही रास्ते से जा रहे थे. तब उनोंने बोलाये, अपने मकान में उतारे, आने का प्रयोजन पूछा. केवलचंदजीने अथइति कह सुनाया. तब कस्तुरचंदजी आश्चर्य चकित होकर बोले "विष का प्याला सहज ही ढुलगया अब उसे पुनः भरने क्यों तैयार होते हो. अगर पुत्र के लिये संसार संबंध करने की इच्छा हो तो तुम्हारे दो पुत्र भी हैं और उन के पालन के लिये इरादा हो तो नयी माता से कौन पुत्र सुख पाया है? तुम्हारा यह कार्य मुझे तो अच्छा नहीं मालुम होता है. यह सुन केवलचंदजी का मन डगमगा. वहां से पूज्य श्री के दर्शन करने स्थानक में गये. केवलचंदजी के मनोभाव कस्तुरचन्दजीने पूज्य श्री को दर्शाये. पूज्य श्री बोले कि "एक वार वैरागी बन अब क्या

वनडे वनना उचित है? ” आत्म सुधारे का यह समय सहज में ही आ मीला है उसे क्यों गमाते हो? वगैरह सद्बोध श्रवण कर केवलचंदजीने खडे होकर जावजीव पर्यंत का ब्रह्मचर्य व्रत धारन किया. और वहां से भोपाल लौट आये. * स्वजनो को सब वृत्तांत कहा, सुनकर कुटुम्ब वर्ग बहुत नाराज हुवा, परंतु केवलचदजी तो मौनस्थ ही रहे. और धर्म व्यवहार का साधन करने लगे. संयम ग्रहण की प्रवल इच्छा होने से भोपाल में जो कोई साधु मुनिराज आवे उन से अपनी दीक्षा की वात कहे परंतु केवलचंदजी के पुत्रों का और विपरीत श्रद्धावाले कुटुम्बियों का झगडा देख उन के वचनों का कोइ भी साधु विश्वास करे नहीं

उस काल उस समय में परम पूज्य श्री कहानजी ऋषिजी महाराज के संप्रदाय के परम प्रभाविक पूज्य श्री धनजी ऋषिजी महाराज के शिष्य. १ स्थानकमें उतरना नहीं,

---

* जिस कन्या के साथ केवलचंदजी का लग्न संबंध होने का था वह कन्या भोपाल में अगरचन्दजी के घर में आई. वहां वह बारह माहिने में मृत्यु पाई. यह जान केवलचंदजी को सत्पुरुषों के वचनों में बहुत श्रद्धा हुइ और वैराग्य में दुगुनी वृद्धि हुई.

२ गृहस्थ के वहां वस्त्र पात्र रख कर अन्यग्राम जाना नहीं, ३ आर्याजी से आहार पानी का संभोग रखना नहीं, ४ पींरंडे का धोवन लेना नहीं और अपाड मास सिवाय पडिनने के वस्त्र धोना नहीं यों पांच परिग्रह के धारक * महा वैरागी, शुद्धाचारी, गीतार्थ, क्षमा सागर, स्थविर महात्मा पूज्य श्री खुवा ऋषिजी महाराज पांच साधुओं के परिवार से वृद्धावस्था के कारन सुजालपुर (मालवा) में सकरबाइ के मकान में स्थिरवास विराजमान हुए थे. और उन के वडे गुरुभाइ बालब्रह्मचारी एवंता ऋषिजी महाराज के शिष्यवर्य श्री विनय ऋषिजी महाराज वृद्धावस्था के कारन साहाजापुर(मालवा)में स्थिरवास विराजमान थे. यह महात्मा सदैव दशवैकालिक के चार अध्ययन, पुच्छिस्सुणं की स्वाध्याय और १३०० लोगस्स का कायोत्सर्ग करते थे. इन के शिष्यवर्य कविवर

* जिस समय का यह कथन है उस समय में मालवे में पूज्य श्री हुकमीचंदजी की संप्रदाय के, मारवाड में रत्नचंदजी की संप्रदाय के और तेरे पंथी की संप्रदाय के साधुओंने स्थानक में उतरने में कितनेक दोष स्थापन किये थे. इसी से अन्य पूज्य श्रीने भी स्थानक में उतरने का प्रत्याख्यान किया था. अब तो स्थानक और पौषधशालामें नाम मात्र भेद हैं. उस में स्थानक को तो ताले लगे हैं और नयी पौषधशाला तैयार हो रही है. इस से इस समय यह पक्ष निष्काम है.

श्री पुना ऋषिजी महाराजने सुना कि भोपाल में एक सद्गृहस्थ [illegible] तब उनोंने उसी समय पूज्य श्री खुबाऋषिजी के शिष्य श्री नाथा ऋषिजी महाराज को अपने साथ ले विहार कर भोपाल पधारे. स्थानक में उतरे. तब केवलचंदजी दर्शनार्थ आये. उन के नाम से वाकेफ होकर उन से पूछा कि "मैंने सुना है तुम्हारा परिणाम दीक्षा लेने का है. क्या यह सच हैं? केवलचंदजी बोले कि यह बात सच है. मेरा दीक्षा लेने का भाव संपूर्ण है. परंतु कोई हिम्मत करनेवाला साधु मेरे कुटुम्ब की तरफ से होते हुए परिषह सहन कर मेरा निकाल न हो वहां तक यहां ही रहने का निश्चय करे तो ही यह काम होवे. महाराजश्री बोले इस कार्य के लिये ही मैं यहां आया हूं. अगर तेरे भाव पक्के होवे तो मुझे अन्य किसी की दरकार नहीं है. कार्य सिद्धि करके ही विहार करने का भाव है.

दीक्षा

केवलचंदजी भोपाल में स्थानक के पास माणकचंदजी मुणोत की हवेली में अपने दो पुत्र के साथ रहते थे. और ब्राह्मण रसोई बनाता था. एक दिन किसी कारणवशात् ब्राह्मण आया नहीं तब आप स्वयं चुल्हे पर खीचडी रखकर और बडे पुत्र अमोलक को

वहां बैठाकर व्याख्यान सुनने गये. वह जाकर सामायिक की और विचार करने लगे कि पुत्र व भाइयों सहज में ही आज्ञा देवे ऐसे नहीं हैं तो क्या करना. उस दिन व्याख्यान में दशारनभद्र राजा का कथन आया. उसे सुनकर एकाएक वैराग्य भडक गया. तत्काल ही वहां से उठकर कोटडी में जाकर साधुजी की झोली खोल उस में से पात्रे लेकर फुलचंदजी मोड और कपुरचंदजी पोरवाड के वहां से भिक्षा लाकर स्थानक में आहार करने बैठे. उधर अमोलक अपने पिता की प्रतीक्षा कर रहा था. व्याख्यान उठने पर भी पिताजी आये नहीं, इस से स्थानक में जाकर देखने लगा तो साधुजी के पात्रे में आहार पानी कर रहे हैं. वहां से त्वरित निकल कर मंदिर में अपने काका गोडीदासजी के पास गया. उन को सब हकीगत कह सुनाइ. वे भी खेदित हुए और लोगों में गडबड मचाइ,गोडीदासजी आदि बहुत लोगों स्थानक में आये केवलचंदजी को बहुत ही समजाये; तब उनोंने यही उत्तर दिया कि जहां लग दीक्षा की आज्ञा नहीं मीलेगी वहां लग भीक्षा ही करूंगा और ऐसा ही श्रावक का वेष रखुंगा. इस तरह उन का हठ देख गोडीदासजीने खेडी से रूपचंदजी टॉटिया कि जो अमोलक के मामाजी होवे उन को बोलाये. वे अपनी माता सहित वहां आये. उनोंने भी बहुत

कुच्छ समजाने के लिये कोशिप की परंतु सब व्यर्थ गया. जब किसी का कुच्छ भी उपाय नहीं चला तब सब कुटम्बने एकत्र होकर केवलचंदजी को घरपर बोलाये. अपने व्रतधारी (सामायिक जैसे) श्रावक के वेप में ही केवलचदजी घर आये, कुटम्बियोंने वहां भी बहुत समजाये परंतु एकको सुनी नहीं. तब वे सब बोले कि-जैसी तुम्हारी इच्छा होवे वैसा करो. केवलचंदजीने अपने दोनों पुत्रों और घर की संपत्ति गोडीदासजी और रूपचंदजी के सुपरत की, गोडीदास की पुत्री को तथा बडारन केसरवाइ को जो कुच्छ देनेका था वह दिया. दीक्षा उत्सव के लिये खर्चा करना था वह भी लेलिया और उन कुटम्बियों का आज्ञा पत्र लेकर स्थानक में महाराज श्री के पास आये. दीक्षा उत्सव का कार्य चालु हुवा. पांच दिन तक वरघोडे(वंदोले)निकले और संवत १९४३ के चैत्र शुदी ५ मी को दोप्रहर को सजाइ सजाइ. ६ हाथी. दो पलटन, वेंड वादित्र आदि पांच प्रकार के वादित्र, कोतल घोडे, रथ, सेंकडों श्रावक श्राविका और हजारों जैन व जैनेतर प्रेक्षकों के परिवार से परिवरे हुए, अश्वारूढ वैरागी पर छत्र धराते हुए दोनों बाजु चमर वींजाते वैराग्य के उत्साह से प्रफुल्लित बने हुए स्थानक से निकल कर जुम्मामसजिद, सराफा वजार में होते हुए जुमेराती दरवाजे से निकल कर नवाब साहब के बगीचे में गये. क्षौरकर्म वगैरह कराकर साधु वेष धारन

किया और गुरुजी के सन्मुख आकर वंदना नमस्कार कर स्वजन व पंचों की आज्ञा सहित बडे उत्साह से श्री पुना ऋषिजी महाराजने दीक्षा दी. केवलऋषि नाम स्थापन किया. उस दिन सैंकडो भिक्षुकों को पांव २ हाथ वस्त्र दिया, सब प्रेक्षकों को पतासे की प्रभावना दी. सब गृहस्थ अपने २ घर गये. महाराज श्री—३ ठाने विहार कर सुजालपुर आये. वहां विराजते पूज्य श्री सुखाऋषिजी महाराजको नव दीक्षित सुपरत कर दिया. नव दीक्षित पूज्य श्री की शांत व वैराग्य रसोत्पादक मूर्ति देख कर हर्ष पाये. उन को सातवे दिन छेदोप-स्थापनीय चारित्रीय बनाये तब केवलऋषिजीने पूज्य श्री को ही गुरु बनाये. और अपने परमोपकारी श्री पुनाऋषिजी महाराज श्री की सेवा में रहे. श्री पुनाऋषिजी महाराज का चंद दिनोंमें अकस्मात स्वर्गवास होगया. तब पुनाऋषिजी गुरुवर्य वयोवृद्ध श्री विजयऋषिजी महाराज की सेवा में रहे. बारह महिने पीछे उन का भी स्वर्गवास होगया. तब आप श्री खुबाऋषिजी महाराज की सेवा में रहे. इन दिनोंमें अपनी बुद्धि अनुसार शास्त्र थोकडे का अभ्यासकर तपश्चर्या करने की इच्छा हुइ. प्रथम पचोला किया, वह बहुत कठिनता पूर्वक पूर्ण हुवा. पित्त के उठावसे तबियत घबराने लगी. तब हताश बन गये. उष्णता होने से पारने में तक [छास] का सेवन किया जिस के आधार से बहुत कुच्छ शांति

प्राप्त हुई. तब से पुज्य श्री की आज्ञा मांगी कि मैं छास के आधार से तपश्चर्या करूं ? पुज्य श्रीने कहा जैसे सुख होवे वैसा करो. इसपर से आप छास के आधार से तपश्चर्या करने लगे.

पूत के पग पालने.

अब केवलचंदजी के दीक्षा लेते समय दो पुत्र रहे थे जिस में ज्येष्ट पुत्र का नाम अमोलखचंद था. उस के बचपन के आचार विचार से ऐसा भाष होता था कि—मानों पूर्वभव से ही धर्म साथ लेकर आया हो. वह बालकपन में ही साधुओं के दर्शन से बडा आनंदित होता था. विद्याभ्यास अथवा गृह कार्य से निवृत्त होकर साधु समागम में ही विशेष समय व्यतीत करता था. साधु भी इसपर बडा अनुराग रखते थे. इस की करिबन छ वर्षकी वय मे एकदा परम पूज्य श्री कहानजी ऋषिजी महाराज की संप्रदाय के महंत मुनि राजश्री हर्षऋषिजी महाराज के शिष्यवर्य बालब्रह्मचारी प्रवर पंडितराजश्री सुखाऋषिजी महाराज वहां चातुर्मास के लिये पधारे. उन के व्याख्यान में अमोलख खडे होकर बोला कि-यदि भाइजी आज्ञा दे तो मैं साधुपना, लेवूं. उस समय सब सभा हसने लगी. और कनकमल डोसीने अमोलख का मुंह पकडकर अपनी गोद में बैठा

दक्षिण में धर्म

[illegible] लोग खास,मुख २ मुख वस्त्रिका बंधकर हाथमें कपडे कीझोली बनाकर उसमें कटोरे रखकर छोटे २ बच्चोंके पास गौचरी करता था. उनके सन्मुख बैठकर व्याख्यान सुनाता था. अपनी और अपने लघुभ्राता भी चौटीके बालोंका लोच भी किया था. वगैरह कितनीक धार्मिक प्रवृतियों देखकर घर वाले सब हसते थे. केवलचंदजीके दीक्षा लेते समय अमोलखचंद को भी साथ लेने का विचार था परंतु श्रावकोंका कहना हुवा कि-यदि बालक के झगडे पडोगे में तो तुम्हारी भी दीक्षा अटक जायगी. और अमोलख को भी कुटम्बने लालच देकर उन का चित्त भ्रमित कर दिया था. कितनेक दिन पीछे श्री हर्षाऋषिजी महाराज आठ ठाने से 'भोपाल' पधारे, जिन में केवल ऋषिजी महाराज भी थे, उन के दर्शन के लिये अमोलख आया. उस वक्त हीरा ऋषिजी महाराज कि जिनोंने सुखाऋषिजी महाराज की साथ प्रथम चतुर्मास किया था वे अमोलखचंद से पूछने लगे कि तेरे पिता साधु हो गये. तू कब होगा ? तब उनोंने उत्तर दिया कि—मैं मेरी अग्यारे वर्ष की उम्मर में साधु बन जाऊंगा. और भविष्य ऐसा ही हुवा.

उस समय में दाक्षिण में व्यापारार्थ मारवाड से आये हुअे ओसवाल आदि ज्ञातीके

रिवाज मात्र से धर्म ध्यान करते रहते थे.उस समय कितनेक पतित साधु अथवा श्रावक द्रव्यार्थी दक्षिण में आते थे. वे लोगों को व्याख्यान में कुछ सूत्र ढाल वगैरह सुनाकर अच्छा सन्मान पालते थे.वैसे ही द्रव्य प्राप्ति भी अच्छी होती थी. इन के आवागमन से धर्म का परिचय लोगों को होता रहा और कितनेक स्थल उन के नाम के स्थानक भी दक्षिण में देखे जाते हैं.

एकदा घोडनदी (पूना) में गंभीरमलजी लोढा की स्त्री चंपाबाइ को अपनी पुत्री के बाल विधवा होने से वैराग्य उत्पन्न हुवा. और अपने पति से दीक्षा की आज्ञा मांगी, तब उन का कहना हुवा कि कोई भी साधु साध्वी दक्षिण में पधारे तो मैं तुझे दीक्षा दिलावूं. इस पर से वह बाई सहकुटुम्ब साधु साध्वी को दक्षिण देश पावन करने की विनंति करने के लिये मालवे में गई. उस समय कोटे संप्रदाय के पंडित रत्न श्री छगनजी मगनजी महाराज का चतुर्मास इन्दौर में था. उन को दक्षिण देश पावन करने की विनंती की; परंतु उनोंने इनकार कर दिया. वहां से वह रतलाम आई, वहां प्रवर पंडित अष्टावधानी कविवरेन्द्र श्री त्रिलोकऋषिजी महाराज ठा० ३ और सिरदाराजी आर्याजी

ठा० ५ का चतुर्मास था. उन को भी दक्षिण में पधारने की विनाति की. महाराजश्रीने उपकार का कारन जानकर खुशी दर्शायी. तब गंभीरमलजी पीछे सह कुटुम्ब अपने गांव घोडनदी आये. चतुर्मास पूर्ण हुए पीछे श्री त्रिलोक ऋषिजी, श्री प्यारा ऋषिजी तथा श्री कंचन ऋषिजी यों ठाने ३ और पांचों ठाणों से आर्याजी विहार कर इन्दौर होते हुवे ब्राहानपुर आये. इस के आसपास गांवों में दिगम्बर के अंतर्गत तारन स्वामी का एक जैन पंथ चलता है. ये लोग गोला लाल जाति के वणिक है, ये मात्र शास्त्रों को ही मानते पूजते हैं. इन में से बहुत लोगों को उपदेश देकर साधु मार्गीय बनाये. वहां से आगे धूलिये होते हुए दक्षिण में विचरने लगे. श्री त्रिलोकऋषिजी महाराज दक्षिण में गये हैं ऐसा समाचार सुनकर श्री छगनजी महाराज ने भी दक्षिण की ओर विहार किया. इनोंने अहमद नगर में चौमासा किया और श्री त्रिलोकऋषिजी घोड नदी पधारे. महाराज श्री पधोरसन श्रावक वर्ग बहुत खुशी हुए. सन्मुख जाकर लाये और बडे बजार में उतार कराया. यह अवसर देखकर चम्पाबाइने अपने पति को भूत पूर्व बात का स्मरण कराया. और

उस समय मारवाड देश के आवा ढूंढी के 'बोते' गाम के निवासी स्वरूपचंदजी ओसवाल पिरगल जाति के सह कुटुम्ब व्यापारार्थ दक्षिण में अहमदनगर जिल्लेके माणकदौंडी ग्राम में आकर रहे थे. और वहां से वे अपने पुत्र सहित व्यापार संबंधी कार्य से घोडनदी आये थे. वहां दीक्षा उत्सव देखकर बडे खुशी हुए. और वैराग्य उत्पन्न हुवा. महाराज श्री को दीक्षा लेनेकी विज्ञप्ति की. महाराज श्रीने कहा कि " धर्म कार्यमें विलम्ब नहीं करना " दोनों बाइयों की दीक्षा के साथ तुम्हारी भी दीक्षा हो जायगी. वहां के श्रावक वर्ग भी यह नविन समाचार सुन खुशी हुवे. और उन के कुटुम्बी कीआज्ञा मगवाकर दोनों पिता पुत्र का भी दीक्षा उत्सव चालु किया, यों संवत १९३६ के अषाढ शुदी ९ को चारों का दीक्षा उत्सव बडी धूमधाम से हुवा. और चारों के नामाभिधान—१ सरूपऋषिजी, २ रत्नऋषिजी, ३ चंपाजी और ४ रामकंवरजी रखा. नविन दीक्षित सहित वहां चतुर्मास किया, चतुर्मास पूर्ण हुए पीछे महाराजश्रीने विहारकर पुना, सतारा वगैरह बहुत छोटे बडे ग्रामोंके हजारों मनुष्यों को साधुमार्गीय श्रावक बनाये. आचार विचार का बहुत ही सुधारा किया. महाराजश्री त्रिलोक ऋषिजीने प्रथम चतुर्मास घोडनदी, दूसरा अहमदनगर, तीसरा आम्बोरी, चौथा घोडनदी

और पांचवा चौमासा अहमदनगर करने पधारे. परंतु काल की गति गहन है. वहां महाराजश्री को अकस्मात भयंकर व्याधि प्रगट हुइ और श्रावण मास में ३६ वर्ष का साधुपना पालकर मात्र चालीस वर्ष की वय में ही इस अनित्य देह का त्याग कर स्वर्गवासी बने. इन के स्वर्ग गमन का समाचार सुनकर पूज्य श्री उदयसागरजी महाराजने फरमाया कि-भारतवर्ष का सूर्य अस्त होगया. इस महात्मा के वियोग से चारो तीर्थ में बडा ही दुःख हुवा.

चतुर्मास पूर्ण हुए पीछे महाराजश्री के साथ के साधु साध्वियोंका मालवे में जानेका विचार हुवा, तब श्री सरूपऋषिजी महाराज रत्न ऋषिजी महाराज से बोले-कि मेरी वृद्धावस्था होनेसे मैं विहार नहीं कर सकता हूं और तुझे मालवे में साधु के साथ जाना उचित है. तेरी बाल्यावस्था होने से मालवेमें विद्वान मुनियोंकी संगति से ज्ञानादि गुनों की प्राप्ति होगी और अपना आत्मसुधारेके साथ अन्यजीवों का उद्धार भी कर सकेगा. गुरु आज्ञा प्रमाणकर श्री रत्नऋषिजी महाराज मालवे पधारे. और पूज्य श्री खुबाऋषिजी महाराज तथा श्री हर्षाऋषिजी महाराजश्री की सेवा में रहकर ज्ञानादि गुणकी प्राप्ति कर अच्छे पंडित बने.

श्री रत्नऋषिजी महाराज विहार करते २, रतलाम पधारे. वहां वृद्धीचंदजी गादिये ने अपनी ३० वर्ष की वय में और उन की पत्नीने २६ वर्ष की वय में अपनी सब संपत्ति अपने भाइ को देकर दीक्षा धारन की. वृद्धिऋषिजी श्रीरत्न ऋषिजी महाराज के शिष्य बने. और इन की पत्नी मानकवरजी श्री हीरांजी की शिष्यणी बनी. [संवत १५४२ चैत्र]×वहां से विहार करते पंडित मुनिवर श्री रत्नऋषिजी महाराज, श्री बरधी ऋषिजी, महाराज, श्री डूंगा ऋषिजी महाराज और श्री केवल ऋषिजी महाराज चारों ठाने भोपाल पधारे. वहां सुनने में आया कि रतलाम में श्री बदीजी आर्याजीने अपनी ९० वर्ष की उम्मर व ७० वर्ष की दीक्षा पालने संथारा किया है. तब वृद्धीऋषिजी और डूंगा ऋषिजीने तो रतलाम की और विहार किया. और श्री रत्नऋषिजी व श्री केवलऋषिजी महाराज इच्छावर पधारे. यहां श्री केवल ऋषिजीने छास के आधार से १३ उपवास किये थे.

× श्री वृद्धीऋषिजी पीपलोंदे के चतुर्मास में शरीर में अकस्मात व्याधि होने से दृढ मन से कायोत्सर्ग में बैठे २ ही काल कर गये इन के शिष्य श्री वेलजी ऋषिजी हुए. ये १७ वर्ष पर्यंत मात्र छास के आधार से ही रहे. ये एक ही चदर रखते थे. और पटलावद में स्वर्गगामी बने.

उस वक्त अमोलकचंद भोपाल से खेडी गाम में अपने मामा के पास गया था. इच्छावर से सोभागमलजी मूथा कि जो अमोलकचंद के मासा होते हैं. उनोंने खेडी समाचार कहलाये कि अमोलक को साथ लेकर महाराज के दर्शनार्थ जरूर आवो. सरूपचन्दजी को अवकाश नहीं मीलने से अपने मुनीम के साथ अमोलख को इच्छावर भेजा. वह स्थानक में आकर साधु दर्शन कर अति प्रसन्न हुवा. रात्रि वहां ही रहने का विचार किया. और मुनीम पीछे खेडी चले गये..

इस अरसे में महाराजश्री के पास बालचंद नाम का बगेरवाल वनिया दीक्षा लेने का उम्मीदवार था. वह अमोलक से बोला अपन दोनों ही दीक्षा लेवे. तुम पहिले दीक्षा लेकर मेरे बडे बनजावो. अमोलकने यह वात मान्य की, वालचंदने कैंची लाकर शिर के वाल काट डाले. तब उस को अमोलकने सुवर्ण मुरकी व चांदी के हाथ पांव के कडे दिये. प्रातःकाल साधु के कपडे निकालकर उन पर साधु के लिखने के हिंगलक से स्वस्तिक किये, साधु लिंग धारन किया. दो पुंजनी का रजोहरण बनाया, इस तरह संपूर्ण साधु वेष पहिन कर महाराजश्री के सन्मुख खडा

हुवा. महाराज देख आश्चर्य चकित होगये. तब श्री केवलऋषिजी बोले कि इस को आज्ञा की कोइ विशेष जरूर नहीं है. परंतु कलह होने का संभव है. श्री रत्नऋषिजी बोले कि लोगों का क्लेश तो मैं संभाल लूंगा और कुटुम्ब के झगडे को तुम संभालना. केवल ऋषिजीने यह बात कबूल की. इस पर से बालचंद की आज्ञा लेकर अमोलक को संवत १९४४ के फाल्गुन वदी २ गुरुवार को दीक्षा दी और अमोलक ऋषि नाम स्थापन किया × उस वक्त मैंने श्री केवल ऋषिजी का शिष्य होने का कहा. तब केवल ऋषिजी बोले—संसारिक पुत्र का पक्ष होने से मैं इसे चेला बनाना नहीं चहता हूं. ' श्री रत्नऋषिजी बोले कि' पूज्य श्री खूबाऋषिजी के पास चलें, उनकी इच्छा होगी उनी का शिष्य इस को बनावेंगे, अमोलक ऋषिको साथ ले बाहिर व्याख्यान मंडप

× दीक्षित पुरुष का जो यह नाम है वह मैं ही हूं स्वतःका जीवन स्वतःके हस्त से लिखा देखे तो आत्मश्लाघा का दोषारोपण करे उनके लिये-अनिकसेनादि छे भाइओं में से किसी साधुने देवकी राणी के सन्मुख और अनाथी निर्ग्रन्थ ने श्रेणिक राजा सन्मुख.इत्यादि ने प्रसंगानुपेत अपने जीवन का वर्णन किया उसे आत्म श्लाघा नहीं कही जाती है. तैसे ही यहां भी समजना. तथा स्वतःका सत्य जीवन स्वयं जैसा वर्णवेगा तैसा अन्य नहीं वर्ण कर सकेगा.

में आकर बैठे, लोगों दर्शनार्थ आने लगे और बालक साधु को देख २ आश्चर्य चकित होने लगे और पूछने लगे कि-यह कौन हैं ? महाराजश्रीने यथा उचित उत्तर दिया जिस से लोगों भडक २ कर पीछे जाने लगे. ग्राम में वात का प्रसार हुवा, मूवाजी भी सहकुटुम्ब घबराये और स्थानक पर पोलीसों का प्रहरा बैठाया, तत्काल सेंडी से रूपचन्दजी भी घबरा कर तत्काल आये बहुत लोगों के साथ स्थानक में आकर घरचलने का बोले. तब मैं बोला मामाजी ! मेरा मन घर में नहीं लगता है मैं तो मेरे भाइजी के साथ जाऊंगा. रूपचन्दजी, मेरा हाथ खेंचने लगे तब धर्म प्रेमी भाइजी पन्नालालजी बोले कि-झटका झूमी करना अच्छा नहीं है, समझा कर लेजाओ. रूपचन्दजी ने सिरकार में फिरीयाद की हाकम के पूछने से पन्नालालजी ने उत्तरदिया कि-उस लडके के पिता साधु बने हैं वे यहां आये हैं उन के साथ वह लडका जाना चहाता है; यह उस के मामा और मासा है उस लडके को जाने नहीं देते हैं. इतना सुन हाकम बोला—पिता के साथ फरजंद जावे इस में क्या हरजा है. यों कह स्थानक से पोलिसका पहेरा उठालिया. उसी वक्त तीनों साधु विहार कर सिहोर आये. वहां उस बालचंदको मंदिरमार्गीने भमाकर किसी के यहां नोकर रखा दिया. सिहोर से, विहार कर सुजालपुर आये. पूज्य श्री के दर्शन कर

परमानन्द पाये पुज्य श्री छोटे साध को देख बहुत खुशी हुवे और कहा कि तुम तो उग्र विहार करनेवाले हो. व्याख्यानी हो आर भी शिष्या बना लोगे. परंतु यह चेना ऋषिजीकी नेसराय में है.यों कह मुझे पुज्यश्री जी के जेष्ट शिष्यवर्य अर्धांग वायुसे अपंग आर्य मुनिवर श्री चेना ऋषिजी का शिष्य बनाया.

कुछ काल बाद 'श्री केवलऋषिजी ने' मुझ को साथ ले विहार किया. सारंगपुर आगर, कानोड, बडोद, गंगधार, सीतामहु हो मंदसोर आये. वहां सुना, कि श्री चेना ऋषिजी महाराज स्वर्गवासी बन गये, मंदशोर से जावरे आये वहां मेरे शिर के बाल बहुत बढ जाने से अक्षय तृतीया का प्रथम लोच किया. वहां श्री हुकमचंदजी महाराज के समुदाय के स्थविर मुनिराज श्री राजमलजी महाराज के दर्शन किये. वहां से रतलाम आकर श्री वृद्धि ऋषिजी ढुंगा ऋषिजी से मिले. श्री हुकमचन्दजी महाराज के समुदाय के जग विख्यात परम प्रतापी श्री उदयसागरजी महाराज के और श्री धर्मदासजी की समुदाय के बहुत वृद्ध पूज्य श्री मोखमचन्दजी महाराज के दर्शन किये, सुजालपुर से पुज्य श्री के आज्ञा आई कि चारों साधुओं को एक स्थान चौमासा करना. गुरु आज्ञा से चारों साधुओंने खाचरोद चौमासा किया. चौमासा उतरे पीछे श्री केवलऋषिजी और मैं यों दोनों

ठाने उज्जेन आये,वहां स्थविर मुनि श्री रामरत्नजी महाराज के प्रसिद्ध वक्ता पन्नालालजी,तपस्वी जी केशरीमलजी के दर्शन किये, वहां से मगसी हो साजापुर आये. वहां पुज्य श्री खुबा ऋषिजी, महाराज भी पधारे थे उन के दर्शन कर प्रसन्न हुअे वहां से सुजालपुर, आये फिर पुज्य श्री के साथ भोपाल गये,वहां से पुज्य श्री,सुजालपुर, पधोरे और केवल ऋषिजी और मैं सिहोर आसटे मगरदे देवास हो इन्दोर आये. वहां मेरे उदरव्याधी के औषधोपचारार्थ चौमासा किया. वहा भाद्रव महिने में सुनने में आया कि पुज्य श्री खुबा ऋषिजी, महाराज के शरीर में प्रबलव्यधी होंने से सहाजापुर से श्री हर्षऋषिजी महाराज सुजालपुर पधारे, पुज्य श्री आलोचना निन्दना कर दो दिन की सेंथना कर श्री हर्षऋषिजी के सुपरत गच्छ का भार कर स्वर्ग पधार गये यह गुरुवियोग के समाचार सुन बहुत खेदित हुअे चौमासा उतरे गुरुभ्रात से मिलनें सुजालपुर गये. वहां से, ब्यावर गुना, गुगलछेबडा, भानपुरा रामपुरा, मनासा हो प्रतापगड, चौमासा किया इस चौमासे में श्रावको के अत्याग्रह से मेरे पास व्याख्यान प्रारंभ कराया चौमासे में श्री केवलऋषिजी महाराज मुझे बोले तू स्थानक में उतरने के प्रत्याख्यान कर, मै बोला मैं अभी बालक हु भविष्य में यह प्रत्याख्यान किस प्रकार निभेंगे, आपके साथ तो आप रहोगे उस ही स्थान

में रहुंगा परन्तु तपस्वी जीने इस अर्जी को कबूल की नहीं और एकल विहारी बने तपस्वीजी वहां से विहार कर धामणोद पधार गये.

उस वक्त दरोट ग्राम के निवासी भेरूलालजी के पुत्र अमीचन्दजी को बाल्यावस्थामें वैराग्य भाव प्राप्त होने से उन को मगरदे में लेजा कर बालब्रह्मचारी पंडितराज श्री सुखाऋषिजी महाराज के शिष्य बनाये और आप का दीक्षा लेने का अवसर नहीं होने से श्रावक का भेष धारन कर रतलाम गये. वहां श्री हर्षा ऋषिजी महाराज के पास दीक्षा धारन की. उन का चतुर्मास उस वक्त प्रतापगढ से पांच कोस 'सोवागपुरे' में था. श्रावकोंने उन को बोलाये और उन के साथ मुझे कर दिया. वे मुझे साथ ले धामणोद गये, श्री केवल ऋषिजी की आज्ञा ले कर मुझे अपने साथ रखा. श्री भेरू ऋषिजी और मैं पिंपलोदे सुखेडे जावरे हो रतलाम गये. पूज्य श्री उदयसागरजी महाराज के दर्शन किये. रतलाम में मैंने व्याख्यान वांचा उस की महीमा सुन पूज्य श्री जीने शास्त्र विशारद श्री मुन्नालालजी महाराज को बोला कर कहा कि इन को शास्त्रार्थ की धारणा कराओ. तब श्री मुन्नालालजीने सदैव दो प्रहरको एकेक घंटा परिश्रम ले बहुतसे शास्त्रों के गूह्य रहस्यों-कुंजीयों रूप धारन कराइ व पाने में

लिखाइ समजाइ. मेरे व्याख्यान से संतुष्ट हो अमरचन्दजी पीतलीयाने भी श्रावक, भवानजी को थोकडे सिखाने का कहा. यों एक महिने में वहां अच्छे ज्ञान की प्राप्ती हुई. वहां से विहार कर प्रतापगढ आये वहां चतुर्मास किया. चौमासे उतरे बाद बोरखेडे आये वहां व्याख्यान सुन पन्नालाल श्रावक बोला कि-मुझे आप का शिष्य बनाइये. तब मैंने पूछा तुझे इतना शीघ्र वैराग्य होने का क्या कारन? उसने कहा मैं दो वर्ष से कृपारामजी महाराज के शिष्य रूपचन्दजी महाराज के पास हुं, उनोंने मुझे प्रतिक्रमण सिखाया परन्तु उन के पास ज्ञान कमी होने से मैं आप के पास ही दीक्षा लेना चहाता हुं. मेरी वय छोटी (१८ वर्ष) है इस लिये ज्ञानाभ्यास आपके पास अच्छा होगा, तब भेरुऋषिजी बोले ठीक है. वहां से उत्तरवाडे आये, यहां के श्रावको ने पन्नालालकी माता को बोलाइ, उस को समझाने से वह बोली—इन महाराज के पास पन्ना दीक्षा ले तो मेरी आज्ञा है. वहां उत्सव से दीक्षा दी. (सं १९४८ फाल्गुन) पन्नाऋषिको साथले जावरे आये, वहां महात्मा श्री रत्नचन्दजी अध्यात्मी जवहरलालजी काव्वरेन्द्र श्री हीरालालजी वादीविजय नंदलालजी तपस्वी माणकचंदजी, विद्वद्वर देवीलालजी तपस्वी वगैरा साधुओं के दर्शन किये तब नन्दलालजी बोले कि पन्नालाल को साथले यहां क्यों आये? क्यों की यहां

रूपचंदजी हैं घो इसे भ्रमालेंगे तब मैं बोला—कुछ हरकत नहीं दोप्रहर को रूपचंदजी आये और कहने लगे मैं गुरुवियोग से बडा दुःखी हो रहा था, मुझे पन्नलाल का बडा आश्रय था उस ही वक्त पन्नाऋषि को समझाकर रूपचंदजी के सुपरत करदिया. यह देख सब साधु बडा ही आश्चर्य पाये, और श्री नंदलालजी श्री, देवीलालजी श्री गनेममलजी और भेरूऋषिजी भी मेरी साथ विहार करते सोत्रागपुर आये. वहां श्रावको के अत्याग्रह से श्री देवीलालजी श्री गणेसमलजी और श्री भेरुऋषिजी मैं यों चारों ने एकही मकान में चतुर्मास किया. वहां देवीलालजी ने मुझे ज्ञानाभ्यास के लिये अपने में रहने का कहा, यह समाचार प्रतापगढ गये, वहां उसवक्त प्रतापगढ में महाप्रतापी महासतीजी श्री लछमाजी की पाटवीय शिष्यनी प्रभाव शाली श्री सोनाजी महासतीजी का चौमासा था, उनोंने जाना कि रखे अपनी सम्प्रदाय का साधु अन्य में चलाजाय; इसलिये उसवक्त श्री रत्नऋषीजी वृद्धीऋषिजी डोलाऋषीजी का चौमासा मन्दशोर था उनको चौमासा उतरे बाद प्रतापगढ बोलाये और चुन्नीलालजी कंदोइको सो वागपुरे भेजकर श्री भेरूऋषिजी और मुझ को भी प्रतापगढ बोलाये. तब से मैं श्री रत्नऋषिजी महाराज के साथ विचरने लगा.

प्रतापगढ से जीरण हो नीमच आये. वहां श्री रत्नऋषिजी, महाराज के प्रभाव शाली व्याख्यान से श्रोतागण के चित्त बहुत ही आकर्षित हुवे १४०० दया करने का नियम वगैरा बहुत उपकार हुवा. उस वक्त वहां वादीविजय नन्दलालजी साधु का आठ ठाणे से आगमन हुवा. श्री रत्नऋषिजी महाराज ने. कहाकि अब आप व्याख्यान फरमावे. तब श्री नन्दलालजी बोले कि आप ही का व्याख्यान चालू रखीये. यों दोनो का व्याख्यान अटका, परिषद भराइ तब श्रावकों के आग्रह से श्री रत्नऋषिजी महाराजने मुझे व्याख्यान देने की आज्ञा दी. मैंने उत्तराध्ययनजी के प्रथम अध्ययन की २२ वी गाथा क व्याख्यान सुनाया. श्री रत्नऋषिजी महाराजने जीतमलजी चोदरी से पूछा व्याख्यान कैसा बचा ? जीतमलजी बोले सज्झाय तो अच्छीसुनी. यह वचन मुझेतीर समान लगा, श्री रत्नऋषिजी महाराजको भी इस वचन का वडा ख्याल हुवा तब से श्री रत्नऋषिजी महाराज आगे जिन २ ग्रामों में विहार करने लगे तहां रात्रि को मेरे पास व्याख्यान दिलाने लगे, आप भी व्याख्यान देती वक्त अमोलक को पास बैठाने लगे. नीमच से यावदगये तहां स्थविर श्री चौथमलजी महाराज के दर्शन किये. उनोंने भी ज्ञान देने की कृपा की. उन के पास सदैव प्रतिक्रमण किये बाद, एकेक थोकडा धारन

किया. तथा प्राचिन पत्रों से मंगल आदि का लेख भी किया. कितनीक शास्त्रों की बाता भी धराइ. वहां से चीतोडगड आये, वहां प्राचीन किल्ला कीरस्थंभ वगैरह का अवलोकन किया. वहां से भीलोडे आये वहां दश वर्ष से फक्त तक के आधार से रहनेवाले तपस्वी श्री बेनीरामजी महाराज के दर्शन हुओ. उन से भी ज्ञान चर्चा में बहुत नवीन ज्ञान प्राप्त किया. यहां से श्री वृद्धिऋषिजी, और डुगा ऋषिजीने, मारवाड के तरफ विहार किया. और श्री रत्न ऋषिजी वैगैन गंगापुर, राजमी पडजन सनवाड कंठालें भीडर कानड वगैरा वडीसादडी हो छोटी सादडी में चौमासा किया. उक्त ग्रामों में तेरेपंथी साधुमार्गी श्रावकों की वस्ती बहुत होने से उन के साथ में तेरेपंथी के धर्म के रहस्य से वाकिफ हुअे. वहां से मंदशोर, इग्गोद वगैरा ग्रामों में फिर प्रतापगड चौमासा किया. वहां से वागड देश में गये. धरीयावद पारसोला नरवार! वांसवाले आदि ग्रामों में फिर कर धरीयावद चौमासा किया. इस देश में जैन दिगम्बर धर्म के पालने वाले हुमड वानिक के १८००० घर कहलाते हैं, दिगम्बर धर्म, के अनेक शास्त्रों पढने में आये. महाराजजी पंडितों का भी मुकाबला हुआ सच,को जोडकला करते देख जोड कला करने का प्रेम हुआ तब कुछ रजोडक् सा करने लगा—कवीताओ बनाने लगा.यहां हाथीमलजी

के पास कुछ ज्योतिष शास्त्र का अभ्यास किया दिगम्बर धर्म के अच्छे अनुभवी बने. वहा से सलाने बाजने कुशलगड से नींबडी आये निंबडी से विहार करते अभिग्रह धारन किया की आज जहां दिन अस्त हो वहां रहना. श्यामतक ३२ मैल (१६ कोस) आये. ग्राम नजीक नहीं होने से खेत में वटा वृक्ष के नीच रात्री रहे. पश्चात रात्रि को मैं अपने नित्यानियम प्रमाने ध्यानरत हो बैठा तब काला पशुने अगुठ को जबान लगाइ. आखों खोल देखतेही वह चन्द्रप्रकाशमे जाता हुवा देखाया. दूसरे दिन सोले मइल गोधरा आये. मंदिर मार्गी एक दाना श्रावक मिला उस ने उपाश्रय बताया ? उस में रहे. यहां मंदिर मार्गी श्रावको के ग्रहमें भिक्षार्थगये उन को यतीयों का विशेष प्रसंग होने से आहार के सूजते असूजते का विचार कम होने से बहुत घरो में फिरने से शुद्ध आहार पानी का जोगवना. फिर ५-७ काठीयावाडी साधु-मार्गी श्रावको के घरका भी पता लगा. दूसरे दिन दो प्रहर का वहां से विहार कर १० मैल पंचमहल आये. यहां भी गोधरा प्रमानेही हुवा. वहां से दूसरे दिन आहार पानी कर विहार किया १० मैल पर खांखरे ग्राम में रात्रि रहे. वहां से प्रातःकाल निकल १४ मऊ बडोदरे आये. बहुत थकगये. फिरते २ एक मंदिर मिला. वहां के यतिने कहा नांवडेकी पोलमें हिम्मतमल दुढिये के वहां जाओ.

पूछते २ लींबडे की पोल में आये.[*] वह पगंत जेमने बैठीथी, पीछे फिरे एक दरियापारि सम्प्रदाय का श्रावक मिला, उसने एक टूटे मकान में उतारे. प्रात:काल श्रावक आये. व्याख्यान सुन खुशी हुवे. और कहने लगे कि—थोडे दिन पहिले तीन मारवाडी साधु आये थे उन को उपाश्रय में उतारेथे वे भंडार का ताला तोड शास्त्र ले भग गये उनको पकडे. और दंडवर्षकी कैदकराइ+इसलिये आपको उपाश्रयमें उतारे नहीं. रात्रि को लींबडी से कागद आया आप के समाचार लिखे हैं. आप उपाश्रय में पधारो. तव उपाश्रय में गये. वहां ८ दिन रहकर विहार किया. चार गाउ छावनी में आये, वहां सब मंदिरमार्गी श्रावको की वस्ती होने से बोलाने से भी कोइ बोला नहीं. वहां आगे दो गाऊपर एक गामडे में से थोडीक खीचडी गरमपानी मिला. उसे भोगव नदीका पाप बचानेको उ चक्कर खा कर वगो के पुल ऊपरसे उतरे, वसोमें भी मंदिर मार्गी श्रावको की वस्ती होने से बोलाते हुभे भी कोइ श्रावक बोला नहीं. वहां से दो गाउ जाकर एक ग्राम में विष्णव के मंदिर में रात्रि रहे. रात्रि को पुजारी बोला भूके होवे तो सीधा सराजाम लेवो, रसोई बनावो. जवाब दिया हम जैनी साधु हैं न तो रसोइ

+ फिर मालुम हुवा की वे रघुनाथजी की टोली में के थे.

बनाते हैं और न रात्रि को कुछ खाते पीते हैं. प्रातःकाल श्री रत्न ऋषिजी महाराज बोले—इस देश में राग द्वेष बहुत है इस लिये पीछे मालवे चलें. मैंने कहा अब आये हुए तो देश देख लेना चाहिये, यों कितना ही वार्तालाप हुवा. बाद छ गाउ विहार कर बोरसद आये. वहां भावसार जाति के साधुमार्गी श्रावकोंने उतरने को उपाश्रय खोला उस में हंडे गोले लगे देख पूछा किस का उपाश्रय है, उनोंने कहा "आपणोज छे" वहां बाहिर पडशाल में रहे, दुपहर को नाथाभाइ लहिये आये उन के पास एक हंडी खोला कर बताई, उस में कितनी मक्खीयों मरी निकली, उन को समझा कर सब हंडी यों खोला कर एकान्त में रखाइ. यहां श्री रत्नऋषिजी, महाराज को एकान्तर बुखार आने लगा. औषधोपचार के लिये पद्रे दिन रहे, यहां दरियापुरी सम्प्रदाय के महात्मा श्री पुरुषोत्तमजी ईश्वरलालजी, आदि आठ ठाने मे पधारे, एक ही उपाश्रय में रहे. इनोंने रात्रि पूर्ण करने वाले नक्षत्रो के ताराओं को प्रत्यक्ष बताकर पहचान कराई सूर्य मडल का यंत्र भी खूनी वाला लिखादिया. चारदिन ज्ञान गम्मत में भेले रहे.

जिसवक्त पुज्य श्री कहानजी ऋषिजी महाराज के दो विद्वान शिष्य श्री तारा-

ऋषिजी, और श्री काला ऋषिजी, में पूज्य पद्दी बद्दल वार्तालाप हुवा तब श्री तारा
ऋषिजी गुजरात में पधार गये. वहां साधुओं की सम्प्रदाय के पुज्य पद्दी पर स्थापन
किये गये और मालवे में पुज्य काला ऋषिजी स्थापन किये गये. पुज्य श्री ताराचंद
ऋषिजी, के सम्प्रदाय के पुज्य श्री भानजी ऋषिजी के शिष्यों गुजरात में इसवक्त
विचरते हैं. ये खंभात का सिंघाडे के नाम से गुजरात में प्रसिद्ध हैं. अपनी
सम्प्रदाय के मुख्य क्षेत्र का अवलोकन करने के लिये श्री रत्नऋषिजी
और मैं बोरसद से खंभात आये, वहां छगनऋषिजी का मुकाबला हुवा. उनोने खंभात
का शास्त्र भंडार बताया. यहां कितनेक ताडपत्र पर लिखित प्राचीन सूत्रों बहुत सुंदर
और पडीमात्रा की लिपी वाले अवलोकन करने का अपूर्व अवसर प्राप्त हुवा. और भी
सम्प्रदाय के आचार संबंधी कितनेकबातों का खुलासा मिला. वहां से खेडे हो अहमदाबाद
आये. यहां साधु मार्गीयों की तीन सम्प्रदाय वाले श्रावकों की वस्ती अच्छी है.
सारंगपुर के उपाश्रय में (छकोटी) खंभात संघाडे के और लींबडी सम्प्रदाय के
साधुओं का चतुर्मास होता है, और दरियापुरि (आठ कोटी) सम्प्रदाय के नाम से
प्रसिद्धी में आइ हुई पुज्य श्री धर्मसिहजी की सम्प्रदाय के साधुओं का यह

मुख्य क्षेत्र है यहां लींबडी सम्प्रदाय के पंडित श्री उत्तमचन्द्रजी महाराज की मुलाखात हुइ. उसवक्त पुज्य श्री रघुनाथजी की सम्प्रदाय के (मारवाडी साधु) पंडित श्री सोभागमलजी का भी यहां आगम हुवा था, उनका भी मुकाबला हुवा. यहां छकोटी आठ कोटी श्रावक की सामायिक के पक्षपाती साधुओं बन अलग २ सम्प्रदायों का झगडा चलता है. एकदा कचरादास गोपालदास' जैन बुकसेलर दर्शनार्थ आये, उन को चेताया कि तुम साधुमार्गीय की पुस्तक में मंदिरमार्गीय का विषय क्यों छपाते हो? उनने कह कि-"साधुमार्गीयमां एहवा ग्रन्थकार ही कोण छे?" यह शब्द सुन मेरे मनमें ग्रन्थ रचने का विचार हुवा. अहमदाबाद से, प्रतिज गये, यह भी दरियापुरी सम्प्रदायका क्षेत्र है. यहां शास्त्रज्ञ लल्लुभाइ थे उन के पास जम्बुद्वीप प्रज्ञप्ति, बांची जिस में कुलोपकुल नक्षत्रों की अच्छी समझ हुई. वहां से कलोल अहमदाबाद हो खेडे चौमासा किया. गुजरात में बाजरी व तेल का अधिक भोजन होने से गरमी की व्याधि हुई. औषधोपचार से शांति हुई. वहां से खंभात हो आशर ग्राम के पास महीनदी को नावा से पार हो 'अमोद, भरूचबदर' आये. ताप्तीनदी को पुल से उतर अंकलेश्वर हो सुरत बंदर आये. संग्रामपुरे में रहे, यहां भगाभाइ वकील बोले की मैं तो कचहरी में भी

अतिक्रम' व्यतिक्रम अति.चार अनाचार के न्याय से गुन्हे का निकाल कराता हूं. आगे दक्षिणकी तरफ विहार करते बिलीमोरे तक रेलवाइ के लेनपर चलकर आये, यहां तक भग्गुभाइ वकील भी पहोंचाने आये थे. वहां से गाडी रास्ते से वास दे आये. प्रातःकाल दहीपुरी व पानी ग्रहन कर दो कोस आकर आहार पानी भोगव लिया. आगे सतपुडा पहाड का उलंघन करते श्याम के छ पहाडों उलंघन कर अंदाज १४ कोस पर आये. वहां दिन थोडा रहने से एक कलाल की झोंपडी मीली उस में रहना अनुचित समझ आम्ब के वृक्ष तल रहे. चावलों का पराल कलाल की आज्ञा से ग्रहण कर शीत से वचने उस के बिछाने में रात्रि व्यतीतकी. प्रातःकाल पांच कोस पर एक पहाड उलंघन कर आये. वहां कुछ एक ग्राम में सेवकों के घर थे वहां आहार पानी का जोग बना. वहां से दो प्रहर को विहार कर चौसाले आये वहां ८ श्रावक के घर थे वहां रहे. बहां से वडीवनी हो आंम्बे आये. वहा रहने का मौका नहीं देख दो कोस पर दिगम्बरीयों का तीर्थ स्थल—ग्राम था वहां आये. उस वक्त वहां यात्रा थी. उत्सव हो रहा था, वह मुनीन्द्रकीर्ती भट्टारकजी साधु का आगम सुन खुशी हुवे, श्रावकों से कह उतरने को मकान दिलाया. खुद के भोगवने को आया हुवा आहार अपने हाथ से वेहराया। कितनाक वार्तालाप भी उन के साथ हुवा

भट्टारकजी विद्वान गुनी जन थे. वहां से नासीक आये, फाल्गुन चौमासिक पर धर्मोपकार अच्छा हुवा. वहां से मनमाड आये. यहां श्री कहानऋषिजी की सम्प्रदाय के श्री नन्दकंवरजी आर्जिकाजी मिले. कसूर की तीन बाइयों की साथ ही दीक्षा हुई. श्रेयकंवर राधाजी, रायकंवरजी, वहां से एवले, वारी, फूलथंभे, कोपरगांव, व वेलापुर हो अहमदनगर आये.

उस वक्त दो साधुजी दो आर्जिका रत्नऋषिजी अमोलकऋषिजी नाम धराते हुवे वहां के ग्रामों में ठगाइ कर रहे थे. आगे २ वे जाते और पीछे २ हम जाते. जिस से लोगों को बडाही आश्चर्य होता. यह समाचार अहमदनगर के श्रावकों के सुनने में भी आये. जब हम अहमदनगर के स्थानक में गये, वहां श्रावकों पौपधव्रत धारन कर बैठे. उन को श्रीराम कुंवरजी, आर्जिकाजी धर्मोपदेश सुना रहे थे. वे हम को देख बोले कि-यह ठगों आगये. वहां घोडनदीवाले छोटमलजी वहोतर भी थे वे मनमाड दीक्षा पर आये थे. पैछान कर वे बोले कि यह तो श्री रत्नऋषिजी, अमोलख ऋषिजी महाराज ही हैं. सुनकर आर्जिकाजी श्रावकों तत्काल खडे हो गये. विनय व्यवहार विधि अनुसार किया. वहां शेखेकाल रहकर घोडनदी आये चतर्मास किया.

ठग

प्लेग

रोग चालु हुआ ग्राम खाली हो गया. श्रावकोंने विहार करने की बहुत विनंती की रतलामसे तार भी मगाया परंतु विहार किया नहीं. कोरंटी वगैरा जिस २ स्थान श्रावको जाकर रहेथे वहां से तथा ग्राम में रहे दो श्रावको के व ब्राह्मणों के घर से आहार पानी लाकर काम चलाया. जो कोइ श्रावक बिमार होता उसे धर्मोपदेश सुनाते उन की तरफ से ज्ञानवृद्धी खाते में द्रव्यदिलाते-और श्रावक के जो पास जमा होता उस से पुस्तकों मगाकर एक पुस्तकालय स्थापन कराया. वहां से विहार किये बाद अवलकोटी ग्राम के सुलतानचंद ग्रहस्थ की कडे ग्राम में दीक्षा हुई. श्री रत्नऋपिजी, महाराज के शिष्य बनें, सुलतानऋपि नाम दिया (सं० १९५५ वेशाख शुक्ल १३) दूसरा चौमासा कानोरपाठार छोटे ग्राम में पानी साताकारी देख किया. तीसरा चोमासा अहमदनगर में. किया वहां से विहार किये बाद मनोरटाकली का गृहस्थ दगडूजी की वडोले मे दीक्षा हुई सं० १९५६महा शुक्ल १३यह भी श्री रत्नऋपिजी महाराज के शिष्य हुअे. दगडूऋपिजी नाम दिया. और चांपसनी (जोधपुर) के ग्रहस्थ धूलजी संचेती की कुडगाव में भीमराजजी गुगलीया के घर से दीक्षा हुई सं० १९५६ फाल्गुन वद्य, ३, वह शिष्य मेरो नेश्राय में हुआ. मोतीऋपिजी नाम दिया. फिर करमाला चौमासा किया. फिर घोडनदी के,

वृद्धिचन्दजी की माता सुंदरबाइ और बहिन शान्तिकंवर(११ वर्ष की वय की कुमारिका) का दीक्षा उत्सव मंडा, इस वक्त मंदिरमार्गीयोंने उपद्रव किया. सिरकार की तर्फ से दीक्षा अटकाई. अंदाज ५००० मनुष्यों मेले हुअे थे. वृद्धीचन्दजीने पुने जाकर ५०० रुपे दे गाडगा बारीष्टर किया, कलकटर साहेब से आज्ञा प्राप्त कर आठ दिन बाद दीक्षा दिलाइ, तब तक अंदाज १००० मनुष्य रहे थे. नवि दीक्षिता को विद्याभ्यास कराने कु लिये मेरा और मोतिऋषि का घोडनदी चतुर्मास करा महाराज श्री रत्नऋषिजीने शोरेगाम चतुर्मास किया. चौमास हुअे बाद सामिल हो विचरने लगे. चीचोंडी कडा मिरजगाव फिर कर कोकाने (अहमदनगर) चौमासा किया.

उस वक्त श्री केवलऋषिजी महाराज, प्रतापगड से अलग विचरे बाद नीमचहो, मारवाड पधारे भगडीमें चौमासा किया. पाली जोधपुर बीकानेर फलोदी मेडता वगैरा स्पर्शकर नागोर चौमासा किया. यहां भगवान सागरजी सम्वेगी साधु से मिलकर पुराने भंडार में ताडपत्रपर लेखित शास्त्रों देखे. वहां चूरु लाडणु विदासर सादडी नाथद्वारा बूरली जालोर आदि फिर रतलाम,में पुज्य श्री उदय सागरजी से मिले.जावरे में रत्नचंदजी

मुक्ता धला

महाराज से चौमासीतप (१२१ व्रत तक्राधारसे) धारन कर जावद गये, चौथमलजी महाराज से मिले नीमच चौमासा करने आये. वहां हमारा भी मुकाबला हुआ. चौमासी तप का पारना नीमच में हुआ ५४ खन्ध वगैरा धर्म का वहुत उद्योत हुआ. फिर गुजरात काठीयावाड झालावाड, सोरठ, कंठार आबू गिरनार शत्रुंजय प्रभास पाटण आदि फिर भावनगर चौमासे मे १११ व्रत किये. वहां से वागड में बांसवाडा वगैरा स्पर्शते पासोला में हमारा भी मुकाबला हुआ. फिर गुजरात में गये वहां लखतर का एक सुखलाल ग्रहस्थ साधु हुआ. बडीयेग्राम के राजाजी को जीवहिंसा मदिरा मांसका प्रत्याख्यान कराया. वहां से मालवे में आये उज्जैन चौमासा किया. यहा मानकऋषिजी नामक इन के शिष्य हुवे. उन को भी एवंताषिजी महाराज के शिष्य भी लालजीऋषिजी महाराज उन के शिष्य युवास्त्री का त्यागकर संसार में अनेक शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त कर दीक्षा धारन करने वाले पंडित श्री दोलतऋषिजी के सुपरत किये. वहां से मगरदे आकर सुखलाल को दीक्षादी (सं० १९५८) आस्टे चौमासा किया. ५१ व्रत किये वहां से पूर्व देश में पधारे, मुथरा विंदरावन स्पर्श कर आगरे लोहामंडी में चौमासा किया. वहां पंजाब के साधु २२ शास्त्र कठाग्र किये हुवे श्री मयारामजीका

मुकाबला हुआ. फिर दिल्ली हो, पंजाब पधारे, लाहोर में पूज्य श्री मोतीचंदजी महाराज दर्शन किये, अमृतसर नाभा पटियाला को स्पर्शकर जंबु (काशमीर की राज्यधानी)में चौमासा किया. वहां से फिर हाडोतीमें पधारे. कोटा बुंदी जयपुर माधवपुर आये, वहां के राजाजी को भी जीवहिंसा के प्रत्याख्यान कराये. टोंक चौमासा किया. ४१ व्रत किये. वहां से नारनोल हाथरस, भीयानी टहाना सीपरी इत्यादि स्पर्श कर लश्कर (गवालियर) चौमासा किया. यह १०१ व्रत किये. वहां से विचरते हुवे भोपाल आये. चौमासा किया. वहां अहमदनगर की श्राविका चारों तीर्थ को साता उपजानेवाली गुप्त दान की प्रेमी धर्म कोविद रंभाबाई, साधु के दर्शनार्थ मालवे में फिरती २ भोपाल को गई थी. उन से मालुम हुवा कि श्रीरत्नऋषिजी दक्षिण में विचर रहे हैं वहां से दक्षिण में विहार का विचार किया. वहां से आगर चौमासा किया. २१ व्रत किये. वहां से इंदोर ब्रहानपुर जबलपुर धूलीये हो आंबोरी पधारे.

उस वक्त कोकाने में हम को समाचार हुअे तब हम आंबोरी आकर मिले, श्री केवलऋषिजी सखऋषिजी का अहमदनगर चौमासा हुआ. वहां ६१

व्रत किये, और हमारा घोडनदी. चौमासा हुआ, इस चतुर्मास में अहमदाबाद की बात का स्मरण होते ही अषाड शुक्ल ९ से ग्रन्थ लिखना सुरु किया. सो अश्विन शुक्ल १० तक ग्रन्थ पूर्ण किया, जिस का नाम जैनतत्त्वप्रकाश दिया. चौमासा हुअे बाद श्री केवलऋषिजी करडे ग्राममें मिले और बोले कि-मेरी वृद्धावस्था होगइ है अब मुझे सहाय देना यह तेरा कर्तव्य है. यों सुन श्री केवलऋषिजी मैं सुखाऋषिजी और मोतीऋषिजी चारों ठाने मिलकर पूने होकर खंडालाका घाट उतर कर चौकग्राम में आये, वहां मंदिरमार्गी श्रावकोंके १०–१२ घर थे परन्तु बहुतों को ढुंढीये साधु को आहार देने के त्याग होने से आहार का जोग कम बना, उस वक्त घोडनदी, के चुन्नीलालजी नहार अपनी भगनी को मिलने पनवेलबंदर जाते वहां आ गये. उन के पास से आहार का जोग बन गया. रात्रि को श्रावकों आये उन से वार्तालाप होने से वे कौमल बने और मोतीऋषि के पांव में कांटा लगने से दूसरे दिन विहार नहीं हुआ. आहार पानी का जोग भी बन गया. उस दिन वहां बंबइ से गुमानविजयजी सम्वेगी साधु भी आगये, वे साधुओं की आहार की प्राप्ति देख मन में प्रजले आहार पानी हुअे बाद शान्तपने कुछ संवाद हुआ, मोतीऋषि का कांटा निकलाकर दो

ुर को विहार किया, एक गामडे में आये वहां नीच लोगों की वस्ती होने से रहने
सा मकान नहीं मिलेने से पीछे सडक पर आकर वृक्ष के नीचे रात रहे. राइसी प्रति
मण किये बाद एक आर्यसमाजिक उपदेशक रस्ते से निकला वह बोला कौन हो? उत्तर
या जैन साधु हैं. वह बोला-जैनी साधु तो बडे दुष्ट होते हैं. पूछा कि-क्यों भाई? उसने
हा-कल मैंने चौक में जैन साधु का व्याख्यान सुना, वे कहते थे कुत्ते को रोटी देना
ीये स.धु को रोटी नहीं देना. अरे जो साधु को रोटी देने की मना करते हैं वे
कब देने देंगे, ऐसे दुष्टों का मुह भी नहीं देखना. तब हमने कहा ढुंढीये साधु
ही हैं. फिर उसे को ढुंढीये सम्वेगी की तफावत बताइ, वह सुन खुशी हुआ,
हां से साथ ही पनवेल बंदर आये. वहां से ठाणे हो कुरले आये. मदनजी झूठा के
... रहे. बंबइ से श्रावक श्राविका दर्शनार्थ आने लगे. फालगुनी चौमासी वहां
कली के स्थानक में रहे. तपस्वीजीने ८४ व्रत किये. यह सुन जैन
बहुत ही आश्चर्य पाये. विष्णुआदि लोगों के घरों से भी तक्र की प्राप्ति होने लगी,
पदा का ठाठ खूब जमने लगा. चौरासीवे उपवास के दिन बंबइ में पक्खी पलाइ.
ाजार बंद रक्खा. हजारों जैन जैनेतर हजारोंगम लोगों व्याख्यान में आये १० मण

पत्तीसे प्रभावना में लगे. जीवदया वगैरा उपकार बहुत हुवा. श्रावकों के अत्याग्रह से चौमासा भी बंबइ के मध्य हनुमान गली मंगलदास की वाडी में किया. उसवक्त महाराज श्री के सद्बोध से और जामकंडोरणा वाले किसनजी भइ के प्रयास से 'रत्नचिन्तामणि जैनमित्र मंडल' की स्थापना हुई. उस में पाठशाला खोलीगइ. इस मंडल की तरफ से मेरी बनाइ कुछ कवीता का संग्रह कर एक 'जैनामूल्यसुधा' पुस्तक प्रसिद्ध की गई. यहां आश्विन मास में माताऋुपिजा का स्वर्गगमन हुवा, उसवक्त हैद्रावाद के पन्नालालजी कीमती व्यापारार्थ यहां आये थे, उनों कहा कि—हैद्रावाद में जैनीयों के सैंकडों घर हैं परन्तु साधु दर्शन के अभाव से अन्य मतावलम्बी बन रहे हैं. आप जैसे साधु जो वहां पधारें तो बडा उपकार होवे. यह सुन हैद्रावाद, स्पर्शनेका तपस्वी जीका विचार हुवा. वहां से विहार कर कसारेकाघाट चड इगतपुरी आये. यहां श्रावकों की वस्ती ठीक होने पर भी वर्षाद के डर से कोई साधु चौमासा करते नहीं हैं. वहां के श्रावकों बोले कि—जो आप कृपा करो तो बडा उपकार होगा, वहां से विहारकर घोटी हो नासीक वगैरा क्षेत्र स्पर्श ते पालखेड आये, फाल्गुन चौमासी हुवे बाद इगतपुरीके मूलचंदजी टांटीया वगैरा श्रावक पालखेड

आये.अत्याग्रह से चौमासा की वीनंती कबूल कराई, हर्पित हो स्वस्थान गये.वहां से विचरते हुवे नाशिक आये तब श्रावकों बोले इगतपुरीमें पानी वहुत वर्षता हैं, आप तकलीफ पावोगे महाराज श्री बोले जो मूलचंदजी,कहदे तो हम अन्यस्थान चौमासा करदे मूलचंदजी. नाशिक आये तब उन को उपलंभ देनेलगे.वेबोले साधुओं का धर्म ही परिषह सहकर धर्म दीपानेका है. महाराज श्री ने इगतपुरी चौमासा किया. वहां ३५ अठाइयों वगैरा धर्मोपकार अच्छा हुवा मेरीबनाइ हुइ 'धर्मतत्वसंग्रह "की १००० प्रत इगतपुरी के श्रावको ने और५०० प्रतो घोटी के श्रावको ने यों १५०० प्रतों छपवाकर अमूल्यदी. कितीनोक हिन्दी जैन हितेच्छुके ग्राहकों को भेटदी वहां से विहार कर मनमाड आये यहां एक लोंका गच्छी वल्लभ नामका यती बहुत दुःखी अवस्था में था, उस को दयाकर उसे साधु बनाकर साथ में लिया, वहां से वेजापुर आये. यहां श्रावक भिखमचंदजी संचेती की तरफ से धर्मतत्व संग्रह का गुजराती भाषान्तर भाइ वाडीलाल से करवा कर १२०० प्रतो छपवाकर गुजराती जैन हितेच्छु के ग्रहको वगैरा को अमूल्य भेटदी गई.वहां से खेडगाव,आये वहां १२ श्रावगीयों के घर थे. वे बोले हम दिगम्बर धर्म छोडकर साधुमार्गी बने हैं तब से,भट्टारकजीने हमे जाती बाहिर कर दिये हैं. अब हम आप ही के श्रावक हैं परन्तु

बैषों बीत जाते भी कोइ हमारी संभाल नहीं लेते हो यह क्या ? महाराज बोले-अबी तो हमारा हैद्रावाद जाने का विचार होने से स्थिरता कम है, कोई साधु आर्जिका मिलेंगे तो उने सुचना करेंगे. वहां से औरंगाबाद आये यहां सीकंद्रावाद के शेठ चंदनमलजी सीरेमलजी संकलेचा की दुकान के मुनिमजी शिवराजजी सूराने कार्यार्थ आये थे, सो दर्शनार्थ आये. उने मालुम हुआ कि महाराज हैद्रावाद,पधारते हैं. यह सुन बहुत खुशी हुअे और बोले मेरा बीच के गाम में लेन देन है वहां भी आप के दर्शन करुंगा. हैद्राबाद पधारने से धर्मोद्योत अच्छा होगा. वहां से जालने आये. हैद्राबाद तरफ विहार करने लगे जब श्रावको बोले आजतक इधर किसी भी साधुने विहार नहीं किया क्या हैद्रावाद जाना सहज है ? रास्ते में मुसलमानों की बस्ती बहुत है, आहार मिलना और रास्ता प्रसार करना बहुत मुशकिल होगा,हैद्राबाद में भी मुसलमान लोग खराब हैं वगैरा बहुत समजाये परन्तु उन के कहने पर ध्यान नहीं देते उधर ही विहार किया. तब मगनीरामजी ने जसराज नाम के सेवक को रास्ता बताने साथ किया. वहां से मानोद आये संध्या समय प्रातिक्रमण करती वक्त एक बनकर वहां खडा रहा और नवकार मंत्र सुन पूछने लगा-तुम्ही कौन आहे ? महाराजने उत्तर दिया—जैन धर्मा चे साधु, और

कुछ साधु का आचार भी उसे मराठी भाषा में सुनाया. वह खुश हुआ और दूसरे दिन प्रातःकाल ही २५ भाइयों बाइयों को ले आया. अग्रह कर विहार नहीं करने दिया. मराठी भाषा में व्याख्यान सुनाया. सब कहने लगे-अमचे पंडित भट्टारक येथे येत आहे परतु आपल्या प्रमाणे कोणी ही सन्मार्ग दाखवित नाहीं. आपण येथें राहिल्याने फार उपकार होईल वगैरा. उत्तर दिये कि—आमची इच्छा आतां हैद्राबाद जाण्याची आहे, म्हणून विशेष राहणे होत नाहीं वगैरा, गौचरी की वक्त होने से उन के घरों में गोचरी गये परतु वे साधु को आहार देने की विधी के अवाकेफ होने से बहुत घरों में असूजता हो गया. आहार कर वहां से विहार किया. ४० भाईयो बाईयो अंदाजन पहोंचाने आये. भेट के लिये द्रव्यार्पन करने लगे. तब उन से कहा कि—आह्मीं निष्परिग्रही साधु आहे म्हणून द्रव्य ग्रहण करीत नाहीं परतु कांहीं तरी सपथ घ्या. यह सुन उन में से बहुतसोंने हरी के रात्री भोजन के वगैरा प्रत्याख्यान किये. वहां से सेलू आये. बजार में थानेदारने रोक दिये और बोला तुमारे जैसे यहां कभी भी नहीं आये, इस लिये तुमारी हम को शका होती है. तुमारे पास क्या २ है झाडा दो. तपस्वीजी महाराज साधुओं को वहां खडे रख बजार में गये. वहां अहमदनगरवाले पन्नालालजी डोसी की दुकान थी उस पर

उन के पुत्र ताराचंद खडे हुवे उनोंने तपस्वीजी महाराज को पहचान लिये और तत्काल वंदना नमस्कार कर बोले—आप यहां कैसे पधार गये ? तपस्वीजी बोले—यह बात तो पीछे करेंगे परंतु थानेदारने साधु को रोक रखे हैं. इतना सुनते ही ताराचंदजी तत्काल थाने में आये. थानेदार खडा हो गया और पूछा आप कैसे आये ? उनोंने कहा यह हमारे गुरुजी हैं. थानेदार बोला—मुझे मालुम नहीं माफ कीजाये. वहां से ताराचंदजीने साधुओं को साथ ले रामलछमन के मंदिर में उतारे. आहार पानी कर दूसरे दिन वहां से विहार कर परभणी आये, परभणी के वालचदजी, वगैरा कितनेक लोगों सन्मुख आये, बाजार में उतारे. व्याख्यान होने लगा, जैन जैनेतर बहुत से लोगों धर्मानुरागी बने, वहां भी पन्नालालजी. की दुकान थी वहा ताराचंजी आये और विचार किया कि सेलू में तो मैं मिलगया परंतु आगे से कोई रोकेगा तो महाराज कैसे करेंगे ? इसलिये बंदोबस्त होना अच्छा है. ऐसा विचार कर थानादारी का, करवडगीरी का वकेग डाकटर का इन तीनों से प्रत्राण लिखवा कर जसराज सेवक को दिये. और कहा कि-कोई भी रोके तो यह परवाने बतादेना जैसे ही जिन २ ग्रामों में उन की पहचान थी वहां २ के नाम की चिट्ठीयों लिखदी. वहां से

तिलंगाना

नांदडे आये, वहां व्यापारार्थ कच्छी लोगी रहते थे उन के बंगले में रहे. वहां से ऊमरी करकेली तक तो मराठी बोली में लोगों समझते थे, वहां मराठी में व्याख्यान दिया. वहुत से लोगों सुनते साधु का कठिन आचार सुन बडाही आश्चर्य पाते. आगे तैलंगी बोली आने से लोगों समझने नहीं लगे, इसलिये मकान की आहार पानी की तकलीफ पडने लगी.. एक वक्त आठ कोस में कोई गाम प्राप्त नहीं हुआ दो प्रहर दिन आ गया बहुत घबरा गये. दो साधु आगे निकले एक वृक्ष के नीचे पडे, पीछे से तपस्वी-जी आये और कहने लगे कि यहां कौन आहार पानी ला देगा? वहा कोई छोटा ग्राम दिखाता है, चलो वहां कुछ मिलजाय. सब मिल मुशकिल से उस ग्राममें आये, एक टूटे हुवे घांस के झोंपडे में भंडोपकरण रख कर तपस्वीजी और मैं दोनों ग्राम में भिक्षार्थ गये, परंतु कोई बोलीमें समझे नहीं. एक पटेल देख बोला अहो तुम यहां कहां से आये ? तपस्वीजी बोले तुम हमे पैछानते हो, वह बोला-एक बनिया यहां रहता था वह हमेशा फजर में तुमारे जैसा मुह को कपडा लगाकर बैठता था, आठ २ दिन को उपवास भी करता था. तपस्वीजी बोले-हम उस के गुरु साधु हैं. यहां गरम पानी रोटी मिल जायगी? वृद्ध बोला-तुम हमारे घर का लेवोगे ? तपस्वीजी बोले तुमारी जात क्या है ? वह

बोला—कुलम्बी. तब तपस्वीजी बोले हां लेंगे. वह अपने घर ले गया दो जवार के रोटे दो लोटे गरम पानी दिया. दूसरे दो घरों से भी दो रोटे और एक लोटा छांछ दिला दी. यह ले पीछे झोंपडे में आये, आहार पानी कर लोट गये. जसराज सेवक तो वहां से एक कोस के कुछ अधिक निजामाबाद (इंदोर) था वहा चले गया. वहां कुचरेवाले भेरुदासजी लछमनदासजी की दुकान पर शिवराजजी श्रावक बहुत शास्त्र के ज्ञाता शान्तस्वभावी रहते थे उन को कहा कि महाराज वहां ठेरे हैं. वे तत्काल वहां आये वंदना नमस्कार कर बोले यह नजीक इंदोर है वहां पधारो. तपस्वीजी बोले-तुमारे भाव नजीक है, हमारे तो आकाश का तारा हो रहा है. श्याम को फरसना होगा तो देखा जावेगा. वे स्वस्थान गये. श्याम को महाराजश्री भी वहां पधारे, फाल्गुनी चौमासी नजीक आने से ८ दिन वहां रहे. लोच किया. वह देख वह वल्लभसाधु डर पाया और रात्री की वक्त किधर ही भग गया. शिवराजजीने एक तैलंगी बोली के जान डोंगरसी भाई को साथ में कर दिया. वहां से चार कोस एक ग्राम में आये. वहां बहुत ही फिरे परंतु आहार पानी का जोग जमा नहीं, कोमटी बानिये डोंगरसी को कहने लगे-तुमारे जैसे शेठ के गुरु को घरोघर क्यों लिये फिरते हो, तुम्ही कुछ खिलावो पिलावो. उनने तैलंगी बोली में साधु के आचार

से वाकेफ किये, जिस से वे आश्चर्य पाये, उस वक्त डोंगरसी भाईने अपने लिये और सेवक लिये रसोई बनाई. महाराज को भी आमंत्रणा की. महाराज बोले-हम साथ में रहे आदमी का सोपारी का टुकडा भी लेते नहीं हैं. यह एक दिन का काम नहीं है. साधु मार्ग ऐसाही है, फिकर नहीं करना. पीछे से एक ब्राह्मण आया. वह सलाह करने लगा उस की बोली कुछ समझ में नहीं आई. इतने में डोंगरसी भाई आये वे कहने लगे कि-आप को छांछ चाहिये है क्या ? महाराज उस ब्राह्मण के यहां से छाछ मकी की रोटी लाये तीनों साधुने खाया. फिर कुछ अमल (राव) का जोग बन गया. इस देश में तेलंगी लोगों की वस्ती है. वे प्रथम दिन के चांवलों के धोवन में दूसरे दिन चांवल पकाते हैं उसे कली के चांवल कहते हैं, वह तेल मिरची का अथाना और मिरचीयों की चटनी के साथ खाते हैं. पीने को मीठा पानी तलाव से लाते हैं. और स्नान करने के लिये कूवे का खारा पानी गरम करते हैं. वह पानी और आहार साधुओं के काम में आता है, उन चांवलों में से दुर्गंध निकलती है परंतु उन लोगों को वह स्वादीष्ट लगते हैं, उस से ही निर्वाह करते २ सेनापल्ली में आये × सेनापल्ली की रानी साधु को

× इधर बहुत से ग्रामों के नाम पल्ली हैं और उन की वस्ती डोंगरों में चोरपल्ली जैसी ही देखने में आती है.

खेद युक्त हुई अपने प्रधान को भेजा अपनी धर्मशाला में उतराये, और कहलाया कि-आप को सीधा सराजाम जो चाहियेगा वह रानी साहेब के यहां से मिलेगा. तपस्वीजी बोले हम हाथ से रसोइ बनाते नहीं है, दूसरी वक्त प्रधान आकर बोला रानीजीने कहलाया है हमारे यहां ब्राह्मण रसोइ बनाता है आप सब आकर वहां भोजन करलेना. तपस्वीजी बोले हम किसी के घरपर भोजन भी नहीं करते हैं, तब उसने पूछा कि फिर क्या करोगे ? तपस्वीजी बोले-ग्राम में से जो भिक्षा मिलेगी वो लाकर खा लेवेंगे. रानीने ग्राम में हुकम फेरादिया साधु भिक्षा को आवे उनको चहावे सो देना. जब गोचरी को निकले तो बहुत से लोगों आहार आदि लेकर घरों के बाहिर खडे हुवे देखने में आये. उने देख हम पीछे फिरगये, गलोंकूची में से जो कुछ आहार पानी मिला उसे ग्रहण कर काम चलाया. दोपहर को प्रधान आया और कहने लगा कि.-यहां बहुत साधुओं आते है वे नगद रुपे दुशाले वगैर केइ वस्तुओं अडकर मांगते है, हमने आप जैसे साधु आज तक कोइ नहीं देखे कि-हमदेते है और आप नहीं लेते हो. वहां से दो प्रहर को विहार किया तब बहुत राज्यवर्गी मनुष्यों पहोंचाने आये. वहां से डिग्गाछी को

स्टेशन पर उतारे के बंगले में स्टेशन मास्तरने रहने की मना की, तब झाडके नीचे रात रहे. रात को स्टेशन मास्तर के साथ ईश्वरकर्ता के बारे में संवाद हुआ, उसने हमारा मंतव्य कबूल किया और बोला कि-इस बारे में मैने बहुतों के साथ विवाद किया परंतु आज समान संतोष मुझे कही भी नहीं हुआ. फिर मास्तर बोला-आप बंगले में पधारीये. महाराज श्री बोले हम रात्रि को स्वस्थान छोड कहीं भी नहीं जा सकते हैं. वहां से विहार कर मिरजापल्ली आये, वहा रात्रि को एक मनुष्य आकर पुकारने लगा कोई साधु आये हैं क्या ? तपस्वीजी बोले क्यों भाइ ? उसने कहा चलो शेठजी बोलाते हैं, तपस्वीजी बोले—हम रात्रि को नहीं आसकते हैं, उसने जा शेठजी से कहा, शेठजी उसी वक्त उस आदमी के साथ वहां आये. वंदना नमस्कार बोले में आप को औरंगाबाद में मिला था वही शिवराज हुं. दूसरे दिन उनोंने वहां ही रखे प्रथम दिन का बनाया हुआ आहार बचा था वह और स्नान के लिये किया गरम पानी ग्रहण कर भोगव कर वहां से विहार करते डोंगरसी भाइ के तुपरान ग्राम आये. वहां सीतला सप्तमी के लिये बनाया शीतल आहार किया. वहां से मेडचल आये वहां के थानादारने रोके

उसे सेवकने परवाना बताया. वह परवाना पढ मुह देखने लगा और बोला—तुमे जो चाहियेगा वो सिरकार से मिलेगा. तपस्वीजी बोले हमे कुछ भी नहीं चाहिये. ग्राम से आहार पानी लेकर मकान रहने को नहीं मिलने से एक छोटीसी पडशाल में आहार कर रात्रि को मसजिद में रहे. वहां एक आदमी बोला साधुजी हैं क्या ? तपस्वीजी बोले क्यों भाई ? वह बोला आप को लेने मुझे अलवाल से भेजा है. उस के साथ दूसरे दिन अलवाल गये. यहां साधुमार्गीयों के—१०—१५ घर हैं. सुख से रहे. व्याख्यान होने लगा सीकेन्द्राबाद हैद्राबाद से बहुत श्रावकों व्याख्यान सुनने को तथा दर्शनार्थ आने लगे, और कितने क कहने भी लगे कि-यह इतनी दूर पैदल किस प्रकार आये. कोइ बोला रेल में बैठ आयें होंगे, कोइ बोला ठग होंगे, इन सब का समाधान सिवराजजीने तथा पन्नालालजी कीमतीने किया. सब को प्रतीत आई. धर्म ध्यान की वृद्धि होने लगी अलवाल के श्रावकों कहने लगे कि हैद्राबाद में आप का रहना किस प्रकार होगा. क्यों कि बाजार में भीड बहुत रहती है आहार पानी किस प्रकार ला सकोगे तथा मुशल-

मान लोगों बहुत हैं वे भी आप को परिषह देंगे, इस लिये चौमासा यहां ही कीजीये. तपस्वीजीने कहा-हैद्राबाद स्पर्शे बाद देखा जायगा, वहां से बारकस आये, वहां भी धर्म ध्यान अच्छा हुआ उक्त प्रकार उनोंने भी चौमासे की, विनंती की वहां से सीकंद्राबाद आये. यहां कोरों के मिलकर करीबन १०० घर साधुमार्गीयों के होंगे. यहां भी धर्म ध्यान दया पोसा अच्छे होने लगे.

इति शास्त्रोद्धार मीमांसा का दूसरा प्रकरण समाप्तम्

तीसरा प्रकरण–" अमूल्य शास्त्र दान दाता "

इस भारत वर्ष के हरीयाणे (पंजाब) देश पटीयाले राज्य के अन्तरगत महेन्द्र-गढ (कानोड) नामक कसबे में अग्रवालवंशा वतंसक राज्यमान श्रीमान लालाजी नेतरामजी सहकुटुम्ब रयते थे.

उस काल उस समय में इस विभाग में जैन साधुमार्गीय सम्प्रदाय के स्थंभ रूप परमपूज्य श्री मनोहरदासजी महाराज के सम्प्रदाय के परम प्रतापी पुरुषों पूज्य रत्नचंदजी धनीलालजी मंगलसेनजी आदि साधु साध्वीयों का विचरना था. इन के सद्बोध के परमं प्रताप से इस देश के हजारों वैष्णवधर्मि अग्रवाल पल्लीवाल वगैरा जाति के महाजन चुरत जैन साधुमार्गीयों बन तन से धन से व मन से जैनधर्म का स्वयं पालते अन्य से पलाते हुए उन्नत अवस्था में लाने वाले हुवे हैं और वर्तमान में होरहे हैं.

'लालाजी नेतरामजीने भी' पूज्य श्री रत्नचंदजी महाराज के पास से सम्यक्त्व

मान लोगों बहुत हैं वे भी आप को परिषह देंगे, इस लिये चौमासा यहां ही कीजीये. तपस्वीजीने कहा-हैद्राबाद स्पर्शे बाद देखा जायगा, वहां से बारकस आये, वहां भी धर्म ध्यान अच्छा हुआ उक्त प्रकार उनोंने भी चौमासें की, विनंती की वहां से सीकेंद्राबाद आये. यहां कोरों के मिलकर करीबन १०० घर साधुमार्गीयों के होंगे. यहां भी धर्म ध्यान दया पोसा अच्छे होने लगे.

इति शास्त्रोद्धार मीमांसा का दूसरा प्रकरण समाप्तम्

तीसरा प्रकरण—" अमूल्य शास्त्र दान दाता "

इस भारत वर्ष के हरीयाणें (पंजाब) देश पटीयाले राज्य के अन्तरगत महेन्द्र-गढ (कानोड) नामक कसबे में अग्रवालवंश वतंसक राज्यमान श्रीमान लालाजी नेतरामजी सहकुटुम्ब रयते थे.

उस काल उस समय में इस विभाग में जैन साधुमार्गीय सम्प्रदाय के स्थंभ रूप परमपूज्य श्री मनोहरदासजी महाराज के सम्प्रदाय के परम प्रतापी पुरुषों पूज्य रत्नचंदजी धनीलालजी मंगलसेनजी आदि साधु साध्वीयों का विचरना था. इन के सद्बोध के परम प्रताप से इस देश के हजारों वैष्णवधर्मि अग्रवाल पल्लीवाल वगैरा जाति के महाजन चुस्त जैन साधुमार्गीयों बन तन से धन से व मन से जैनधर्म का स्वयं पालते अन्य से पलाते हुए उन्नत अवस्था में लाने वाले हुवे हैं और वर्तमान में होरहे हैं.

'लालाजी नेतरामजीने भी' पूज्य श्री रत्नचंदजी महाराज के पास से सम्यक्त्व

रत्न सम्पादन किया था. जैन ज्ञान सामायिकादि का अभ्यास कर धर्म धुरंधर बने थे. साधु साध्वियों के दर्शन वाणी श्रवन के बडे प्रेमी थे. जब २ साधु साध्वीयो का महेन्द्रगढ मे आगम होता तब २ आप बडे ही हर्पोत्सह को प्राप्त हो बहुत दूर तक सन्मुख लेने जाते, अपनी हवेली में उतारा देते, आप अपने जाति वाले अन्य कौम वाले जैन जैनेतर लोगों को अत्याग्रह कर व्याख्यान श्रवन कराने ले जाते. इन के संगति से के इअन्य मति सन्मती (साधुमार्गी) बने. तैसे ही साधु साध्वियों को चारों प्रकारका आहार दान वस्त्रदान स्थानकदान शास्त्रदान शिष्यदान उत्साह से देते रहते थे. इन के घर से बहुत से साधु साध्वीयों की दीक्षा भी हुई है.

लाला नेतरामजी के सं० १८८८ पौषवद्य ९ में पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई जिस का नाम रामनारायण दिया. यह विद्याभ्यास कर लग्न सम्बन्ध हुवे बाद व्यापारार्थ हैद्राबाद आये, सामान्यपने से व्यापार कर अपनी होशियारी से लाखों रूपे प्राप्त किये. पुण्य प्रताप से राज्य में सन्मानित हो हि० हा० महबूबआली खां बहादुर का इन पर पूर्ण प्रेम हुआ, लाखों रुपे के झवेरात का लेनदेन करने लगे, व्यापारी वर्ग में अग्रगण्य बने.

लाला रामनारायणजी के पुत्र नहीं होने से दत्त पुत्र लिया. इन का जन्म सं० १९२० पोष शुक्ल पूर्णिमा को हुवा, इन का सुखदेवसहायजी नाम स्थापन किया. यह भी दादा के प्रसग से साधु दर्शन के बडे प्रेमी हुवे. तेजस्वी प्रतापी व्याख्यानी मुनिराज श्री मगलसेनजी महाराज के पास सम्यक्त्व धारन कर सामायिक सैंकडो स्तवन लावणीयों आदि कंठस्थ किये, कालान्तर यह भी हैद्राबाद आकर पिताकी भक्ति में रहे. व्यापारादि कार्य में वहुत कुशलता प्राप्त की. लाला सुखेदव सहायजी के पुत्ररत्न सं० १९५० के श्रावणवद्य १ को प्राप्त हुवे जिनका ज्वालाप्रसादजी नाम स्थापन किया. जिस वक्त इन को निझाम सरकार के पास लेगये उस वक्त हजुरने इस से मोहित हो मेवाखोरी के लिये १०० रूपे महीना भंडार से कर दिया. लालाजीके तरफ स एक दानशाला महेन्द्रगढ में खोलीगइ है, और हैद्राबाद में सदाव्रत चालू है. जिस में सदैव सैंकडों दुःखी. दरिद्री अनाथ अपग जीवों का पोषण होता है, और भी दान पुण्य का कार्य में हजारों रूपे का व्युय करते हैं. तैसे ही सांसारिक प्रसंग में भी लाखो रूपे का व्यय किया. ऐसे श्रीमान राज्यमान पुण्यात्मा होने परभी बिलकुल अभिमानी नहीं है,

हैद्राबाद में साधुओं का आवागमन नहीं होने से यह मंदिर में जाने लगे थे. हैद्राबाद में नवीन मंदिर व मशीद बनाने की सरकार के तरफ से सख्त मना होने पर भी बहुत लोगों के आग्रह से इनोंने सिरकार की आज्ञा प्राप्त कर हजारों रुपे का व्यय कर हैद्राबाद चार कमान बाजार में लालाजीने अपने घर के सन्मुख एक भव्य मनोहर जैन मंदिर भी बनवाया है. तपस्वीजी महाराजश्री केवलऋषिजी ठाने तीन का सीकंद्राबाद में आगमन होने का समाचार लाला रामनारायणजी श्रवण कर बहुत हर्ष पाये और दर्शनार्थ सीकंद्राबाद आये. व्याख्यान श्रवन कर बहुत खुशी हुवे. और हैद्राबाद पावन करने की विनंती की.

महाराज श्री सीकेन्द्राबाद से कोठी पर पधारे यहां आठ दिन रहे. वहां से 'हैद्राबाद पधारे' पन्नालालजी कीमती के मकान में रहे. गोचरी के लिये गये तो फक्त पांच घर ही श्रावक के पाय. पूछने से श्रावक बोले कि यहां घर तो बहुत हैं परन्तु मालुम नहीं कहां २ रहते हैं. यह सुन महाराज आश्चर्य चकित बने की यहां निर्वाह किस प्रकार होगा. रात्रि को श्रावकों दर्शनार्थ आये उन से पूछा तुम कहां रहते हो? वे बोले मीरआलम की मंडी में. फिर पूछा वहां श्रावकों के कितने घर हैं? इनोंने

कोई ... नथी ... दान आपनार कोइ ... तो आहार को ... मलीन जायगा. कहा ... घर है. जब ... दर्शनार्थ आते गये. नवे २ सैंकडों घर निकल आये. परंतु श्रावकों सुनते गये त्यों त्यों दर्शनार्थ आते गये. नवे २ सैंकडों घर निकल आये. परंतु साधु को आहार देने की विधि से कम वाकेफ होने से कितनेक दिन तकलीफ रही. फिर सुलभता से इच्छित योग प्राप्त होने लगा. साधुओं का नविन रूप देख कर बहुत से जैनेतर लोगों में से कोई सिर नंगा देख कहने लगे ये बंगाली लोक हैं. इस देशसे कितनेक ब्राह्मणों फक्त धोती पहने दोपटा ओडे नंगे सिर रहते हैं जिस से कितनेक ब्राह्मण भी कहने लगे. तैसे ही मुहपती बद्दल भी विचित्र कल्पना करने लगे. कितनेक कहे मुह में कोई जानवर न जावे इस लिये यह है. कितनेक कहे दुर्गंधी हवा न जावे इस लिये है. कोई कहे यह किसी से बोलते नहीं है. कोई कहे ईश्वर का निर्वाच्य स्वरूप दर्शक बाना है, पूछनेवाले को संक्षेप उत्तर यही दिया जाता कि यह जैन साधुओं का तरीका है. फजर को और रात्रि को दोनों वक्त व्याख्यान सुरु हुवा. किसी भी मत मतान्तर का भेद रखे विना व्याख्यान श्रवण करने जैनों के तीनों फिरकेवाले (साधुमार्गी मंदिरमार्गी दिगंबरी) वैष्णव शैव आर्यसमाजी मोमीनों वगैरा बहुत से लोगों व्याख्यान में आने लगे. सैंकडोंने सम्यक्त्व धारन की. सोनार मराठे वगैरा सी सामायिकादि कंठाग्र

कर प्रतरतपादि करने लगे कितनेक लोगों धर्म चर्चा करने भी आने लगे. निरापक्ष सत्य उत्तर प्राप्त कर बडाही आनन्द पाने लगे. यों धर्म वृद्धि होने लगी. प्रातःको उत्तराध्ययन सूत्र के साथ विचित्र धर्मोपदेश और रात्रि को प्राचीन संत सतियों के जीवन चरित्र रूप ढालों बचने लगीं. उस वक्त मुझे मात्र छोटी २ तीन ढालों कंठस्थ थीं (जिन रक्ष जिनपाल, मेतराजजी और अषाढाचार्य की) वे थोडे ही दिनों में पूरी होगइ. और परिषदा का ठाठ प्रतिदिन बहुतही बढने लगा. तब बडाही विचार हुवा कि अब रात्रि को क्या सुनाना? तब प्रथम कुछ जोड करने की ढब थी तदनुसार प्रतिक्रमण हुवे बाद ढालों जोड कर परिषद भराये बाद सुना देना. इस प्रकार कितनेक दिन रिवाज रखने से जोडने की हटोटी बैठ गई. जिससे प्रथम जोडने की आवश्यकता नहीं रही. वक्त पर ही जोडते जाना और सुनाते जाना (यह सिलसिला पांच वर्ष तक चला. मदन चरित्र चन्द्रसेन लीलावती चरित्र, श्रेणिक चरित्र यों बडे छोटे मनोहर चित्ताकर्षक अंदाजन २५ चरित्रों सुनाये गये) प्रथम मदन चरित्रने ही लोगों का चित्त आकर्षित किया. लालाजी सुखदेव सहायजी, व्याख्यान के बडे ही रशीले बने और सदैव निरंतर व्याख्यान का लाभ लेने लगे.

सब लोग मिल चौमासा करने की विनंती अत्याग्रह से करने लगे परंतु साधु के रहने लायक मकान की तजवीज नहीं जमने से बडा ही विचार होने लगा. तब लालाजी सुखदेवसहायजी बोले की एक नवकोटी सिरकारी मकान यहां है जो आप के पसंद आवे सो देखीये. नवकोटी मकान चारकमान बजार के बीच साधु के योग्य सर्व प्रकार से साताकारी देखकर महाराज श्री को पसंद आया. तब लालाजीने टीपुखां के कबजे में वह मकान था उस की आज्ञा दिलाइ. वहां चतुर्मास रहे चौमासि के चौदस के दिन अन्दाजन ५०० भाइयों बाइयों की परिषद भराइ, उपवास पौषा दया यावत् अठाइयों प्रभावना वगैरा बहुत ही उपकार होने लगा. तीनों वक्त व्याख्यान बचने लगा. पर्युषन की आदि में जन्म के दिन ओर संवत्सरी के दिन ८००—१००० भाइयों बाइयों के अंदाज व्याख्यान में आये, किसी भी मतान्तर का भेद रखे बिना सब धर्म क्रिया करने लगे. संवत्सरी हुवे बाद भी तीनों वक्त व्याख्यान चालू रहा.

दीपमालिका के दूसरे दिन प्रातःकाल में वीरनिर्वाण उत्सव श्रवणार्थ, परिषदा का बहुत जमाव हुवा, श्री महावीर स्वामीजी के अन्तिम वक्षीस की उत्तराध्ययनजी, शास्त्र के

२६ अध्ययन के २१०० श्लोक २॥ घंटा में सुनाकर ऊपर ज्ञान वृद्धिका उपदेश किया. जैनतत्त्व प्रकाश ग्रन्थ की खुबीयाँ दर्शाई, ग्रन्थ छपाने का खर्च लालाजीने पूछा, तब अंदाज १००० होनेका कहा. परिषदा स्वस्थान गई; फिर मैं जब भीक्षार्थ लालाजीके घरगया तब लाला सुखदेवसहायजी बोले की लालाजी (रामनारायणजी) का हुकम हुवा है कि वह पुस्तक अपनी तर्फ से छपादी जाय. इसलिये जहा अच्छी पुस्तक छपे तहां भेजा दीजीये. तब वह पुस्तक अहमदाबाद जैन हितेच्छु आफिस में भेजी. भाइ वाडीलालने उस की शुद्धावृति लिखकर छपाना सुरुकिया और पत्र दिया कि यदि आपको यह पुस्तक अमूल्य देने की है तो मेरे जैन सामाचार पत्र के ग्राहकों को दीजीये. लालाजीने ५०० पुस्तकों देना स्वीकार किया. तब वाडीलाल भाइ ने अत्याग्रह से ७०० पुस्तको मांगी तब ७०० प्रतो दीगई, बाकी ५०० प्रतों लालाजी की और ८०० प्रतों दूसरे के तरफ से यों २००० प्रतों ही अमूल्य दीगई. तैसे ही तपस्वीजी महाराज की बनाइ हुई कितनीक कविताओं का संग्रहकर "केवलानन्द छंदावली" पुस्तककी २००० प्रतों भी अमूल्य भेट दीगई.

जब रतलाम कॉन्फरन्स हुई थी तब लालाजी सुखदेव सहायजी वहा गये थे. वहां साधु आर्जिका के दर्शन से बडा आनंद प्राप्त किया था. जैनतत्त्वप्रकाश पुस्तक भी बांटी गइथी. नवे अग्यारे पाते की जोडी एक मिली उसे लेते आये. वह महाराज के स्थानक में रखदी. तपस्वीजीने विचारा की यह पात्रे तो साधु के काम में ही आवेंगे इसलिये चन्द्रस सपेते से रंगकर रखदिये थे. चतुर्मास के आश्विन महिने से श्री सुखाऋपीजी का स्वास्थ्य बिगडा, जिससे विहारकर सके नहीं. वे वर्ष ११ संयम पाल फाल्गुन कृष्ण एकादशी को स्वर्ग गामी बने. बाद विहार का विचार किया तब लाला सुखदेव सहायजी प्रमुख श्रावको बोले की आगे उष्णऋतु प्राप्त होती है, इस में विकट पंथ पसार करना बडाही कठिन होगा. इसलिये यह चौमासा की तो यहां ही कृपा कीजीये. नन्तर यहां की क्षेत्र स्पर्शना की प्रबलता से यह बात मंजूर की. सुखाऋपिजी के निर्वाण फंड में से रुपे बचे थे उनकी पुस्तको मंगवाकर यहां पुस्तकालय की स्थापना की. फिर प्रारंभित ज्ञान खाते में रुपे आते गये उन की पुस्तको मंगाते गये. ५०० पुस्तको का संग्रह होगया. दूसरे चतुर्मास में तपस्वीजी का स्वास्थ्य बिगडा. जब २ तपस्वीजी को रोगोत्पन्न होता तब २ तपस्वीजी तपश्चर्या अवश्य करते. तदनुसार ११ व्रत किये परन्तु रोग गया

३६ अध्ययन के २१०० श्लोक २॥ घंटा में सुनाकर ऊपर ज्ञान वृद्धिका। उपदेश किया। जैनतत्त्व प्रकाश ग्रन्थ की खुबीयों दर्शाई, ग्रन्थ छपाने का खर्च लालाजीने पूछा, तब अंदाज १००० होनेका कहा. परिषदा स्वस्थान गई; फिर मैं जब भीक्षार्थ लालाजीके घरगया तब लाला सुखदेवसहायजी बोले की लालाजी (रामनारायणजी) का हुकम हुवा है कि वह पुस्तक अपनी तर्फ से छपादी जाय. इसलिये जहा अच्छी पुस्तक छपे तहां भेजा दीजीये. तब वह पुस्तक अहमदाबाद जैन हितेच्छु आफिस में भेजी. भाइ वाडीलालने उस की शुद्धावृति लिखकर छपाना सुरुकिया और पत्र दिया कि यदि आपको यह पुस्तक अमूल्य देने की है तो मेरे जैन सामाचार पत्र के ग्राहकों को दीजीये. लालाजीने ५०० पुस्तकों देना स्वीकार किया. तब वाडीलाल भाइ ने अत्याग्रह से ७०० पुस्तको मांगी तब ७०० प्रतो दीगई, बाकी ५०० प्रतों लालाजी की और ८०० प्रतों दूसरे के तरफ से यों २००० प्रतों ही अमूल्य दीगई. तैसे ही तपस्वीजी महाराज की बनाइ हुई कितनीक कविताओं का संग्रहकर "केवलानन्द छंदावली" पुस्तककी २००० प्रतों भी अमूल्य भेट दीगई.

जब रतलाम कॉन्फरन्स हुई थी तब लालाजी सुखदेव सहायजी वहां गये थे. वहां साधु आर्जिका के दर्शन से बडा आनंद प्राप्त किया था. जैनतत्वप्रकाश पुस्तक भी बांटी गइथी. नवे अग्यारे पाते की जोडी एक मिली उसे लेते आये. वह महाराज के स्थानक में रखदी. तपस्वीजीने विचारा की यह पात्रे तो साधु के काम में ही आवेंगे इसलिये चन्द्रस सपेते से रंगकर रखदिये थे. चतुर्मास के आश्विन महिने से श्री सुखाऋपीजी का स्वास्थ्य बिगडा, जिससे विहारकर सके नहीं. वे बर्ष ११ संयम पाल फाल्गुन कृष्ण एकादशी को स्वर्ग गामी बने. बाद विहार का विचार किया तब लाला सुखदेव सहायजी प्रमुख श्रावको बोले की आगे उष्णऋतु प्राप्त होती है, इस में विकट पंथ पसार करना बडाही कठिन होगा. इसलिये यह चौमासा की तो यहां ही कृपा कीजीये. नन्तर यहां की क्षेत्र स्पर्शना की प्रबलता से यह बात मंजूर की. सुखाऋपिजी के निर्वाण फंड में से रुपे बचे थे उनकी पुस्तको मंगवाकर यहां पुस्तकालय की स्थापना की. फिर आरंभित ज्ञान खाते में रुपे आते गये उन की पुस्तको मंगाते गये. ५०० पुस्तको का संग्रह होगया. दूसरे चतुर्मास में तपस्वीजी का स्वास्थ्य बिगडा. जब २ तपस्वीजी को रोगोत्पन्न होता तब २ तपस्वीजी तपश्चर्या अवश्य करते. तदनुसार ११ व्रत किये परन्तु रोग गया

नहीं डाकटर के अत्याग्रह से पारणा किया. औषधोपचार करते पौष महीने तक कुछ, शांति हुई की तत्काल विहार किया. अलवाल तक गये की बिमारी बहुत भडक गइ. श्रावकों कहने लगे विहार का अवसर बिलकूल नहीं है, रास्ते में अटके तो उधर ईधर दोनों तरफ के न रहांगे, संयम निर्वाह करना कठिन हो जायगा. तपस्वीजीने उस कथन को कबूल कर वहां उपचार कराया, थोडा आराम होते पीछे हैद्राबाद आये. तब से तपस्वीजी का स्वास्थ्य क्षीण तोला क्षीण मासा होता रहा. अशक्ति बहुत वढगई इस लिये यहां ही रहना पडा. यह साधु समागम का अपूर्व अचिन्त्य लाभ प्राप्त कर बहुत से भाइयों बाइयों ने सामायिक प्रतिक्रमण और थोडे २ शास्त्र का अभ्यास किया और तनमन धन कर जैन धर्म दीपाने लगे. जिस की महीमा सुन पूर्व परिचित व नवीन दाक्षित मालवा मेवाड पूर्व पंजाब गुजरात काठीयावाड कच्छ वगैरा देशान्तरों के लोगों दर्शनार्थ आने लगे. ज्ञान खाते में, दया खाते में सैंकडो रूपे जमा कराने लगे. तैसे यहां के भी सैंकडों रूपे जमा होने लगे. तब तपस्वीजीने तो दया खाते का काम संभाला और सदैव सैंकडों पंचेन्द्रि जीवों को अभयदान दिलाने लगे. इस काम पर ४-५ नोंकरों रहकर जीवों को छोडाकर सुख स्थान पहोंचाने लगे. इस समय निवृति का अपूर्व मौका

प्राप्त कर मैं नवीन २ ग्रन्थो ढाली लखा वगैरा लिखकर ज्ञान खातेकी तरफ से छपवाकर सालो साल हजारों पुस्तकों का अमूल्य लाभ हिन्द में तथा हिन्द के बाहिर के देश में दिलाने लगा. यों दोनों काम जोर से चलने लगे. प्रदेश से दर्शनार्थ आते हुवे लोगों की सेवा भक्ति लालाजी बडे ही प्रेम के साथ करने लगे, उन के उतरने के लिये अपनी नवी हवेली खानपान के लिये ब्राह्मण मराठा वगैरे नोकरों रखे और शयनासनका अलग ही बंदोबस्त किया और वक्तोवक्त लालाजी सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी उन की खबर लेते रहे. कभी विशेष लोगों का आगमन हुवा तो लालाजी खुद ही पुरुसगारी में हाजर हो अपने हाथ से लोगों का सत्कार करते थे, सम्यग् दृष्टीयों की भक्ति के लाभ से अपना अहोभाग्य समझते थे.

यहां से पुस्तकों का प्रसार हुवे जिसे पढ कर लोगोंकी तरफ से सैकडो प्रशंसा पत्र आने लगे, जिस में के फक्त एक ही पत्र की नकल यहां दीजाती है.

श्रावण शुदी १३ साम, कच्छ-लूणी,

आपे परम प्रयास से लखेल परमात्म मार्ग दर्शक हिंदी भाषानो

मनोहर मंडप में एक तरफ स्त्रीयों की बैठक भी की गई थी, जिस से कान्फरन्स में होते हुवे उपदेश का स्त्रीयोंने भी लाभ लिया था. भोजन पानी वस्त्र मकान आदि बंदोबस्त बहुत ही उत्तम प्रकार से किया था. तीन दिन पुरुषों की सभा हुई, चौथे दिन स्त्रियों की सभा हुई थी. जिस में पारसी कौम की बानुओं भी बहुतसी आई थी, राजकोट वाली, वेरावल वाली और दो हैद्राबाद वाली बाइयों ने अच्छा व्याख्यान दिया था. लालाजी की तरफ से कॉन्फरन्स भरने का जो खर्च हुवा उस उपरांत ७००० रूपे जीवदयादि अलग २ खाते में व ५००० प्रेस के लिये दिये. डेलीगेटों की आइ हुई टीकिटों की फी भी कॉन्फरन्स को अर्पण की थी. इत्यादि कॉन्फरन्स की सभा अच्छी हूई थी. अजमेर वाले शेठ चान्दमलजी के पुत्र छगनमलजी जाती वक्त बोले थे कि—जैसी छटा इस कॉन्फरन्स की देखने में आई तैसी पहिले की चारों कॉन्फरन्स नहीं हुई थी अर्थात् सब से अच्छी यह कांन्फरन्स हुई. कान्फरन्स में लालाजी को चान्दी के कास्टेक में मानपत्र दिया था जिस की नकल इस प्रकार है.

धर्मवीर दानेश्वर मानपात जैनप्रभाविक लालाजी सुखदेवसहायजीसाहेबश्री

अत्युत्तम ग्रन्थ मोकलावेल ते विषे लखवानुं के. सदर ग्रन्थ महारा गुरु वर्य श्रीमान कर्म सिंहजी स्वामी समक्ष अथ थी इति पर्यन्त वांच्यों. महारा गुरु वर्य श्रवण करता प्रमोद पामता हता अने नववा प्रकरण ने अन्ते तेओए एहवा वचनों उचार्या के—" महारी आजे ८४ वर्षनी वय (६६ वर्षनी दीक्षा) थयेल छे तेमां अद्यापि पर्यन्त आपणा साधुमार्गी वर्ग मां आवा उत्तम बोधक तत्त्वरसथी भरपुर ग्रन्थकर्ता में दीठा के सांभल्या न हता, तेवा ग्रन्थ कर्तानो रचेलो आ अमूल्य रत्न करंड सदृश ग्रन्थ सांभलतां म्हारा रोम २ मां आनन्द जाग्रत थाय छे. आवा मुनि रत्नो ने विद्वानो ज्यादा पाकशे त्यारेज आपणी कौमना उदयकीर्ण चलकसे, पण सबूर "शैले शैले न माणीक्य, मुक्तिकं न गजे गजे॥ साधवो नहि सर्वत्र, चंदनं न वने वने" अर्थात् उत्तम सुसन्तोना कोइ टोला के ढेर होता नथी ! एहवा मुनिवरों तो हजारों मां एकाद वे जवलेज मली आवेछे. म्हारी जइफ अवस्थामां उक्त ग्रन्थ नुं श्रवण थयुं जेथी हुं म्हारुं अहोभाग्य समजू छूं ! तेओ महात्मा सुखद लांबी उमर भोगवी आवा उत्तम ग्रन्थों रची जैन प्रजामां अमर बनो ! एम हुं म्हारा खरा अन्तःकरणनी भावनाथी शासन देव प्रत्ये पुनः २ प्रार्थु छु. उक्त भावना फलो एम हु खरा जिगरथी चाहुं छुं" आ जगतमां ज्ञान दान समान उत्तम

मनोहर मंडप में एक तरफ स्त्रीयों की बैठक भी की गई थी, जिस से कान्फरन्स में होते हुये उपदेश का स्त्रीयोंने भी लाभ लिया था. भोजन पानी वस्त्र मकान आदि बंदोबस्त बहुत ही उत्तम प्रकार से किया था. तीन दिन पुरुषों की सभा हुई, चौथे दिन स्त्रियों की सभा हुई थी. जिस में पारसी कौम की बानुओं भी बहुतसी आई थीं, राजकोट वाली, वेरावल वाली और दो हैद्राबाद वाली बाइयों ने अच्छा व्याख्यान दिया था. लालाजी की तरफ से कॉन्फरन्स भरने का जो खर्च हुवा उस उपरांत ७००० रूपे जीवदयादि अलग २ खाते में व ५००० प्रेस के लिये दिये. डेलीगेटों की आइ हुई टीकिटों की फी भी कॉन्फरन्स को अर्पण की थी. इत्यादि कॉन्फरन्स की सभा अच्छी हुई थी. अजमेर वाले शेठ चान्दमलजी के पुत्र छगनमलजी जाती वक्त बोले थे कि—जैसी छटा इस कॉन्फरन्स की देखने में आई तैसी पहिले की चारों कॉन्फरन्स नहीं हुई थी अर्थात् सब से अच्छी यह कांन्फरन्स हुई. कान्फरन्स में लालाजी को चान्दी के कास्केट में मानपत्र दिया था जिस की नकल इस प्रकार है.

धर्मवीर दानेश्वर मानपात्र जैनप्रभाविक लालाजी सुखदेवसहायजीसाहेबश्री

हैद्राबाद. सुज्ञ महाशय! आपने परम पवित्र जैनधर्म की अनेक प्रभावना करके हमारे स्वधर्मीयों को कर्तव्य परायणता का दृष्टांत बताया हैं, जैसे कि-अनेक उत्तम धर्म ग्रन्थों का विना मूल्य प्रसार करने में हजारों रूपीयों का व्यय किया है; अनेक अबोल प्राणियों का अमूल्य जीवन बचाने के कार्य किये हैं, दक्षिण के जैनीयों को स्वधर्म का प्रेम लगाने के शुभाशय से बालब्रह्मचारी मुनिराज श्री अमोलख ऋषिजी जैसे विद्वान मुनि को दक्षिण में विराजमान कराये. इतना ही नहीं परंतु समस्त आर्यावर्त के जैनीयों की उन्नति करनेके आशय से तीन वर्ष से सोई हुई कान्फरन्सको जाग्रत करके हजारों रूपेका खर्च उमग से करके यहां पर आमंत्रण दिया है, और कान्फरन्सकी कायमाची केलिये आपने अच्छी तरे आर्थिक सहाया दी है. इत्यादि २ सत्कार्यों से हमारे सकल जैनसंघ को एक अनुकरणिय पाठ सिखाया है, इस से हम आप के सर्व स्वधर्मि आप को धन्यवाद देते हैं. सूत्र ज्ञान की उत्तमता समझकर वीतराग वचन जिन शास्त्रों में संग्रह किये गये हैं उन का संशोधन व छपाई की सुभिता के लिये आपने रु ५००० की सखावत करके एक अत्युपकारी खाते को जन्मादिया है, ऐसी आप की वीतराग भक्ति को देखकर हम यहां पर पांचवी कान्फरन्स में मिले हुवे सब प्रान्तों के आप के स्वधर्मियों

अन्तःकरण पूर्वक आप की प्रशंसा करते हैं.

जीव दया धार्मिक शिक्षण व्यवहारिक शिक्षण, बालाश्रम इत्यादि २ कान्फरन्स के हरके खाते में मिलकर आप ने रु० ७००० देकर हमारे भाइयों को दान धर्म की उत्तमता समजाइ है. इस लिये आप की ओर हम संपूर्ण मान दृष्टी से देखते हैं.

आप की उक्त अनेकधा सखावते आप की शरलता निराभिमान पंना और संघ भक्ति परायणता आदि गुणों के लिये हम सकल हिंद के आप के स्वधर्मियों आप को अन्तःकरण पूर्वक धन्यवाद के साथ यह मानपत्र अर्पण करते हुअे आप की दीर्घायु और तन्दुरस्ती चहाते हैं; और आप के हाथ ऐसेही अनेक परोपकारी कार्य हर हमेशा होते हुवे देख हमें आपको इस से ज्यादा मान देने का सौभाग्य प्राप्त हो ऐसी हम उम्मेद रखते हैं.

आप के गुणानुरागी स्वधर्मी बन्धुओं
लछमनदास मुलतानमल.
प्रेसीडेन्ट, श्वे० स्था० जैन कान्फरन्स
सीकेंद्राबाद (हैद्राबाद) दक्षिण.

ता० १४ एप्रेल १९१३

कॉन्फरन्स की समाप्ति हुअे बाद भी कान्फरन्स के कर्मचारियों को लालाजीने यथा उचित्त सुवर्ण महोरों का इनाम देकर संतुष्ट किये. कान्फरन्स के कार्य से लालाजीने अच्छा यश सम्पादन किया.

सं० १९७० आश्विन वद्य १२ की रात्रि को लाला रामनाराणजी की तवीयत बिमारी से बहुत घबराइ तब लाला सुखदेव सहायजीने रामलालजी कीमती को हमारे पास भेजे. महाराज श्री बोले की हम रात्रि को तो आ सकते नहीं है. दिवसोदय होते देखा जायगा. प्रातःकाल होते ही लालाजी के यहां दोनों साधु गये उन को आलोचना का पाठ समाधीमरण सुनाये. घर के बाहिर जाकर पाप के अठाराही स्थानक सेवन करने के प्रत्याख्यान कराये. एक दिन के और आयुष्य खुटे तो जाव जीव के औषध उपरान्त चारों आहार के प्रत्याख्यान कराये. फिर महाराज श्री ठंडिल [जंगल] गये. पीछे आये तब लालाजी अन्तिम श्वास ले रहे थे. उस वक्त नवकार मंत्र श्रवण कराया और स्वस्थान आये. लालाजी स्वर्गस्थ हुअे उनका निहारण बहुत ही ठाठ से किया गया, कुला

चौर प्रमाने कर्तव्य किया*लालाजी का अवसर भी हजारों रूपे के खरच से किया गया.

सं० १९७० भाद्रव शक्ल ६ को निजाम सिरकार हि०हा० मेहबूब अली बहादुर के देहोत्सर्ग हुअे बादनिजाम तखत नशीन फतेह जंग नवाबमीर उस्मानअली,बादशह हुअे.इनके और लालाजी सुखदेवसहायजी के बडाही प्रेम भावथा.उस का स्मरणकर लालाजी को'राजाबहादुर' की उपाधिसे विभूषित किये. तव से लालाजी की बैठक सदैव एक प्रहर के अंदाज बादशाह के पास होने लगी. लालाजी सुखदेव सहायजी अपने सद्गुणों कर जगत् में बडेही माननीय बने. लालाजी की उदारता शरलता, कोमलता, निरभिमानीपना, कार्य दक्षता, दीर्घदर्शीपना, विवेक बुद्धि पना, सर्व लोगों को बहुत अनुकरणिय होता था. लालाजी—ज्ञाती स्वजनों में अग्रगण्य, बहुमान्य, उत्तम सलाहदाता, मधुर हित शिक्षा से सब को एक राह में चलाने वाले. ज्ञातिके पंचों मे प्रथम पद धारक स्थंभ रूप बने. तैसे ही लालाजी बडे २ जागीरदारों में उमरावो में सरकारी वर्ग रइसों में

* अग्रवाल वंश में बडे मरजावे तो उन के पीछे मस्तक दाढी मूछ के बाल कढाने का रिवाज है परन्तु जो जैन धर्म धारी होते हैं वे यह नहीं करते हैं. यही जैनत्व का लक्षण.

बडे ही माननिय थे. लाखों रूपे का लेन देन करते थे. कोइ भी किसी भी प्रकार संकट को प्राप्त होता जो लालाजीका आश्रय लेता तो उसकी सहायता सलाह से द्रव्य से यथा उचितकर अडे कार्य को शरलता से पार करा देते थे. लालाजी कोइ श्रीमान गरीब स्थिती को प्राप्त हुवा हो उस की गुप्त संभाल लेते थे. तैसे ही गरीबों अनाथों अपंगो दुःखी जीवों को वक्तोवक्त योग्य सहायता पहोंचा कर सेकडों जीवों का आशिर्वाद प्राप्त करते थे. लालाजी अनेक व्यापारीयोंको द्रव्य द्वारा सलाहद्वार यथा उचित सहायता करते. दिया हुवा द्रव्य अवसर पर मांगते परंतु किसी भी ज्ञातीगण को हरक पहोंचे या न्यायालय में जाना पडे ऐसा वरताव नहीं करते. लालाजी हरेक कार्य करते हुवे खरच के विचार से उस कार्य को अच्छा बनाने का ख्याल बहुत रखते थे. लालाजी का कार्य विषय मुद्रा लेख यह था कि " महंगा रोवे एक वार सस्ता रोवे वारम्वार." और. दूहा—"मांगन आया सो मरगया, मरे सो मांगन जाय. सब के पहिले वो मरा, जो होंत ही नटजाय " इस मे लालाजी हरेक कार्य को यथोचित्त उत्तम ही बनाते और प्रार्थिक की प्रार्थना कदापि भंग नहीं करते, यथाशक्ति सहाय करते थे. गुप्तदान करने के लालाजी बडे शोकीन थे. लालाजी का वचन तो एक पत्थर की लकीर समान अचल था. लालाजी थोडे

चौलने वाले और कह बनाने से कर वर्तानें में अधिक खर्तीले थे. लालाजी यद्यपि
चूरत (पक्के) जैन साधु मार्गी धर्म के धारक थे तथापि व्यवहार साधने सब मतों से
मिले हुवे वक्तोवक्त यथोचित द्रव्यादि से सहयता करते ही रहते थे. जिस से लालाजी
सब के सन्मान पात्र बने थे. यों उपकार से और सत्ता से लालाजीने अनेकों को अपने ही
बना रखे थे. जिस से कोई भी लालाजी के मन उपरांत वर्ताव करने हिम्मत नहीं
करसकता था. लालाजी जैनधर्म के तो एक स्थंभ ही बने थे. लालाजी के हाथ से
कॉन्फरन्स की पांचवी बैठक, तीन महा पुरुषों का दीक्षा उत्सव, जैन ग्रन्थों का
अमूल्य प्रसार और जैन शास्त्रोद्धार यह चार कार्य जिस प्रकार महत्वता
के बने हैं, वैसे किसी साधु मार्गीय के हाथ से बने हों यह हमारे
सुनने देखने में आज तक नहीं आये. लालाजीने संसार व्यवहार के कार्य, पुत्र लग्न,
पिता का अवसर वगैरा में तथा दानशाला सदाव्रत हैरेक पानडी (पट्टी)में यथा योग्य चंदा
आदि में लाखों रुपे का खर्च किया उस का तो लेखा ही क्या, परन्तु जैन धर्मार्थ
लाख सवा लाख रुपे का खर्च किया. जिस की फेरिस्त आगे देखीये. लालाजी की
उदारता साधुमार्गी वर्ग में बड़ी ही आश्चर्य कारक और अद्वितीय देखाती है. लालाजी

अर्जी की आपका सुधारा करने का मौका है आप सर्व प्रकार जान हो इसलिये कुछ करना हो सो कर लीजीये. तव महाराज श्री ने विशेप परिचित पन्नालालजी कीमती वगैरा भाइयों वाइयों से खमत खामना की. प्रतिदिन तबीयत का वहत विगाडा होने लगा. श्रावण वद्य पंचमी को ओर भी परिचित श्रावक श्राविका को वोलाये और वहुत ही नम्रता पूर्वक खमत खामना किया ओर अपने आत्मा की निन्दा की. श्रावण वदी ९ मी को साधूमे में श्रावक दुवाचंदजी, और श्राविका गुलाबवाइ यों तीनो तीर्थ सामन अपने पास एकान्त में वैठाकर संयम ग्रहण कियेवाद जो जो दोप लगेथे.

---

१. प्रतापगड के जसराजजी रामावत के पुत्र पन्नसीनेनसी दुकान के रोकडीया कि जिनोंने येरी पास दीक्षा धारनकी. और देवऋपिजी नाम दिया इनाका विशेप वृतान्त आगे कहेंगे.

२ मारवाड में नागोर के पास डेह ग्राम की मोतीलालजी श्रावगी की पुत्री हैद्रावाद मे श्रावगी रामनाथजी के पुत्र जवारमलजी की पत्नी साधुमार्गी धर्म की चुस्त श्राविका वन प्रतिक्रमण १० जैन शास्त्र १८ ज्ञान सागर थोकडे. और अनेक दिगम्बर ग्रन्थो की पाठिक अनेक वाइयों को स्वधर्मी बनाने वाली. रात्री का चारों आहार का,लीलोतरीका,पानी और सध्या हो(३८वर्ष की वयमें)ब्रह्मचर्य इन चारों खंध की धारक चारों तीर्थ को वहुत साता उपजाने वाली. अत्यन्त दुकर निरत तप से

सब प्रकाश कर निर्मल मन से आलोचना निन्दना कर पावित्र आत्मा का जीवन अन्न आहार के प्रत्याख्यान किये. दुग्ध औषधि वगैर ८ द्रव्य रखे वैसे ही क्षेत्र की वस्त्र की भी मर्यादा की. गृहस्थों से वार्तालाप बंध कर आत्मध्यान में निमग्न बने. और मुझे कहा कि—तू अवसर देख कर संथारा करा देना. क्यों कि यह मुशलमानी बस्ती है इस लिये वक्त पर किसी प्रकार का उपद्रव प्राप्त होने नहीं पावे. तबसे ही शास्त्र स्वाध्याय आलोचना पाठ मृत्युमहोत्सव समाधिमरण वगैर दत्तचित्त से श्रवन करने लगे. श्रावण वद्य १२ को आधी रात्रि बाद, तपस्वीजी के शरीर के चिन्है पलटे. नाशीका का वायु शीतल चलने लगा, प्राणेन्द्रिय वक्र बनी. करणलोल करडी पडी, बोलने में भी फर-कवडा स्मृतिहीन हुई, तृषा का अत्यन्त परिषह उत्पन्न हुवा वगैरा चिन्है देख मुझे संशय

अपने शरीर को हाड पिंजर काष्टभूत बनाने वाली. कॉन्फरन्स की महिला परिषद में अकर्पित प्रभाविक लेक्चर की दता हजारों जैन धर्म के पुस्तकों को गुप्त परमार्थ इच्छक सोभाग्यवती श्राविका बाइ के नाम से अमूल्य दान दिलाने वाली. यावत् आयुष्य के अन्त तक व्रतों का आराधन कर आलोचना निन्दना करने वाली गुलाबबाइ का गुनों का एक पुस्तक गुलाबी प्रभा नाम का अलगही छपा है.

धर्मात्माओं के तो दासानुदास बन जाते थे. दाखला-प्रवर पंडित ' श्री रत्नऋषिजी, महाराज मे प्रतिबोध पाइ हुई पारगांव के पटिल की पुत्री तपस्वीजी, सोनबाइ जब महाराज श्री के दर्शनार्थ हैद्राबाद आइ और मासक्षमन का तप किया था उसे लालाजीने अपने ही घर में रख कर खूब विनय वैयावच करवा कर सर्व प्रकार साता उपजवाइ थी. तप का प्रत्याख्यान उत्सव भी बडे ही ठाठ से कराया था. इस प्रकार लालाजी दृढधर्मियों को जैन प्रभावकों को देख कर हर्षानन्द में गर्काव होजाते थे. उन को नमस्कार करने लग जातेथे. लालाजी के तेज प्रताप कर हैद्राबाद में कोइ भी साधुमार्गीयों के धर्मार्थ अपशब्द भी निकालने समर्थ नहीं होता था. कितनेक धर्म के द्वेषीयों मनमें ही जल सुस्त बनजाते थे. लालाजी जैसे साधु मार्गीय होने मे हैद्राबाद में साधुओं का बडाही महात्व बढाथा. कइ जैन मतावलम्बीयों तथा अन्यमतावलम्बीयों चरचा करने आतेथे वे मर्यादित वचन में ही वार्तालाप करते थे. कोइ भी वितंडावाद करने हिम्मत नहीं करता था. कदापि कोइ बोलता तो परभारे लालाजी उसे मार्मिक और मधुर शब्द में ऐसा उत्तर देते कि वह प्रत्युत्तर कर सकताही नहीं. लालाजी प्रसंग संभालने में बडे कुशल थे. वक्त पर किसी भी कार्य

में पीछा नहीं देखते थे. जब से हमारा हैद्राबाद में रहना हुआ तब से सदैव निरतंर लालाजी व्याख्यान का लाभ लेते थे और जिस प्रकार पुंगी के रागमे सर्प तल्लीन बन जाता है त्यों लालाजी जिन वचनों में तल्लीन बन एकाग्रता से श्रवण कर उस की रहस्य अच्छी तरह ग्रहण करते थे. वक्तोवक्त प्रश्नोत्तर से खुलासा भी सम्यक् प्रकार कर लेते थे. जिस से लालाजी बडे ही शास्त्रको विद बन गये थे. इत्यादि लालाजी के गुनों का कहांतक कथन किया जावे. लालाजी के समान दीर्घदर्शी धर्मप्रेमी द्रढधर्मी संघ वात्सल्य दानवीर उदारपरिणामी धर्म स्तंभ नररत्न जगत् में विरले ही होंगे. इस प्रकार लालाजी सुखदेवसहायजी धर्म के स्तंभ रूप बने. तन मन धन कर खूब ही धर्म को दीपाने लगे.

सं० १९७१ में श्री केवलऋषिजी, महाराज के अतीसार [रक्तो की दस्तो] की बिमारी सुरु हुई. अनेक उपाव किये परंतु आराम हुआ नहीं. शक्ति कमी पडते २ उठने बैठने की शक्ति नहीं. रही वैशाख शुक्ल २ से हिरना फिरना भी बंद होगया. इस प्रकार महाराज श्री के तन की नादुरस्ती देखकर लालाजी ने महाराज श्री से नम्र

उत्पन्न हुवा और नम्रता से अर्ज की कि महाराजजी! अब होंशार हो जावो. वक्त आगया है. यों कह शास्त्रादि सुनाने शरु किये. प्रतिक्रमण को वक्त प्रतिक्रमण कराया परंतु तपस्वीजी को भान नहीं रहने से दूसरी वक्त बोले कि प्रतिक्रमण क्यों नहीं किया. यों दो तीन वक्त बोले तब मैं बोला कि आप को प्रतिक्रमण तो सुनाया परंतु भान नहीं रहा. दिवसोदय हो नवकारसी दिन आते पानी पिलाया. लालाजी वगैरा लोगों को खबर होते तत्काल आये. तब मैं लालाजी से बोला की महाराज श्री के शरीर के चिन्ह देखते आज का दिन निकालना बडा कठिन है. सब की इच्छा हो तो संथारा करावू. लालाजीने उसी वक्त बडे २ डाक्टरों वैद्यों को बोलाये. सब परिक्षा कर बोले कि अभी कुछ हरकत नहीं है. तब लालाजी बोले अभी तो सागारी संथारा करा दीजीये. फिर जैसा अवसर हो वैसा कराइये. उसी वक्त महाराज श्री को सागरी संथारा कराया. व्याख्यान हुवे बाद तपस्वीजीने हुकम दिया की आहार लावो और पारणा करो. गुरु आज्ञा प्रमाणकर तत्काल कुछ आहार लाकर पारणा किया. कि उसी वक्त महाराजने बोलाया अमोलक! अब मुझे प्रतिक्रमण सुना और कहने लगे कि यह पानी की मटकी सन्मुख क्यों रखी है: तब मैंने पूछा कहां है? वे बोले यह देख, रखी तो है. तब आश्चर्य कर पाडोसी के घर

मैंने देखा तो भित्तिकेंन्तर से मटकी पडी हुई थी. जिस से जानने में तो आया की कुछ ज्ञानावरणीय कर्मों का क्षयोपशम हुआ देखाता है. परन्तु गडवड में कुछ पूछ सका नहीं. फिर तपस्वीजी बोले-मुझे प्रतिक्रमण सुनाव. मेरे मन में विचार तो हुआ कि-यह प्रतिक्रमण का कौनसा वक्त ? तो भी गुरु आज्ञा प्रमान कर आलोचना विधि से नहीं परन्तु प्रत्याख्यान विधी से प्रतिक्रमण सुनाया, पांचों महाव्रतों का पुनःउच्चारन कराया, पांचों आवश्यक तपस्वीराज महाराजने दत्तचित्त से श्रवन किये और छट्ठा·आवश्यक आया तब बोले कि—अब मुझे जावज्जीव पर्यन्त तीनों आहार के प्रत्याख्यान हैं. सर्व पदार्थों से ममत्व भाव वोसराता हु. यों कह मुशकिल से करवट फिरा ही कि गफलत में आगये. और अमोलक ! शब्दोच्चार किया, तब मैं बोला—महाराजजी ! संसारिक नाते तो अनन्त वक्त होगये हैं. अब आप ओर विचार को छोड एकाग्र लव निजात्म गुनोंमें लगाइये, आत्म रूप परमात्म के स्मरण में लीन हो प्राप्त अमूल्य अवसर को लेखे लगाकर कल्याण कीजीये ! यों सुन महाराज ध्यानारुढ बने. मैं चारों सरणे चारों मंगल नमुत्थुणं लोगस्स नवकार मंत्र वगैरा श्रवण कराता रहा, उर्द्ध श्वास का उठाव होते ही चारों आहार के प्रत्याख्यान कराये. वे भी महाराजश्रीने आंखों खोलकर श्रद्ध लिये, साडीदश बजे

थारा

संथारा किया था और देड (१॥) बजे बहुत ही समाधि भाव से तपस्वीराज महाराज इस नश्वर शरीर को छोडकर स्वर्ग लोक को पधार गये. उसी वक्त महाराज श्री के शरीर को नवे वस्त्र से सजकर ऊंचे पाट पर पद्मासन लगा कर बैठाये.

उस वक्त लालाजी वादशाह के पास थे, खबर होतेही उठे, वादशाहने पूछा क्यों ? लालाजी बोले-हमारे गुरु महाराज का इन्तकाल होगया है, वादशाहने तत्काल जाने की रजा दी. लालाजीने अश्रूधारा से हृदय पखालते हुअे तपस्वीजी महाराज के शव के दर्शन किये. और उसी वक्त लालाजी के घर से टेलीफोन द्वारा, हैद्रावाद, कोठी, सीकंद्रावाद, अलवाल, आदि के मुख्य स्थान में खबर पहोंचाई. तैसे ही सेवक से भी घरोघर समाचार पहोंचाये. उसीवक्त सेंकडोगम स्त्री पुरुष आने लगे. महाराज श्री के शरीर को केसर चंदन अत्तरादी से अर्चित किया. विमान की तैयारी करने लगे, उत्तम काष्ट से चतुर कारीगरों के हाथ से विमान बनाकर जरी के ताश से उसे मंडा, ऊपर पांच रुपेरी कळश पांचवे मध्य के कलश पर सोनेरी तुर्रा लगाया. महाराज श्री के शव को विमान में बैठाया कि तत्काल ही मानो विरह उष्णता से उकलते हृदयों को शांत करने महावृष्टि

होने लगी. उस वृष्टि में ही विमान को श्रावको उठाकर जय २ नन्दा जय २ भद्दा भद्दा भद्दंते शब्द का गर्जारव करते चारकमान, चौक बजार के मध्य में होकर पुरानेपुल पर ले गये, मुसानदी के कंठपर चन्दन नारियल कपूर अगर तगर आदि की चिता में महाराज श्री के शरीर को स्थापन कर अग्नि संस्कार किया. अग्नि संस्कार हुए पीछे सब लोग स्वस्थान आये. लोगों के मन में डर बहुत था की शीत का उपद्रव होगा परन्तु किसी को भी किसी प्रकार की तकलीफ न हुइ सब आनन्द में रहने लगे. *

तपस्वीजी महाराजने सं० १९७१ के श्रावण वद्य १३ मंगलवार को स्वर्ग गमन किया उसवक्त एक वर्षमें पुरा होवे वैसा कल्याण तप मैं कर रहा था. तत्पश्चात बेले २ पारने सुरु किये. बीच में अठाइ वगैरा भी तप किये. चार महीने में फक्त २८ दिन आहार किया. और चौमासा उतरे बाद

* तपस्वीजी का कुल तप-१-२-३-४-५-६-७-८-९-१०-११-१२-१३-१४-१५-१६-१७-१८ १९-२०-२१-३१-३३-४१-५१-६१-७१-८१-८४-९१-१०१-१११-और १२१. इस तप में तक्र पानी, सूंघने की तम्बाकू, सूंठ, और काला नमक यह ५द्रव्य लगाते. इस सिवाय ६ महिने ति विहार एकान्तर उपवास वगेरा छुटक तप भी बहुत किया.

विहार करने का निश्चय किया. क्योंकि १००-१०० कोश में किसी साधु का योग नहीं होने से तथा रास्ता भी विकट होने से शीत काल में शीघ्रमेव सुखाकारी स्थान पर पहुंच जावें. इस समय चातुर्मास में गुणस्थान रोहण अढीशतद्वारी ग्रन्थ छपने का काम चलरहा था उस के साथ ही श्री केवल ऋषिजी महाराज के जीवन चरित्र की डाली बना कर भी छपाई.

मुक्ति सोपान गुणस्थान रोहण ग्रन्थ का कार्य चौमासे के अन्दर समाप्त हो जावे तो चौमासा उतरे विहार सुभिता के साथ होवे इस विचारने शास्त्रोद्धार के कार्य की कल्पना खडी की. सब शास्त्रों के फारम कितने होवे और उनको छपाने का खर्च कितने हो? ऐसा हिसाब मनोमय लगाया तो १०००-१२०० फारम का अन्दाज सब शास्त्रों के होने का जचा. उस वक्त एक फारम के बारा रुपे लगते थे. तो अंदाज १५०० के खरच में सब शास्त्र छप जावें. यह विचार किया. जब प्रेस में जाने का प्रसंग आया तब फक्त उन को लालच दे काम शीघ्रता से निकालने के लिये (न की काम होने की स्वप्न में भी आशा से) कहा कि जो यह काम कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा पहिले कर दोगे तो एक काम १०००-१२०० फारम का भी है. यह सुन वे खुशी हुवे और मुद्दत सिर काम

अभिग्रह

कर देने का वचन दिया. पीछा स्वस्थान आया, लालाजी व्याख्यान श्रवणार्थ आये तब अनायास प्रेस के मेनेजर को दी हुई लालच की बात निकल गई. लालाजीने प्रश्न पूछा ऐसा काम कौनसा है ? मैंने उत्तरदिया की जो ३२ ही शास्त्र पूर्ण छपाये जावें तो अन्दाजन इतने फारम होने का संभव है. यह सुन उस वक्त लालाजी कुछभी नहीं बोले. जब से हैद्राबाद में तपस्वीजी महाराज के सेवा के लिये ही मुझे रहने का प्रसंग प्राप्त हुवा तब से मैंने यह अभिग्रह धारन किया था कि-जब तक महाराज श्री विराजमान रहेंगे तब तक मैं किसी को भी साधु नहीं बनावूंगा. इस अभिग्रह का यही प्रयोजन कि साधु को एक स्थान रहना बडा विकट होता है. गाढागाढी कारण से ही रहना होता है. जो नवे साधु हों और उन का मन नहीं लगे तो बडी मुशीबत प्राप्त हो जावे, क्लेश वृद्धि से जैनमार्ग की हीनता होवे. और जो विहार का प्रसंग हो तो तपस्वीराज की महा असातना हो. इस लिये दूसरे साधु को इस वक्त बनाना अनुचित्त है. ऐसा अभिग्रह धारन किये बाद १०-१२ जने दीक्षा ग्रहण करने आये उन को यही उत्तर दिया जाता कि-अन्य बहुत से उत्तम साधुओं हैं उन के पास दीक्षा लीजीये. मेरा अभी किसी को दीक्षा देनेका विचार नहीं हैं. महाराज श्री का आयु अंत के तीन महिने बाकी रहे तब कुडगाव (अहमदनगर)

म्हारा भाव दीक्षा लेने का है. मैं समझा की यह मुझे दिलासा देते हैं. ऐसा जान उत्तर दिया कि दुवाचंदजी, ! मुझे किसी प्रकार घबरावट नहीं हैं, न मेरे किसी बात का टोटा है. मेरे गुरु महाराज श्री रत्नऋषिजी महाराज के पास चौमासा हवे बाद चला जावूंगा. फिर दुवाचन्दजी, बोले-बापजी महाराज ! म्हारा सच्चा भाव दीक्षाका है. महाराज बोले-तुमारे माता भ्रात पुत्र पौत्र सुख सम्पति की जोगवाइ होते हुवे वैराग्य प्राप्त किस प्रकार हुवा ? दुवाचंदजी बोले-जिस वक्त यहां प्लेग की बिमारी चली थी तब मैं विकाराबाद सहकुटम्ब जा रहा था. वहां मुझे स्वप्न आया था—एक ज्योतिषी आकर बोला—जय हो. विजय हो फिर मैरी जन्म पात्रिका देख कर बोला—फाल्गुन शुक्ल पंचमी से पूर्णिमा तक तुमारा वियोग होगा, इस प्रकार कहते के साथ ही मैं जाग्रत हो घबराने लगा. और धारन किया कि जो इस उपसर्ग से बच जावूंगा तो दीक्षाले वूंगा. उस ज्योतिषिने कहा था उस ही वक्त मेरी पत्नी का वियोग हुवा.तब मैं समझा कि यह मेरी बला टली. तब से ही मेरी यह वैराग्य दशा है. मैंने नवेशहर में पुज्य श्री लालाजी महाराज के मुखारविंदसे जाव जीव ब्रह्मचर्य व्रत भी धारन कर लिया है. इस लिये मेरी बात झूठी मत समझो. तब मुझ को कुछ प्रतीति हुई और बोला—अभी

तीन दीक्षा

अकेला रहने से जगत व्यवहार अच्छा नहीं लगे इस लिये. एक सहायक बनाने की उम्मेद हुई. धर्म ध्यानार्थ आते लोगों के साथ प्रसंगानुपेत वार्तों होने लगी. भादवा वद चतुर्दशी को बहुत श्रावकोंने पौषध व्रत किये थे, श्याम को प्रतिक्रमण स्तवनादि हुवे बाद श्रावकों में यह चरचा निकली कि-महराज यहां तीन ठाने से आये थे और अकेले रह गये, यह अपने क्षेत्र की अच्छी नहीं लगे. इसवक्त कोइ भी पुण्यात्मा क्षेत्र का रूपक रखे तो अच्छी बात. तब उस में से कोई बोला कि-मैं आज्ञा की कोशीश करूंगा. कोई बोला-यहां बारा महिना रहें मुझे पढावे तो मैं दीक्षा लूं. यों वार्तालाप करते २ सब स्वस्थान जा सूते. मैंने भी शयन किया,

उसवक्त प्रतापगढ (मालवे) वाले हूंमडवंशावतंसक धर्म धुरंधर शेठ बच्छराजजी के पुत्र बचपने में धर्म ज्ञानाभ्यास शास्त्राभ्यास करने वाले प्रतापगढ, के तीनों चौमासे में मेरी सेवाकर धर्म प्रेमी बने हुवे भाइ दुवाचंदजी जो उस वक्त हैद्राबाद, रेसीडेन्सी में पन्नसी नेनसी की दुकान के रोकडीये थे, उनोंने भी वहां पौषध व्रत किया था. सब श्रावकोंने शयन किये बाद दुवाचंदजी बोले कि—बापजी !

म्हारा भाव दीक्षा लेने का है. मैं समझा की यह मुझ दिलासा दत है. [illegible] जान उत्तर दिया कि दुबाचंदजी, ! मुझे किसी प्रकार 'घबरावट नहीं है, न मेरे किसी बात का टोटा है. मेरे गुरु महाराज श्री रत्नऋषिजी महाराज के पास चौमासा हवे बाद चला जावूंगा. फिर दुबाचन्दजी, बोले-बापजी महाराज ! म्हारा सच्चा भाव दीक्षाका है. महाराज बोले-तुमारे माता भ्रात पुत्र पौत्र सुख सम्पंति की जोगवाइ होते हुवे वैराग्य प्राप्त किस प्रकार हुवा ? दुबाचंदजी बोले-जिस वक्त यहां प्लेग की बिमारी चली थी तब मैं विकाराबाद सहकुटम्ब जा रहा था. वहां मुझे स्वप्न आया था—एक ज्योतिषी आकर बोला—जय हो. विजय हो फिर मैरी जन्म पात्रिका देख कर बोला—फाल्गुन शुक्ल पंचमी से पूर्णिमा तक तुमारा वियोग होगा, इस प्रकार कहते के साथ ही मैं जाग्रत हो घबराने लगा. और धारन किया कि जो इस उपसर्ग से बच जावूंगा तो दीक्षाले वूंगा. उस ज्योतिषिने कहा था उस ही वक्त मेरी पत्नी का वियोग हुवा.तब मैं समझा कि यह मेरी बला टली. तब से ही मेरी यह वैराग्य दशा है. मैंने नवेशहर में पुज्य श्री लालाजी महाराज के मुखारविंदसे जाव जीव ब्रह्मचर्य व्रत भी धारन कर लिया है. इस लिये मेरी बात झुठी मत समझो. : तब मुझ को कुछ प्रतीति हुई और बोला—अभी

वाले भीमराजजी गुगलीया अपने १५ वर्ष का लडका मोहनलाल, को लेकर आये और बोले कि-आप को बंबइ में वचन दिया था * तदनुसार यह चेला लाया हुं इसे दीक्षा दीजीये. इसने दशवैकालिक संपूर्ण उत्तराध्ययन के १६ अध्ययन, अमरकोश और कितनेक थोकडे कंठाग्र किये हैं, यह बारा महीने से चारों खन्धका पालन करता है. अपने हाथ से मस्तक के बालों का लोच भी इसने किया है, आप के योग्य है. तब

* मोती ऋषि की दीक्षा इन के ही घर से हुइ थी. जब 'मोती ऋषि. बंबइ में स्वर्गस्थ हुआ और यह दर्शनार्थ आये थे. तब मैं बोला था की तुमारा मोती तो गया. तब भीमराजजी बोले आप के लिये केइ मोती पेदा होंगे. अपने बडे पुत्र को साथ लाये थे. उसे आगे कर बोले इसे चेला बना लीजीये. महाराज बोले-यों चेला होता है? इसे महीने दो महीने मेरे पास रखो, यह मेरी प्रकृति से वाकेफ हो मैं इस की प्रकृति से वाकेफ होवुं फिर देखायगा यों गुन चुन्नीलाल को बंबइ छोड के कुडगाव गये,उन के पिता बुद्धमलजी लडते हुवे कहने लगे कि जल्दी छोरेको ले आ,नहा तो घरमें मत आ, भीमराजजी फिर बंबइ आये, और चुन्नीलाल को लेगये. तब से ही उन्होंने अपने छोटे पुत्र मोहनलाल को महाराज का शिष्य बनाने का निश्चय कर धर्म मार्ग में डाला था. अर्थात साधु संगत धर्म शिक्षण में हरकत नहीं करते रहे.

मैं बोला कि-महाराज श्री विराजे रहें वहां तक किसी को दीक्षा देने का मेरा विचार
नहीं है. अब महाराज दो चार महीने के प्राहुणे देखाते हैं, महाराज देवलोक पधारे बाद
जो स्पर्शना होगी सो देखा जावेगा. इस के ऊपर श्री रत्नऋषिजी महाराज का पूर्ण
ऊपकार है वे मेरे परमोपकारी गुरुवर्य हैं उन के पास ही इस को दीक्षा दिलाना उचित है.
यह सुन भीमराजजी उदास हुओ और लालाजी पास मोहनलाल को लेजा के बोले कि-
लाला साहेब मैं सेरका होकर आया हुं और पावका होकर जावूंगा. देख लीजीये आप छोरे
को. इस में किसी तरह की खोड हो तो. लालाजी भी आश्चर्य चकित हो बोले-भाईजी! आज
तक यहां बहुत से उम्मेदवार आये हैं और ऐसे ही चले गये हैं. ऐसा सुन भीमराजजी
बहुत दुःखित हृदयी बन पीछे चले गये. इस प्रकार किसीको भी दीक्षित नहीं किया.

अमोलक अकेला रह जायगा, ऐसी चिन्ता जब २ तपस्वीजी महाराज करते
तब २ मैं कहता कि आप मेरी चिन्ता मत करो, आप की कृपा से मुझे सहायक
बहुत मिल जायेंगे. तपस्वीराज श्री केवल ऋषिजी, महाराज स्वर्गस्थ हुवे बाद मैं अकेला
रहगया. मुझे कभी अकेला रहने का प्रसंग नहीं आया था जिस से दिल दुखा,

अकेला रहने से जगत व्यवहार अच्छा नहीं लगे इस लिये एक सहायक बनाने की उम्मेद हुई. धर्म ध्यानार्थ आते लोगों के साथ प्रसंगानुपेत वार्तो होने लगी. भादवा वद चतुर्दशी को वहुत श्रावकोने पौषध व्रत किये थे, श्याम को प्रतिक्रमण स्तवनादि हुवे बाद श्रावकों में यह चरचा निकली कि-महराज यहां तीन ठाने से आये थे और अकेले रह गये, यह अपने क्षेत्र की अच्छी नहीं लगे. इसवक्त कोइ भी पुण्यात्मा क्षेत्र का रूपक रखे तो अच्छी बात. तब उस में से कोई बोला कि-मैं आज्ञा की कोशीश करूंगा. कोई बोला-यहां बारा महिना रहें मुझे पढावे तो मैं दीक्षा लूं. यों वार्तालाप करते २ सब स्वस्थान जा सूते. मैंने भी शयन किया,

उसवक्त प्रतापगढ (मालवे) वाले हूंमडवंशावतंसक धर्म धुरंधर शेठ वच्छराजजी के पुत्र बचपने में धर्म ज्ञानाभ्यास शास्त्राभ्यास करने वाले प्रतापगढ; के तीनों चौमासे में मेरी सेवाकर धर्म प्रेमी बने हुये भाइ दुबाचंदजी जो उस वक्त हैद्राबाद, रेसीडेन्सी में पन्नासी नेनसी की दुकान के रोकडीये थे, उनोंने भी वहां पौषध व्रत किया था. सब श्रावकोंने शयन किये बाद दुबाचंदजी बोले कि—बापजी !

म्हारा भाव दीक्षा लेन का है. मैं समझा की यह मुझे दिलासा देते हैं. ऐसा जान उत्तर दिया कि दुवाचंदजी, ! मुझे किसी प्रकार घबरावट नहीं हैं, न मेरे किसी बात का टोटा है. मेरे गुरु महाराज श्री रत्नऋषिजी महाराज के पास चौमासा हवे बाद चला जावूंगा. फिर दुवाचन्दजी, बोले-बापजी महाराज ! म्हारा सच्चा भाव दीक्षाका है. महाराज बोले-तुमारे माता भ्रात पुत्र पौत्र सुख सम्पति की जोगवाइ होते हुवे वैराग्य प्राप्त किस प्रकार हुवा ? दुवाचंदजी बोले-जिस वक्त यहां प्लेग की बिमारी चली थी तब मैं बिकारावाद सहकुटम्ब जा रहा था. वहां मुझे स्वप्न आया था—एक ज्योतिषी आकर बोला—जय हो. विजय हो फिर मैरी जन्म पत्रिका देख कर बोला—फाल्गुन शुक्ल पंचमी से पूर्णिमा तक तुमारा वियोग होगा, इस प्रकार कहते के साथ ही मैं जाग्रत हो घबराने लगा. और धारन किया कि जो इस उपसर्ग से बच जावूंगा तो दीक्षाले वूंगा. उस ज्योतिषिने कहा था उस ही वक्त मेरी पत्नी का वियोग हुवा.तब मैं समझा कि यह मेरी बला टली. तब से ही मेरी यह वैराग्य दशा है. मैंने नवेशहर में पुज्य श्री लालाजी महाराज के मुखारविंदसे जाव जीव ब्रह्मचर्य व्रत भी धारन कर लिया है. इस लिये मेरी बात झठी मत समझो. तब मुझ को कुछ प्रतीति हुई और बोला—अभी

यह बात गुप्त रहने दो, आज्ञा प्राप्ति का उपाय करो. जो स्पर्शना होगा सो देखा जावेगा. दुल्लाचंदजी बात कबूल कर आज्ञा प्राप्त करने के प्रयत्न में लगे. मैंने यह बात जन्म के दिन एकान्त में लालाजी को जनाइ. लालाजी सुन कर खुशी हुवे और कहा कि—यह आप के योग्य है ना मत कहो. दुल्लाचंदजीने अपनी माता की आज्ञा मंगी उस का कहना हुवा मैं तो धर्म काम में अन्तराय नहीं देवूं. सुख होवे सो करो. भाइ रूपचंदजी से पूछा उनने भी कुछ पूछा ताछी कर आज्ञा दी. पुत्र जवहरलालजी को पूछा उनने प्रथम तो मोहोदय से मना की फिर बहुत समझाने से आज्ञा दी. फिर प्रतापगढ गये वहां इन के सम्बन्धी दिगम्बर आम्नाय वाले थे, वे दीक्षा का नाम सुनते ही कहने लगे भुरकी नहाखी है, मस्तक मुंडाया न्हलाया वगैरा केइ काम किये परंतु भुरकी उतार सके नहीं. वहां *बालब्रह्मचारी पंडित प्रवर* श्री सुखा ऋषिजी महाराज के शिष्यवर्य श्री अमी ऋषिजी महाराज बिराजमान थे, वे भी दीक्षा के भाव सुन बहुत खुशी हुवे. प्रतापगढ के प्रधान सुजानमलजी बांठीया और सेक्रेटरी रिखबदासजी थे, वे भी यह बात सुन बहुत खुशी हुवे, उनने इन का अच्छा आदर सत्कार किया. दुल्लाचंदजी अपनी पुत्री और बहिनों को साथ ले कर पीछे हैद्राबाद आये. और दीक्षा की तैयारी करने लगे.

एक वक्त मैं उन की माता भाइ बेन पुत्र पुत्री के आगे कहने लगा कि—तुमने दीक्षा लेने का विचार किया वह अच्छा किया परन्तु जैसे तुम बैरागी हो वैसा ही योग्य स्थान देख कर दीक्षा लेवोगे तो तुमारी आत्मा का सुधारा होगा. मेरा आचार गोचार और ज्ञान तो प्रसिद्ध है. मैं पुस्तकादि छपाता हुं, पुस्तकों पत्रों मेरे हाथ के पारसलों में जाती हैं. और जो है सो प्रत्यक्ष देख रहे हो इस बात का पुक्त विचार करना चाहिये. तब दुवाचंदजी बोले कि-मेरा तो आप ही के पास दीक्षा लेनाका निश्चय है. मैं बोला-तुमारी इच्छा. मैंने तो अवल जो कहना सो कह दिया. मुझे भी साधु की चाह है.

दुवाचन्दजी के शरीर की सुकोमलता देख कर मुझे विचार होने लगा कि इन की वैयावच्च कौन करेगा. उस वक्त एक कस्तुरचन्द, नाम का श्रावक बोला कि मेरा इरादा आप के पास दीक्षा लेने का है. मैंने कहा मुझे मालुम नहीं तुम दुवाचन्दजी, से मिलो, वे कहे वैसा करो, उन का विचार भी दीक्षा लेने का हैं. यों सुन कस्तुरचंदजी भी खुशी हुआ और दुवाचदजी से मिला दोनों का विचार एक हुआ वह भी आज्ञा प्राप्ति के उपाय में लगा.

यह बात गुप्त रहने दो, आज्ञा प्राप्ति का उपाय करो. जो स्पर्शना होगा सो देखा जावेगा. दुवाचंदजी बात कबूल कर आज्ञा प्राप्त करने के प्रयत्न में लगे. मैंने यह बात जन्म के दिन एकान्त में लालाजी को जनाइ. लालाजी सुन कर खुशी हुवे और कहा कि—यह आप के योग्य है ना मत कहो. दुवाचंदजीने अपनी माता की आज्ञा मंगी उस का कहना हुवा मैं तो धर्म काम में अन्तराय नहीं देवू. सुख होवे सो करो. भाइ रूपचंदजी से पूछा उनने भी कुछ पूछा तासी कर आज्ञा दी. पुत्र जवहरलालजी को पूछा उनने प्रथम तो मोहोदय से मना की फिर बहुत समझाने से आज्ञा दी. फिर प्रतापगढ गये वहां इन के सम्बन्धी दिगम्बर आम्नाय वाले थे, वे दीक्षा का नाम सुनते ही कहने लगे भुरकी नहाखी है, मस्तक मुंडाया न्हलाया वगैरा केइ काम किये परंतु भुरकी उतार सके नहीं. वहां बालब्रह्मचारी पंडित पवर श्री सुखा ऋषिजी महाराज के शिष्यवर्य श्री अमी ऋषिजी महाराज विराजमान थे, वे भी दीक्षा के भाव सुन बहुत खुशी हुवे. प्रतापगढ के प्रधान सुजानमलजी बांठीया और सेक्रेटरी रिखबदासजी थे, वे भी यह बात सुन बहुत खुशी हुवे, उनने इन का अच्छा आदर सत्कार किया. दुवाचंदजी अपनी पुत्री और बहिनों को साथ ले कर पीछे हैद्राबाद आये. और दीक्षा की तैयारी करने लगे.

एक वक्त मैं उन की माता भाइ बेन पुत पुत्री के आगे कहने लगा कि—तुमने दीक्षा लेने का विचार किया वह अच्छा किया परन्तु जैसे तुम वैरागी हो वैसा ही योग्य स्थान देख कर दीक्षा लेवोगे तो तुमारी आत्मा का सुधारा होगा. मेरा आचार गोचार और ज्ञान तो प्रसिद्ध है. मैं पुस्तकादि छपाता हुं, पुस्तकों पत्रों मेरे हाथ के पारसलों में जाती हैं. और जो है सो प्रत्यक्ष देख रहे हो इस बात का पुक्त विचार करना चाहिये. तब दुवाचंदजी बोले कि-मेरा तो आप ही के पास दीक्षा लेनाका निश्चय है. मैं बोला-तुमारी इच्छा. मैंने तो अवल जो कहना सो कह दिया. मुझे भी साधु की चाह है.

दुवाचन्दजी के शरीर की सुकोमलता देख कर मुझे विचार होने लगा कि इन की वैयावच्च कौन करेगा. उस वक्त एक कस्तुरचन्द, नाम का श्रावक बोला कि मेरा इरादा आप के पास दीक्षा लेने का है. मैंने कहा मुझे मालुम नहीं तुम दुवाचन्दजी, से मिलो, वे कहे वैसा करो, उन का विचार भी दीक्षा लेने का है. यों सुन कस्तुरचंदजी भी खुशी हुआ और दुवाचंदजी से मिला दोनों का विचार एक हुआ वह भी आज्ञा प्राप्ति के उपाय में लगा.

चौमासा पूर्ण हुअे बाद में विहार कर कोठीपर आया, वहां पारणाकर सुस्त बनकर बैठाया, उस वक्त नागोर (मारवाड) के श्रीमान दृढधर्मी समदरीया शेठ रंगलालजी के धर्मात्मा पुत्र राजमलजी और इन के पुत्र रणजीतमलजी हैद्राबाद में व्यापारार्थ रहे थे. वे दर्शनको आये. और मुझे सुस्त देख बोले आप उदास क्यों हो ? मैंने उत्तर दिया कि दीक्षालिये बाद अकेला विहार का प्रसंग मुझे आजही पडा है. इस लिये जरा सुस्ती आगइ. तब राजमलजी बोले आपके चेलेका क्या टोटा है मेरे जैसे बुढे को पसंद करते होवो तो मैं तैयार हुं, महारज बोले—राजमलजी ! तुम बडे २ उत्तम साधुओं की सेवा भक्ति किये हुअे हो, तुमारी आमना भी श्री हुकमचंदजी महाराज की सम्प्रदाय की है, मेरे पास दीक्षा लेने का नाम सुन मुझे आश्चर्य होता है. ऐसे २ उत्तम-सन्तो को छोड मेरे जैसे शिथिलाचारी पास दीक्षा लेने का कहते हो ? राजमलजी बोले—बापजी ! मेरा बुढापा है जो सुख२ से जन्म पूरो होवे ऐसा ठिकानो देखनो पडे. ज्यादा साधुओं के झगडे में पडने के मेरे भाव नहीं हैं. आपके पास से निर्वाह होता देखाता है. इस लिये जो आप की इच्छा मुझे साधु बनाने की हो तो मैं नागोर जाकर पत्नी पुत्रवधूकी आज्ञा लावूं. मैं बोला-दुबाचंदजी से पूछो उन के भाव भी दीक्षा लेने के हैं वे कहे सो करो. यों सुन

राजमलजी भी खुशी हुवे. तीनों का एक विचार हुवा. तत्काल राजमलजी पुत्र सहित मारवाड गये. अपनी पत्नी के आगे दीक्षा की बात निकलते ही उसे बुखार आगया. उसे शांत कर समझाइ, आज्ञा प्राप्त की, पीछे हैद्राबाद आये.

अष्टमी को बहुत से लोगोंने दया पाली थी, उन मे कितनेक श्रावको कोटडी में बैटकर दीक्षाकी बातों करते हुवे तीन पहिले के ओर चौथे पाली (मारवाड) निवासी शेठ गंभीरमलजी के पुत्र उदयचंदजी सुराना हैद्राबाद में अफीम के इजारदार की दुकान पर तनकी काम पर रहते थे वे और पांचवा नानणा (जेतारण) के निवासी समदरीया जीतमलजी के पुत्र बादरमलजी यों पांचों दीक्षा का पुक्त मनसुबा कर मेरे पास आये और हाथ जोड खडे हो कहने लगे कि सोगन कराइये 'हम पांचों साथ ही आप के पास दीक्षा लेंगे. मैं बोला—मेरे पास दीक्षा लेना ऐसे नियम मै नहीं कराता हुं. परंतु दीक्षा लेना ऐसा नियम कराता हुं. इस प्रकार उन को प्रत्याख्यान दिया, यह बात लालाजी को मालुम होते ही रोम २ हुल्लसित होगये.

उक्त पांचों में से बादरमलजी की प्रकृति कुछ विषम देख मैं बोला की–तुम को तो मारवाड में किसी साधु के पास दीक्षा लेना उचित है. यों सुन वे सुस्त बने और चुप रहे. चारों की दीक्षा उत्सव के लिये आज्ञापत्र लिखवाकर उसपर उन के कुटुम्बों के हस्ताक्षर कराये,सबके राजी खुशी से हस्ताक्षर हुवे बाद दीक्षा उत्सवका मुहूर्त देखाने लालाजी सुखदेवसहायजी, पन्नालालजी कीमती, शिवसहायमलजी प्रमुख श्रावको महाराज के सन्मुख बैठे और राज्यमान ज्योतीष शास्त्र विशारद पंचाग कर्ता पंडित ' गोपालजी, को बोलाने मनुष्य भेजा. बाद सब के सन्मुख ' मैं वैरागीयों को उद्देश कर कहने लगा–अहो भाइयों ! तुम मुझे शान्तस्वभावी शुद्धाचारी ज्ञान निधी जान कर मेरे पास दीक्षा लेते हो तो यह तुमारी धारना झूठी है. क्यों कि मेरी प्रकृति बडी क्रोधी है. स्वभाव बदले बार तबीयत हाथ में नहीं रहती है, इस लिये इस का पहिले विचार करलीजीये. तैसे ही मैं शुद्धाचारी भी नहीं हुं, पुस्तको छपाना, भिजवाना वगैरा जो मैरा आचार है सो तुम देख ही रहे हो. छापने का तो मुझे व्यसन रूप ही होगया है. और मैं ज्ञान निधि भी नहीं हुं जोड कला की हटोटी पडने से कितनी ढालों बनाइ है और इधर उधर के ग्रन्थों शास्त्रों में से संग्रह कर कितनीक पुस्तको बनाइ है. परंतु गुरुगम ज्ञान

मेरे पास विशेष नहीं है. मैं मेरी इच्छा होगी तो तुमको पढावूंगा. नहीं तो एक अक्षर भी नहीं देवूंगा. मैं गौचरी फिरने का बहुत आलसी हूं. इत्यादि मेरे आत्मा में अवगुण बहुत हैं वे मैं कहां तक कहूं और तुमारा भी मुझे बहुत विचार होता है क्योंकि दुवाचंदजी तो कहानजी ऋषिजी महाराज की सम्प्रदाय की आम्नाय वाले हैं बाकी तुम तीनों दूसरी सम्प्रदाय के आम्नाय वाले हो- मैं तुमारे कहने से मेरे आचारादि में किसी प्रकार का फरक नहीं करूंगा. मैं स्वेच्छाचारी हूं जो मेरे मन प्रमाने नहीं चले तो ओगा मुहपती लेकर निकला दिये जावेगे इत्यादि मेरा स्वभाव तुमारे से केवटाय तो मेरे पास दीक्षा लीजीये, डूबने की इच्छा हो तो मेरे पास दीक्षा ली जीये, और तीरने की इच्छा होतो भारत बर्ष में बहुत उत्तम पुरुषों साधु महात्माओं विराजमान हैं उन के पास दीक्षा लेने से आराम पावोगे और आत्मा का भी सुधारा होगा. चारों वैरागीयों हाथ जोड बोले आपकी इच्छा हो वैसा करना, हम तो आप की आज्ञा प्रमाने सदैव रहेंगे. इस प्रकार वचन दिये बाद लालाजी बोले—अब तो इन की अरजी आप को मान्य है. मैं बोला कि मैं तो अकेला हूं और मेरे मन में एक से अधिक साधु करने की नहीं थी परंतु यह चार जने तैयार हुवे, हैद्राबाद में यह

अपूर्व जैनोदय करने वाला प्रसंग देख मेरा मन भी चारों को दीक्षा देने का होगया है. जो कुछ मेरे कहना था सो कहदिया. इनोंने कबूल भी करलिया अब मुझे किसी भी बात की हरकत नहीं है. इतनी वातों हुई जितने में पंडित भी आगया. योग्य स्थान बैठ दीक्षा मुहूर्त निकाला. फाल्गुन शुक्ल १३ पुष्य नक्षत्र दो प्रहर मध्यान्ह काल वृषलग्न वर्षेश में उत्तम मुहूर्त है. यह मुहूर्त सबने हर्षानन्द से बधालिया. उसी वक्त २००० दीक्षा पत्रि का छपवाकर ग्राम में तथा देशावर के सैंकडों ग्राम भेजादी. दीक्षितों के लिये पात्रे की जोडी जो लालाजी रतलाम से लाये थे जो तपस्वीजीने रंगदे तैयार कर रखी थी वह काम में आगइ, कम्बलों लालाजीने बीकानेर से मंगाइ. रजोहरण नागोर से मंगाये, शास्त्रों १४ की पारसल भीनासर से बांठीयाजीने भेजी. ऊंच जाती के वस्त्र मंगाकर चोलपट्टक पछोडीयों झोली मुहपती नसीटीये वगैरा बनाये. गुलाब बाइ प्रमुख बाइयोंने चोलपट्ट चदर सींदी. उत्तम चित्रकारों के पास चदरों पर आठ २ मंगल के चित्र कराये. तैसे ही झोली मुहपती पर भी चित्रकराये. तीनों साधुओं के अलग २ सब उपकरणों एक टेबल पर दर्शनार्थ रख दिये.

अब बंदोला बैठाने बंदोला ठेहराने पंचों के सन्मुख सब कुटुम्ब की आज्ञा जाहिर करने वगैरा ठेहराव करने फाल्गुन वद्य १३ के दिन सभा कायम की. उसदिन के दो प्रहर होते हैद्राबाद कोठी सीकंद्राबाद अलवाल वगैरा बहुत से बजारों के जैनीयों तथा जैनेतर सैंकडों लोगों एकत्र हुवे. चारों वैरागीयों और उन के कुटुम्बीयों हाजर थे उन से पंचोंने दीक्षा की आज्ञा मांगी, तब दुवाचंदजी के और राजमलजी के कुटुम्ब ने आज्ञा देदी. उदयचंदजी का कोइ नजीक सम्बन्धी नहीं होने से उन के जाति भाइ की आज्ञा लीगइ और किस्तुरचंदजी के काका चांदमलजी सींगी बोले की यह जबरस्ती से कागज पर सही करा लाया है. परंतु हमारी आज्ञा नहीं है. यों सुनते ही कस्तुरचंद को उस ही वक्त बातल किया गया. तीनों कायम रहे. प्रथम बंदोला गुलाब बाइ का, कुंदनमलजी डोसीका, पूनमचंदजी लोढाका, पन्नालालजी कीमती का, मंडी बाजार वाले का, सीकंद्राबाद वाले सागरमलजी गिरधारीलालजी का, समरतमलजी रांका का. यों बंदोल कायम हुवे. और अन्तिम दिन का दीक्षा उत्सव तथा जीमन लालाजीने पंचों से याच लिया. सबने बहुत खुशी के साथ कबूल किया, सभा विसर्जन हुइ. दीक्षा उत्सव लालाजी की नवी हवेली में ही सरू हुवा. नियमित बंदोले में जीमन, तरह२की स्वारी पर

स्वा[illegible] आदि [illegible], अनेक लोगों से परिवारे भी जनार्थ जाते थे. बहुत से वंदोले में तो [illegible]-३५[illegible] मनुष्य जीमते थे. ग्राम को वरघोडा निकाला जाता था. यह अमोलक [illegible] कितनेक साधुमार्गीयों के द्वेषीयों वन सिरकार की तरफ से कुटुम्ब की तरफ से कितनी गडबड भी मचाइ थी. परंतु पुन्य पाये काम होने से और लालाजी के तेज प्रताप से कुछ चला नहीं. फाल्गुन शुक्ल एकादशी से बाहिर ग्राम से मनुष्यों आने लगे. बंबइ, मारवाड, मेवाड, मालवा,पंजाब वगैरा बहुत स्थानों के मनुष्यों आये. सब लालाजी के हवेली में सुखस्थान उतारे. खान पान शयनासन वगैरा सुखद इन्तजाम लालाजी की तरफ से किया गया. फाल्गुन शुक्ल १२ की रात्री का बाइयों ने धर्म जागरण किया. तेरस को प्रातःकाल से ही वैरागीयों को केसरीयां पोशाक और बहु मूल्य भूषणों से भूषित कर वरथाल अनेक मेवामिष्टान्न से भरा हुवा उस में से वैरागीयोंने एक ग्रास ग्रहण करते ही सबने लूंट लिया. तीनों वैरागीयों तीनों शिबिका में आरूढ हुवे. उसे प्रथम तो लालाजी प्रमुख श्रावकोंने उठाइ और फिर एक ही पोषाक में सज किये हुवे शिबिकावाहकोंने उठाइ.हाथीयों घोडे पलटनों नगारा निशान बेंड बाजा, मशकी बाजा तासे नगारे आदि तरह २ के वादिंत्रो को बधिर करते जय हो विजय हो अनजी को

जीतो, जीतेको प्रतिपालो,यों श्रावको गर्जारव करते हुअे, पीछे श्राविकाओ आदि स्त्रीयों के गण तरह २ के पौपाक में सज हुइ भूपणों से भलकाती धर्म उत्साहसे उमंगाती तरह २ की रागनीयों वैरागीयों के गुणानुवाद से गगन गर्जाती चली. चारकमान पत्थर-गट्टी, दिल्लीदरवाजे से नवेपुल अफजलगंज कोठी होती हुइ मशीरावाद के लालाजी के वडे मनोहर अनेकऋतु के फूल फलों से आच्छादित रंगरंगित ऊंच भव्य दो बंगलों से सुशोभित ऊंच २ अनेक सरसो के वृक्ष, आम्ब, जम्ब, केले, नारंगी आदि के वृक्षो से परीमंडित, बडे बडीचे में स्वारी आई जय २ कार से बगीचे को गरणा दिया. चौगान में सब मनुष्यों एकत्र हुअे तब सब ऋद्धि युक्त वैरागीयों के फोटो ज्ञान चन्द बाबूजीने लिया. फिर वहां सब के लिये भोजन तैयार था सो अंदाजन १०००० दश हजार मनुष्यों का वहां लडु मुरकी आदि पांचों पकानो का भोजन कर तृप्त हुअे.

मैं तो स्वारी के आगे ही अपने भंडोपकरण और अपने लिये कुछ आहार पानी लेकर बगीचे में चलागया था, वहां बगीचे में जो लोगों के लिये रसोई कराइथी उस में हुआ द्राक्षो का धोवन तथा कुछ आहार नवी दीक्षीतों

के लिये ग्रहण कर बंगले में रख कर आहार पानी भोगव कर फूल-फल से भरा हुआ गंभीर आम्र वृक्ष के नीचे अपने हाथ से उठाकर लाया हुआ पाट बिछाकर उस पर बैठा. वहां सब पोषाक युक्त वैरागीयों ने आकर वंदना नमस्कार किया. फिर दीक्षा के लिये मुंडन वगैरा किस प्रकार कराना इस की विधी का ज्ञान कोइ नहीं होने से मैं बोला कि प्रतापगढ वाले उत्तमचन्दजी आंजाणिये सब तरह प्रविण हैं. इतना सुनतेही उनको ले गये, उन के कहे प्रमाणे चार अंगुल शिखा के बाल छोड और मुंडन करा मस्तकपर कुंकुम के स्वस्तिक किये. साधु के वेष से भूषित किये मिष्टान्न फलों से खोलभरी. प्रथम दयाचन्दजी को लालजी ले आये और महाराज सन्मुख खडे किये, पीछे दोनों वैरागीयों आगये. तीनों सन्मुख विधी युक्त वंदना कर बैठे, सब लोगों को स्वस्थकर मैं बोलाकि—अहो भाइयों ! गुरुपने की योग्यता मेरे आत्मा में नहीं होने से मैं इन को शिष्य नहीं किन्तु सहचारी बनाता हूं यों कह तीनों के कुटुम्बियों की और पंचो की आज्ञा ग्रहण कर प्रथम क्षेत्र विशुद्ध के लिये कायोत्सर्ग कराया. पुनः दूसरी वक्त कुटुम्ब की और पंचों की आज्ञा ग्रहण कर दीक्षा विधी का कायोत्सर्ग कराया. और पुनः तीसरी वक्त कुटुम्ब तथा पंचों की आज्ञा ग्रहण कर जावज्जीव नवकोटी सामायिक का पाठ

उच्चरीकर प्रत्याख्यान कराया. फिर सिद्ध अर्हन्त का नमोस्तव कर, तीनों को पचमुष्टि लोच किया. बालों लुटने की ऐसी भीड जमी के साधुओं को अपना शरीर संभालना मुशकिल हो गया. लालाजी दवगये तो बडी युक्ति से बचाये. 'देवऋषिजी राजऋषिजी, उदयऋषिजी' यों तीनों के नाम स्थापन किये. जय श्री जैन धर्मकी, जय श्री अमोलक ऋषिजी महाराजकी यों चारों साधुओं के नामकी जयध्वनि से बिरुदावली बोलते सैंकडो श्रावक गण से परिवरे हुअे चारों साधुओं नवे बंगले में आने लगे. पीछे से लालाजीने झोली भर कर नवरत्न (सुवर्णपुष्प, रूप्यक पुष्प, हीरे, पन्ने, माणक, मोती, प्रवाल, सफानिया, चूनी) की मुट्ठी भर २ उछाले * इस प्रकार धर्मोत्साह युक्त नवे बंगले में चारों साधु पधारे. मैं पाटपर बैठा. नवीन दीक्षित पटले पर बैठे. सहस्त्रों जैन जैनेतर स्त्री पुरुष के झुंड के झुंड दर्शनार्थ आने लगे. विविध प्रकार के त्याग प्रत्याख्यान हुअे, सब दिन ठाठ रहा. तीसरे प्रहर में प्रति

* उस में की एक मुट्ठी उठाकर एक बाइ लाई थी उस के उसे २८ को बेचने से मिले सब कितने हजार का माल होगा सो ज्ञानी जाने

लखनादि क्रिया से निवर्ते. चारों साधु के विस्तर जमाये. फिर लालाजीने वीनंती की कि नये महाराजों को प्रति लाभने का हमे बहुत उत्साह है. उसी वक्त तीनों नवीन दीक्षित को साथ ले लालाजी के पूराने बंगले में मैं गया. वहां सहकुटुम्ब लालाजी और गुलाबबाइ प्रमुख बहुत से श्रावक श्राविका के हाथ से थोडा २ आहार ग्रहण किया. स्वस्थान आकर इर्यावही प्रतिक्रम कर प्रथम मंगला चरण नीमित दधीतंदुल फाणित के पांच ग्रास नवीन दीक्षितों को दिये. फिर यथा इच्छित आहार किया. पानी चूकाकर पात्र धोकर बन्धन बंध धरे; तीनों नवीन दीक्षितों को प्रतिक्रमण सुनाया. दूसरे दिन चतुर्दशी होने से चारोंने उपवास धारन किया. दूसरे दिन प्रातःकाल प्रतिक्रमण प्रतिलेखनादि शौचादि से निवृत्ति पा सीकंद्राबाद वाले की अत्याग्रह से विनंती होने से वहां आये. निहालचंदजी गंभीरमलजी की दुकान में रहे. व्याख्यानका खूब ठाठ जमा. बंबइ रत्न चिन्तामणी मित्र मंडल के मास्तर विद्याभिलाषीयों को साथ ले आये थे उन के पास भाषण गायन कराये. उन को अच्छी सहायता भी मिली. दीक्षा पर नागोर के लहिये आये थे उन के पास से बहुत से श्रावक श्राविकाओंने भगवती पन्नवणा वगैरा छोटे बडे शास्त्रों की खरीदी कर नविन दिक्षितों को वेहराये.

देवऋषिजी प्रथम ही प्रतिक्रमण सीखे हुअे थे वे सात दिन में प्रतिक्रमण के अर्थ, आहार के ९६ दोषों वगैरा साधु की सामान्य क्रिया से वाकेफ होजाने से सातवे दिन छेदोपस्थापनीय चारीत्र (नविन दिक्षा) देने का ठहरांव हुआ., उस दिन में सैंकडों जैन जैनेतरका जमाव हुआ, सब के मध्य में खडे हो देवऋषिजी वंदना नमस्कार कर हाथजोड सन्मुख खडे रहे; तब उन को छजीवणी [दशवैकालिक सूत्र के चार अध्ययन] के अर्थ हितशिक्षा की समज देते हुअे सुनाये. उस वक्त गंभीरमलजी बोराने सजोड ब्रह्मचर्य व्रत धारन किया, प्रभावना वगैरा धर्मोद्योत अच्छा हुआ.

उक्त सब कार्य की निवृति हुअे बाद महाराज श्री का देशान्तर में विहार करने का विचार हुआ. तब लालाजी वगैरा श्रावकों ने नम्र अर्जी की कि—उष्णऋतु आगइ है आप अकेले को तीनों नव दीक्षितों को साथ में लेकर ऐसा महा वीकटपंथ प्रसार करना बहुत ही कठिन प्रत्यक्ष देखाता है. तीनों साधुओ का शरीर बहुत सुकुमार होने से इने बहुत तकलीफ होगी, इतने में ' सीकेन्द्राबाद संघ एकत्र हो सन्मुख हाथ जोड रह अर्जी की कि—हमने ऐसा क्या अपराध किया कि शहेरं वालों को लगो लग

नव चौमासे का लाभ दिया और हमारी नव वर्ष से वीनंती होने हुअे एक भी चौमासे का भी लाभ नहीं ? ऐसा द्वैधी भाव आप जैसे महात्माओं को रखना उचित नहीं है. अब चौमासा तो यहां जरूर हुआ ही चाहीये ! वह बात मेरे ध्यान में जची और वीनंती मान्यकी,

' फिर सीकेन्द्राबाद, से विहार कर वारकस अलवाल बुलारम होकर पीछे ' हैद्राबाद गये, सर्व स्थान धर्मोद्योत बहुत हुआ. महाराज चले जावेंगे २ यह अन्तिम दर्शन है यों उमंग कर लोगोंने संवत्सरी जैसा धर्म ध्यान का ठाठ लगाया. चार महिने पूर्ण होने से राजऋषिजी और उदयऋषिजी को भी वडी दीक्षा हैदराबाद में दीगइ. अषाढ शुक्ल पंचमी को सीकेन्द्राबाद पधारे—नरसिंगभान के बहुत वडे नवे बंगले में रहे. लोगों में बहुत ही उत्साह से तपश्चर्या पचरंगीये दया पौषध प्रभावना वगैरा धर्मोद्योत होने लगा. पर्युषण बैठते ही इग्यारे रंगीया कायम हुआ. जिस में अंदाज १५० भाइयों बाइयों बैठे थे. संवत्सरी हुअे बाद भी तीनों वक्त व्याख्यान चालू रहा. अब महाराज चले जावेंगे इस प्रकार भव्यों के मन में संकल्प विकल्प होने लगा.

विहार के दिन नजीक आते देख लालाजी सुखदेवसहायजी का जीव बहुत ही उदास होने लगा. महाराज श्री को विनती की कि चौमासा हुवे बाद शेषे काल की कृपा तो शेहर में जरूर ही की चाहिये. महाराज बोले-लालाजी ! अब बहुत हुवा. अब तो मृगसर वदी १ को वेगमपेठ में आहार पानी करने का विचार है. आगे तो जो क्षेत्र विभागी प्रकृति का जैसा उदय होगा वैसा बनेगा. यों सुन लालाजी खिन्नचित्तवाले बने. हरेक से पूछने लगे कि कोइ ऐसा उपाव किया जावे कि जिस से कुछ काल महाराज श्री का रहना यहां ओर भी होवे, लोगों कहने लगे कि लालाजी साहेब ! साधुजी तो. " बैठे तो वक्त की खूंटी और उठे तो पवन की मूंठी."

इति जैन शास्त्रोद्धार मीमांसा का तीसरा भाग समाप्तम्.

प्रवेश

चतुर्थ प्रकरण-वर्तमान शास्रोद्धार.

परमपूज्य परम प्रभावक श्री कहानजी ऋषिजी महाराज के सम्प्रदाय के शुद्धाचारी आत्मार्थी पूज्य श्री खुबाऋषिजी, महाराज के शिष्यवर्य उग्र विहारी महाउपकारी, हैद्राबाद जैसे बडे क्षेत्र को और राज्यमान श्रीमान अनेक गुणालंकृत लालाजी सुखदेव सहायजी जैसे महा पुरुष को जैन साधुमार्गीय धर्म में प्रासिद्धी में लाने वाले तपस्वीराज श्री केवल ऋषिजी महाराज के स्वर्गवास पीछे सीकंदराबाद में चतुर्मास कर व्याख्यानी मुनि श्री देव ऋषिजी वैयावची मुनि श्री राजऋषिजी और तपस्वी मुनि श्री उदय ऋषिजी यों तीन गणे सहित मैं विहार की तैयारी कर रहा था.उस वक्त लालाजी सुखदेव सहायजी बारा महिने पहिले की की हुई सूचना का स्मरण करके " क्या उनोंने धडा जमाया सो वो जाने " ज्वालाप्रसादजी को साथ लेकर सीकंन्द्राबाद दर्शनार्थ आये और वंदना नमस्कार कर नम्र अर्जी की कि–जो आपने फरमाया था की बत्तीस सूत्रों का हिन्दी अनुवाद युक्त छपाने में रु. १५००० तक खरच लगता है, तो यह लाभ मुझे लेने की इच्छा हुई है. परंतु सब सूत्रों का आप ही के करकमल से हिन्दी

सूचना

भाषानुवाद लिख दिया जावे तो छपाने का सब खरच मैं देने खुशी हूं. मुझे पूर्ण आशा है कि यह महाभारत कार्य आप ही के हाथ से हो सकेगा.

लालाजी की उक्त अर्जी सुन ज्ञान प्रसार का व्यसनी मेरा मन डगमगा और बोला कि नवीन साधुओं की दीक्षा होने पहिले जो यह काम दर्शाते तो मैं इस झगडे में नहीं पडता और शास्त्रोद्धार काम का स्वीकार करता. इतना बोल उसी वक्त गुम्म बन गया. लालाजीने नम्रता से उत्तर मंगा तो मेरा कहना हुवा कि—इस का मैं विचार कर फिर जवाब देऊगा. उस वक्त लालाजी तो वंदना नमस्कार कर चले गये. और मेरा मन तोफानी समुद्र की तरंगवत् बन गया. इधर बहुत दिनों से एक स्थान रहना हुवा वह फक्त महान् उपकारिक पुरुषों की सेवा के लिये ही. इस दरम्यान भी विहार की तीव्राभिलाषा का अनेक वक्त उद्भव होता था. परंतु उस विचार रूप तुफान को तपस्वी-राज के परम उपकार रूप स्मरण समान जलसींचन से दबा दिया जाता था, अब जैसा उत्साह विहार करने का मेरा था उस से ही अधिक उत्साह नवीन दीक्षितो का भी था. इस का क्या करना ? एक मन-इधर खेंचने लगा, दूसरा मन शास्त्रोद्धार जैसे महान उपकारिक

कार्य होने का मौका फिर प्राप्त होना महा मुशकिल है. क्यों कि अपने साधु मार्गी वर्ग में ऐसे परमोत्तम कार्यार्थ एक मुष्ट १५००० रूपे निकालनेवाला दानवीर मिलना ही महा मुशकिल. तैसे ही मैं भी लेखन कार्य में बहुत वर्षों से दत्तचित्त बन रहा हूं. मुझे अभी यह लिखने का काम सहज मालुम पडता है. तैसा पीछे चित्त रहना भी मुशकिल है. अब क्या करना ? इन घोटाले में चित्त रूप नावा डामाडोल करने लगी. फिर विहार से होता हुवा उपकार और शास्त्रोद्धार कार्य से होता हुवा उपकार की तफावत् के हिसाब चित्त में चडा. कि अपन को विहार करके भी सद्बोध कर धर्मवृद्धि करना है. उस उपदेश का असर तो श्रोतागणों के ऊपर क्षणिक होता है. तथा यों फिर २ उपदेश कर धर्मवृद्धि कराने वाले महात्माओं भी जगत में कुछ थोडे नहीं हैं. परंतु जो छब्बीस शास्त्रों÷ हिन्दी भाषानुवाद बन कर हजार प्रतियों छपकर प्रसिद्धी में आजावेगी तो हजार स्थान हिन्द के विभाग में शास्त्र का भंडार हो जायगा. यह चिर स्थायी बना रहेगा. उस का लाभ हजारों साधु साध्वीयों और लाखों श्रोता-गणों जब चहावेंगे तब ले सकेंगे. यह लाभ प्रत्यक्ष में भी सद्बोध से अधिक देखाता है.

÷ उस वक्त ४ छेद और चन्द्र प्रज्ञप्ति सूर्य प्रज्ञप्ति छपाने का विचार नहीं था.

मुद्रा• किल

इस वक्त बहुत स्थान शास्त्रों की प्राप्ति के लिये साधु साध्वीयों में अनेक झगडे उत्पन्न होते हैं, इस का कारन शास्त्र की दुर्लभता का ही है, क्यों कि लहियों से लिखी हुई एक बत्तीसी की खरीदी में १००० से २००० तक रूपे का खरच करते भी वक्तपर मिलती नहीं है. इच्छित स्थान इच्छित शास्त्रों की प्राप्ति होने लग जायगा तो उक्त झगडा का भी अभाव हो जायगा. तथा शेरों से शास्त्रों का वजन उठा कर विहार करने में जो साधु साध्वीयों को मुशीबत पडती है वह भी मिट जायगी. इस वक्त शास्त्रों का लेख बहुत कर तो अन्य मतावलम्बी व जैन धर्म के द्वेषी शास्त्रज्ञान के बिलकुल ही अवाकेफ मात्र उदर पूरणा निमित्त अक्षरोअक्षर उतारा करने वाले कुंती के स्थान कुची लिखने वाले ब्राम्हणों के हाथ से ही होता है. किंचित स्थान यती व श्रावक भी उदर पूर्णार्थ लहियों का धंधा करते हैं वे अल्पज्ञ हैं. जिस से शास्त्रों में बहुत गडबड होगइ है. बहुतसी प्रतों में पाठ अर्थ छूट जाता है, बहुत स्थान किधर का किधर ही लिखा हुआ पाता है. और भाषा के घोटाले बहुत तथा अशुद्धियों बदल तो कुछ कहने जैसा ही नहीं. इसलिये ही अल्पज्ञों तो शास्त्र पठन करने में ही कंटाला लाते हैं और विशेषज्ञों उस का मतलब जमाकर अडेगाडे को धका देते हैं, यह घोटाला भी बहुत सा

अंधेर

पीछे क्यों

निकल आयगा. जैनतत्त्वप्रकाश परमात्म मार्गदर्शक . ध्यानकल्पतरु आदि ग्रन्थों प्रसिद्धी में आने से बडे २ मुनिवरों के मानननीय बने हैं,+ लोगों में बांचन शोक जाग्रत हुआ है, बहुत से लोग धर्म प्रेमी बने हैं. तो खास अर्हन्त की वागेश्वरी द्वारा प्रणित हुअे शास्त्रों प्रसिद्धी में आने से महा उपकारिक बने इस में तो आश्चर्य ही क्या ? और भी इस वक्त प्राय: सब मत मतान्तरों वाले अपने २ धर्म शास्त्रों, को अनेक भाषा नुवाद मय रच अनेक प्रकार की लिपियों में छपवाकर प्रसिद्धी में रख रहे हैं, जिस से उन के मतों बहुत प्रख्याती पाये हैं. राज्यमान भी बन गये हैं. ऐसा देखते हुअे भी

+ श्री कहानजी ऋषिजी महाराज के सम्प्रदाय के महा प्रतापी श्री सुखा ऋषिजी महाराज के शिष्य वर्य पण्डित मुनिवर श्री अमीऋषिजी महाराज ३८-१२ २-५ के पत्र में लिखवाते हैं कि-मेरे शरीरादि कारण से (पूज्य पद्वी का) भार वाहक हो आत्म साधन में विघ्न डालने की मेरी इच्छा बिलकुल ही नहीं है. मुझे तो परमात्ममार्ग में आप के ध्यानकल्पतरु की शीतल छांय में बैठ समाधी प्राप्त करना उचित है. इस पद के योग्य आप मुनिवर मालवासे दूर हैं वगैरा. और भी ३८-१२-३ १पी के पत्र में लिखाते हैं कि-ध्यानियों को पहा सहायक नायक पापघायक आदिगुणों से भरपूर आप के स्वच्छ हृदय का साक्षी अमूल्य ध्यानकल्पतरु मग ६७ पंक्ति ९ का प्रश्न पूछा है. वगैरा.

अपन को अपने शास्त्रों प्रसिद्धी में रखने में क्यों वंचित रहना चाहिये. अर्थात नहींज रहना चाहिये ! ' जब सब जैनतर लोगों अर्हन्त प्रणित जैन शास्त्रों. का पठन मनन कर उस के अपूर्व अलौकिक तात्त्विक ज्ञान के रशीये बनेंगे तब वे आप ही स्वयं मुक्तकंठ से जैन धर्म की प्रशंसा करने लगेंगे. हलुकर्मी जीवों जैन धर्म का स्वीकार भी सुभलता से करसकेंगे. जैसे जैनके थोडे से शास्त्रों पाश्चिमात्य विद्वानों के हाथ लगने से उन के अपूर्ण रहस्य से वाकेफ होकर ही जैन धर्म के प्रेमालु श्रद्धालु बनगये हैं तो फिर सब शास्त्रों प्रसिद्धी में आने से जैन धर्म बहुमाननीय बने इस में आश्चर्य ही कौनसा? इसलिये जैन शास्त्रोंद्धार हिन्दी भाषा में होना इस जमाने के लिये तो परमावश्यकीय और महा उपकारिक कार्य हैं यह कामतो जरूर ही होना चाहिये. इस विचार से जो विहार करने की तीव्र अभिलाषा थी वह दबी. क्यों कि शास्त्रोंद्धार जैसा महा भारत कार्य एक स्थान रहे बिना पार पडना महा मुशकिल है. शास्त्रों की प्राचीन अर्वाचीन प्रतों का मिलान कर पाठ की शुद्धि करना, उन के अर्थ में जो भाषा की गडबड व अर्थ की गडबड हो रही है उस की छटनी कर शुद्ध हिन्दी भाषा में लिखना. अर्थ लिखते पाठ की तर्फ लक्ष रख उस प्रमाणे ही अर्थ आना, बत्तीस ही शास्त्रों थोडे काल में पूर्ण करना, यह काम ग्रामानुग्राम

विहार करने में होना असंभवित है. विहारमें तो जहा जावे वहां तीनों वक्त व्याख्यान देना, आहार पानी लाना, नवे आते जाते के साथ वार्तालाप धर्म चर्चा वगैरा करना पडे जिस में लिखने का अवकाश प्राप्त होना मुशकिल है. इस लिये एक स्थान रहे विना यह कार्य किसी भी प्रकार हो सके नहीं और यह कार्य हुवा तो जरूर ही चाहिये. एक स्थान रहने से आत्म संयम की व्याघात का प्रश्न होते ही पुनः आत्मा से ही उत्तर प्राप्त हुवा कि-महाराज श्री की सेवा में १७वर्ष रहने से ही यह नहीं बना तो अब तो इस कार्य में संलग्न हुवे बाद अन्य से वार्तालाप का अवकाश ही विशेष प्राप्त होना मुशकिल है. तो आत्म संयम की व्याघात का प्रसंग कैसे आवे अर्थात् नहीं आवे. इत्यादि विचार ही विचारने शास्त्रोद्धार का कार्य स्वीकारने का आत्म बल उत्पन्न किया, और पास में रहे तीनों मुनिवरों की सलाह ली तो उन का मन तो एकाग्र विहार की तरफही दृष्टी आया. तब उक्त किया हुवा विचार सुनाकर शास्त्रोद्धार से होता हुवा लाभ तीनों को समझाने से उन का मन भी पिगला, आज्ञा मान्य की. अब तपस्वीराज महाराज तो स्वर्गस्थ बन गये तब किस की आज्ञा से यहां रहना ? यह प्रश्न उपस्थित होते ही उत्तर मिला-अपनी सम्प्रदाय में सर्व से वरिष्ठ और मुझे दीक्षा शिक्षा दाता परमोपकारी

गुरुवर्य श्री रत्न ऋषिजी महाराज दक्षिण में विहार करते हैं उन की अनुज्ञा से ही यह कार्यारंभ करना परमोचित है. ऐसा विचार होते ही उस वक्त महाराज श्री का चतुर्मास लासनगांव था वहां पत्र दिया कि—यहां से विहार कर आप के कदमपोषी करने की मेरी परमाभिलाषा थी परन्तु लालाजी सुखदेवसहायजीने वीनंती की है कि जो आप के हाथ से सब शास्त्रों का अनुवाद लिख दो तो उस के छपाने में जितना खरच होगा उतना मेरा देने का इरादा है. और अहो गुरुवर्य ! मैंने भी बचपन से लेखन कार्य में बहुत समय बीताया है जिस से इस कार्य में मुझे कंटाला आनाभी असंभवित है विशेष कर सब शास्त्रों का लेख तीन चार वर्ष के अन्दर कर सकूंगा ऐसी उम्मेद है. यह कार्य एक स्थान रहे विना होना असंभवित है इस लिये जो आप अनुज्ञा देने का अनुग्रह करो तो आप के परमाशिर्वाद से में इस कार्य का स्वीकार करूं ? यह कार्य पूर्ण होने से आप का और मेरा नाम भारत भूमी में चिर स्थायी होगा और जैन आलम में बहुत उपगार होगा. जैसी आप की इच्छा हो वैसा उत्तर शीघ्र ही दीराइये जिस मे मुझे आगे गम पडे. ता० ५-१०-१५ आप का दास—अमोलक का अभिवंदन

महाराज श्री का उत्तर इस प्रकार आया:—

ता० ९-१०—१६

जैन समाज के महत् कार्य के लिये कोटीशःधन्यवाद. मुमुक्षु गुणग्राही व जैनसमाजोन्नति इच्छक मुनि, अमोलक ऋषिजी. सीकेन्द्राबाद. विदित हो कि-तुमारा पत्र मिला, तुमने जैन शास्त्रोद्धार करने के लिये विचार दर्शाया है वह बहुत अत्युत्तम है. और हम भी उस कार्य में सम्मत हैं. क्योंकि अपने शास्त्रों में त्रुटियां बहुत दृष्टि गोचर होती है, इतना ही नहीं परंतु पैसे का व्यय करते हुवे भी मिल सकते नहीं हैं. इसलिये शास्त्रों का उद्धार करना जरूरी है. शास्त्रोद्धार के लिये वहां तुम को रहने की जरुर अवश्य होगी क्योंकि वहां रहे विना ऐसा बडा कार्य नहीं हो सकता है. और वहां से विहार करनें के बाद यह कार्य होना भी नहीं. यदि ऐसा महा कार्य हो सकता हो तो वहां पर रहकर करने में हरकत नहीं है. इस बाबत में मेरी कोइ मना नहीं है. कार्य बडा है यह तो तुम जानते ही हो. इसलिये इस कार्य में एक संस्कृत का जानकार पास में अवश्य रहना चाहिये और वह भी जैन सूत्रों का जानकार होना चाहिये जिस से अशुद्धि का प्रसंग नहीं आवे. नहींतर काम करने में अपयश आजावे ऐसा ख्याल रखें. कार्य जितना बनसके उतना शुद्ध होना चाहिये. यह बीना हितकारक समझ कर लिखी है.

कार्य अच्छे मुहूर्त में सुरु करें. श्रीमान दानवीरी लालाजीने जो उदारता शास्त्र के लिये बताइ है इसलिये हम उन को सहर्ष धन्यवाद देते हैं. और वीर परमात्मा से यही चाहते हैं कि ऐसे महान कार्य करें कि-इस लोक परलोक में अमर नाम रहे और इस कार्य पर ज्यादा ध्यान देवें क्योंकि यह कार्य बहुत महत्व का है.लालाजी को व उन के सब कुटुम्ब को धर्म ध्यान करने का कहना. शुभेच्छक=रत्नमुनि.

उक्त प्रकार गुरुवर्य की आज्ञा प्राप्त होते ही हर्षानन्द में गर्क बन गया. दर्शनार्थ लालाजी आये उनोंने पूछा मेरी अर्जी पर क्या हुकम है ? मैंने गुरुवर्य का पत्र बताया. पढ सुनाया. सुनकर लालाजी भी हर्षानन्द में गर्क बन गये. मेरा ज्ञान का व परमोपकारिक महाकार्य करने का साहस व प्रेम देख बहुत ही धन्यवाद दिया, और कहा कि यह गुरुवर्यकी आज्ञा आप को प्रमाण करना ही चाहिये, मैं बोला गुरुवर्य की आज्ञा प्रमाण है; इतना सुनते ही लालाजी के रोम २ विकसायमान हो गये. आंखों प्रफुल्लित बन गई. प्रेमाश्रु छूट पडे और हाथ जोड बोले-इस अत्युत्तम कार्यारंभ के लिये अत्युत्तम मुहूर्त देखना परमोचित है, तत्काल पंचांग लेकर देखा. तो नजीक में ही कार्तिक शुक्ल पंचमी गुरुवार

ष्य नक्षत्र (ज्ञान पंचमी) का ज्ञान वृद्धी अर्थ शास्त्र प्रमाणे याग्य मुहूर्त प्राप्त हो गया. इस प्रकार परमोत्तम मुहूर्त को श्रवण कर लालाजी बहुत ही प्रसन्न हुवे और उस ही दिन सभा कर यह कार्य प्रारंभ करने का निश्चय किया.

दुसरे दिन फिर भी एक कार्ड गुरुवर्य का आया. जिस की नकल-कल पत्र लिखे बाद मालुम हुवा कि एक अच्छे संस्कृत प्राकृत अंग्रेजी के जानकार यहां आये. यह अपने स्वधर्मी श्रावक हैं. इतना ही नहीं परंतु इन का ऐसे कार्य पर शोक बहुत है. तुमने जो कार्य उठाया है उस में ऐसे मनुष्य की जरूर अवश्य होना चाहिये. थोडे पगार में भी कार्य अच्छा होगा. यह हाल जिस जगह कार्य करते हैं उस को छोडना चहाते हैं, परंतु दुसरी जगह व्यवस्था होना. अगर जो तुम को जरूर होतो जल्दी लिखें. अगर जल्दी जवाब आजावेगातो वहां आजावेंगे. और हम भी इन को कह देवेंगे. हमारी सलाहतो ऐसी है कि जो पगार मंगे वो देकर इन को इस कार्य के लिये रखना अच्छा है. इन को पत्र देना हो तो निम्नोक्त पते पर देवें. क्योंकि यह वहां मिलेंगे, मणिलाल शिवलाल शेठ ठे० वृद्धिचन्दजी चुन्नीलालजी मु० रास्ता. जि० अहमदनगर.

पत्र का उत्तर देना. धारन किया कार्य पार पाडना और अमर कीर्ति करना.

शुभेच्छक रत्न ऋषि.

महाराज श्री का यह दूसरा पत्र पढते ही विशेष हर्ष में वृद्धि हुई. जो कार्य होने का होता हे उस के लिये तत्काल जोग भी वैसा ही बन जाता है. तत्काल मणिलाल भाई को रास्ते पत्र दिया. जिस का उत्तर इस प्रकार आया.

श्री मज्जैनाचार्य परम पंडित कविवर बालब्रह्मचारी सर्व गुण सम्पन्न मुनिराज श्री अमोलक ऋषिजी महाराज के चरण कमल में मु० सिकंदराबाद, लि० सेवक मणिलाल शिवलाल शेठ की विधी पूर्वक वंदणा मालुम होवे. अतीव हर्ष के साथ लिखना पडता है कि-आपने अपने शास्त्रोद्धार करने का महत् कार्य उठाया है. यह कार्य आप के लिये धन्यवाद पात्र है, इस कार्य में आपने मुझे याद किया इस लिये मैं आप का बहुत आभारी हूं. कार्य संभालने के लिये मुझे ताकीद से बुलाया परंतु हाल में मैं अमुक कार्य पर हूं. जब तक एक कार्य करने का होता है उस को शीघ्र छोड कर दूसरा कार्य करना यह प्रमाणिकपणा से बाहिर है. यदि आप को परमावश्यकता होवे तो शीघ्र पत्र देवे ताकि

मैं उस कायको पूण कर उन को राजीनामा देऊं. कार्य के सम्बन्ध में तो सीर्फ यही लिखना ठीक होगा कि काम प्रत्यक्ष देखो. मैं मेरे लिये कुछ भी लिखूं यह स्वकीय गुण कहने का है. मैंने संस्कृत का भी अभ्यास किया है. इतना ही नहीं परंतु प्राकृत व्याकरण व अंग्रजी का भी अभ्यास किया है. प्रुफ देखने के बारे में या आप जो उतारा करावेंगे उस को शुद्ध करने के बारे में आप को निश्चित रहना पडेगा. मतलब कि—सब कार्य मैं अच्छी तरह से संभाल सकूंगा. यह सब रुबरु में मिलने से आप को मालूम हो जायगा. अब लिखने का यही है कि आप मेरे लिये क्या व्यवस्था करेंगे. इस का किंचित परिस्फोट होजाय तो अच्छा रहे. लिखी-आप का दर्शनाभिलाषी.

मणिलाल शिवलाल.

उक्त पत्रका उत्तर लालाजीकी सलाह लेकर मैं लिखने को बैठा ही था जितनेमें मणिलाल भाइ आगये. उने देख हर्षानन्द हुवा वार्तालाप करने से गुणिजन मालुम हुवे. लालाजीका मुकावला कराया. रखनेका निश्चय होते उनके कहे मुजब वेतन व सब खर्चा कायम किया. इस प्रकार शास्त्रोद्धार कार्यारंभका निश्चय होते ही तत्काल "हर्ष वधाइ" इस हेडिंगतल, जाहिरात दी गइ. वह लेख श्वे० स्था० जैन कान्फरन्स प्रकाश पत्र छपाया जिस की नकल.

हर्ष-वधाइ.

पाठक गणो ! आप को यह जानकर हर्षानन्द होगा कि–तीर्थंकर केवली, श्रुत केवली व आगम विहारियों विना इस पंचम आरे में धर्म को स्थिर रखने का मार्ग आधार शास्त्र का ही रहा है. ये शास्त्रों भी इस वक्त बहुत थोडे रहगये हैं. और उन में भी मतान्तरीयों से तथा अनभिज्ञ लहियों के हाथ से, लेखकों से अनेक घोटाले भरागेहं. बहुत स्थान पाठ अर्थ की खंडना व पाठ अर्थ का भेल होने से पाठ को भी पठन करते विद्वान कंटाला लाते हैं,इस दुःख का निकन्दन होने का सुअवसर प्राप्त हुवा है. तैसे ही शास्त्र की दुर्लभता से भंडारों के पक्षपातीयों के झगडे और शास्त्रों के पुट्ठे का वजन ऊठकर ग्रामानुग्राम फिरने की साधु साध्वीयों की तकलीफ का दूर होने का भी सुअवसर प्राप्त होता है. वह यह है कि-दक्षिण सीकंद्राबाद में विराजते बाल-ब्रह्मचारी पंडित मुनि श्री अमोलक ऋषिजी महाराज ठाने ४ चतुर्मास हुवे बाद विहार करने के दिन नजीक आते हुवे देख राजाबहादुर लालाजी सुखदेव सहायजी ज्वाला प्रसादजी आदि श्रावको का दिल दुःखीत होने लगा. जिस का इलाज लालाजीने ही

महाराज श्री की पूर्व सूचना के स्मरण से ढूंढ निकाला और अर्जी की कि-आपने फारमाया था कि जो सब शास्त्र छपाये तो उस के १२०० फारम का अंदाज होता है जिस की छपाइ रु० १५००० में होसकती है तो यदि आप के हाथ से सब शास्त्रों का हिन्दी भाषानुवाद लिखदेने की कृपा करें तो यह लाभ मेरा लेने का इरादा है. विहार करने को उत्सुक हुवा मैरा मन लालाजी की अर्जी सुन डगमगा शास्त्रोद्धार जैसा महाकार्य अपने हाथ से होवे तो अहो भाग्य! ऐसा मानकर गुरुवर्य श्री रत्न ऋषिजी महाराज आदि मुनिवरों की सम्मती मंगाइ, सुभाग्य से गुरु आज्ञा व अनुकुल सम्मती प्राप्त होने से महाराज श्रीने कहा कि चार छेद और चन्द्रप्रज्ञप्ति सूर्यप्रज्ञप्ति सिवाय २६ शास्त्रों का हिन्दी भाषानुवाद जो बना तो तीन वर्ष में लिख देने का इरादा है. यह कार्य विहार में नहीं होता जान गुरु आज्ञा से ज्ञानवृद्धि अर्थ यहां ही रहना पसंद किया. यह जान यहां के संघ में आनन्द अनन्द हो गया.

अब कार्तिक शुक्ल ५ गुरुवार से शास्त्रोद्धार कार्य प्रथम आचारांग सूत्र से ही प्रारंभ करने का है, सब शास्त्रों छपे बाद संदूको भरकर अमूल्य दिये जावेंगे. एक हजार

स्थान २६ शास्त्रों के भंडार हो जायंगे इसलिये विद्वान साधु साध्वी श्रावक श्राविका को व भंडार के अध्यक्षों को नम्र अर्जी हे कि—इस परम उत्तम परम आवश्यकीय महा उपयोगी कार्य में आप सम्मती द्वारा व प्राचीन शास्त्रोद्धार मदत देकर इस लाभ के सद्भागी बनेंगे, आप के आश्रय की न्यूनता से काम में कसर रह जाय तो हम उस के दोषी नहीं हैं जी—विज्ञपु किमधिकं.

सं. १९७१ अश्विन पूर्णिमा

सेक्रेटरी ज्ञान वृद्धि खाता
दक्षिण—हैदराबाद.

उक्त प्रकार हर्ष बधाई जाहिर होते ही मुनिवरों व श्रावकों की तरफ से तरह २ के उत्तर आये. जिस में बहुतोंने तो इस कार्य को परमावश्यकीय बताया. और यह कार्य नहीं हुवा चाहिये इस आशय का पत्र भी एक प्रातिष्ठित मुनिवर की तरफसे गुम नाम से आया. पत्र पर पोस्ट ओफिस की महोरे अहमदनगर की होने से लालाजीने उस को पाछा फरोदियेजी के नाम पर भेज कर उत्तर मंगवाया. उस पत्र के ज्ञात उन मुनि को वहां के श्रावकोंने ठपका दिया. और सन्तोष कारक जवाब भी पीछा प्राप्त होगया. यह

दुनिया का रिवाज ही है कि-हरेक कार्य को वन्दता, कोई निन्दता है. ऐसा जान प्रशंसकों का उपकार मानते हुए व निन्दकों पर मध्यस्थ भाव रखते हुवे कार्यारंभ जिस उत्साह से स्वीकार किया था उस ही उत्साह मे सरु करने का निश्चय रहा.

किस ढब से इस कार्य को करना इस लिये ३ नमुने बनाये.

१ सुयं मे आउसं तेणं भगवया एव मक्खायं.

शब्दार्थ—सु० सुना मे० मैंने आ० आयुष्मन्त ते० उन भ० भगवन्तने ए० ऐसा म० कहा ॥ भावार्थ—श्री महावीर भगवान के पाटवीय पाचवे गणधर श्री सुधर्मा स्वामी अपने जेष्ठ शिष्य श्री जम्बूस्वामी से कहते हुवे कि—अहो आयुष्मन्त जम्बू ! उन श्रमण भगवंत श्री महावीर स्वामी ने इस प्रकार कहा है वह मैंने सुना है.

२ सुयं मे आउसं तेणं भगवया एव मक्खाया.

इस का भावार्थ उक्त भावार्थ प्रमाण ही लिखा.

३ सुना मैंने आयुष्यवंत उन अलंकार युक्त भगवंतने ऐसा कहा :—

३ सुयं मे आउसं ते णं भगवया एव मक्खायं.

भावार्थ—पूर्वोक्त प्रमाणे ही जानना.

उक्त प्रकार तीनों नमूने लिख कर कितनेक मुनिवरों के पास भेजे गये. जिस में से पंजाब देश पावन कर्ता परमपूज्य श्री अमरसिंहजी महाराज के सम्प्रदाय के गुण-रत्नाकर पूज्य श्री सोहनलालजी महाराज साहेब के तर्फ से इस प्रकार उत्तर आया.

ता० १—२१—१९१५. मु० अमृतसर.

श्री महावीरेभ्यो नमः

मुनि श्री श्री १००८ श्री अमोलक ऋषिजी महाराज साहेब मु० सिकंदराबाद. पत्र आप का पहोंचा. पूज्य महाराज साहेब को सुना दिया गया. पूज्य महाराज साहेबने फरमाया है कि आपने जो गुण मेरे में बताकर मेरी स्तुति की है वो गुन मेरे में नहीं हैं और न मैं इतनी स्तुति के लायक हूं सिर्फ आप ही का बडपन है, आप में उपरोक्त सब गुण विद्यमान हैं, इस स्तुती के लायक तो आप ही हैं. आपने जो महत् कार्य का प्रारंभ चतुर्विध संघ के हितार्थ किया है यह अति मंगलिक और सर्वोत्तम कार्य है. आप के ऐसे विचार में हम सब सामिल हैं और यथा शक्ति मदत देने को भी तैयार हैं.

और आपने ऐसे कठिन कार्य को करने में जो हिम्मत की है उस के लिये आप को पूर्ण धन्यवाद है. और हम हमेशा शासनपति देव की स्तुती करते हैं कि-एसे महान् कार्य का यश आप को शीघ्र ही मिले. दूसरा आपने लिखा कि प्रथम आचारांग सूत्र से ही लिखना सुरु करने का है और उपरोक्त तीन नमूने में से जिस प्रकार सम्मती मिलेगी उस ही प्रकार लिखने का विचार है, सो मुनि महाराज ! हमारे को तो प्रथम नमूना ही ज्यादा पसंद में आया है. कारण कि शब्दार्थ को पढकर हरेक आदमी जलदी समज सकता है. प्रथम नमूने के अनुसार लिखने से समय तो जरूर ज्यादा लगेगा परन्तु हरेक को सुलभ हो जायगा. वास्ते आप प्रथम नमूने के अनुसार लिखेंगे तो ही ठीक होगा. आगे आप की मरजी. आप बहुत समझदार हैं विचार कर ही कार्य करेंगे. तथा श्री संघ की तरफ से लालाजी साहेब को अन्तःकरण पूर्वक धन्यवाद दिया जाता है, कारण उनोंने इस कार्य पूर्णतोर से करने के वास्ते तथा चतुर्विध संघ के हितार्थ रु० १५००० जैसी मोटी रकम दान की है.

आपका कृपाभिलाषी. ' वसंतामल,
सेक्रेटरी जैन सभा अमृतसर (पंजाब).

उक्त प्रकार की परमपूज्य श्री 'सोहनलालजी महाराज' की आज्ञा का स्वीकारकर उस ही शैलीसे शब्दार्थ भावार्थ सहित सूत्रों लिखने प्रारंभ करने का निश्चय किया.

इतने में ज्ञान पंचमी भी आगइ, प्रात:काल ही पंचायती सेवक के साथ हैद्राबाद सीकन्द्राबाद, बारकस अलवाल बुलाराम व कोरों में आमंत्रण भेजवा दिया कि " आज शास्त्रोद्धार कार्य के सूरुआत की मंगल सभा में दो प्रहर को ११ बजे सब साहेबों जैन स्थानक में जरूर पधारीयेजी " इस पंचों की आज्ञा को मान देकर भोजनादि कार्य से निवृति पाकर उत्तम वस्त्राभूपण से भूपित होकर लोगों स्थानक में आये, साधुओं को वंदना नमस्कार कर उचित स्थान बैठे. लालाजी 'सुखदेव सहायजी,' ज्वाला प्रसादजी, करकमल जोडकर सविनय उपस्थित हुअे. उस वक्त बहुत से प्रेसों के मैनेजर भी हजार हुअे थे. लोगों से व्याख्यान हॉल भरा गया. तब मैंने मंगलाचरणार्थ शांतिनाथ भगवानका, श्री पार्श्वनाथ भगवान का स्तवन छंद कह कर बरु का कलम केशर की रोशनाइ से रुचकारी केत भलांकित पत्र पर प्रथम नवकार मंत्र लिख कर

फिर नमूने में लिखे मूजब मूल, शब्दार्थ, भावार्थ लिखकर सब को सुनाया. अर्हन्त प्रणित वाक्यों सभा जनोंने हर्षानन्द युक्त जय ध्वनि से बधाये.

भाषण

फिर शास्त्रोद्धार कार्य की कितनी परमावश्यक्ता है इस विषय पर मणिलाल भाइने भाषण देकर सभाजनों को जचादिया कि यह कार्य परमोत्तम और परमावश्यकीय है. अब किस प्रेस में यह कार्य करना इस को विचार पर छोड मंगलिक श्रवणकर हर्ष पूरित सभा विसर्जन हुई.

कार्यारंभ

जिस दिन से शास्त्र लिखने का कार्य का प्रारंभ किया उसी दिन से इस कार्य को निर्विघ्नपार करने व विशेष फुरसत के लिये सदैव मैंने एक भक्त भोजन स्वीकार किया. प्रातःकाल में प्रति लेखना शौचादि कार्य से निवृती पा कर व्याख्यान भिक्षा भोजनादि से निवृतकर लिखने बैठता सो श्याम के पांच बजे तक लेख करता. अंदाजन दिन के ७ घंटे संशोधन मिलावना व लेखकार्य में निरंतर व्यतीत करने लगा वार्तालाप वगैरा अन्य कार्य का बहुत प्रबन्ध रक्खा. जरुरी काम सिवा स्थान से उठना ग्रंथअवलोकन करना भी बंध किया

सीकंद्राबाद के मारकीट बजार में ५१ घरों श्रावकों के लगोलग आने से और श्रावक श्राविकाओं भी अच्छे भाव भक्ति वाले होने से यहां ही रहना उचित समझा क्यों कि इतनी वस्ती एक स्थान हैद्राबाद सीकंद्राबाद में ओर अन्य स्थान नहीं.इस लिये यह काम यहां सुभिता से हो सकेगा. ऐसा जान मारकेट बजार में रहे

इधर मणिलाल भाइ प्रेस की तजवीज जमाने लगे. तव गुंडाबुमल्लाका ओंकार प्रेस से प्रबंध हुवा. प्रेस भी स्थानक के एकविभाग में स्थापन किया गया. पांच तरह का टाइप बोर्डर श्याही कागजों बवइसे मंगाये. उस वक्त महायुद्ध के प्रसंग से व्यापारियों की सुचना होते हुए भी माल अधिक नहीं मंगाया क्यों कि कुछ दिन में युद्ध शांत हो जायगा तो फिर सस्ताइ होने से अधिक माल मंगा लिया जावेगा. परंतु प्रति दिन माल की महंगाइ बढती ही चलीगइ जो १२ रुपे रीम उस वक्त मिलता था वह चालीस रूपे रीम भी मिलना मुशाकिल हो गया. जो छ आने में पाउंड श्याइ का डब्बा मिलता था वह १॥ रुपे में मिलना भी मुशकिल होगया. तो भी लालाजीने जिस उदार परिणाम से जिस उत्साह से काम प्रारंभ कराया था उस ही उत्साह से चलाये गये.

देखें इस प्रेस में काम कैसा होता है. इस आजमास के लिये प्रथम पंडित मुनिवर श्री अमीऋषिजी महाराज की बनाई हुई बहुतसी कवीताओं का संग्रह कर कविराज के हस्त लिखित पत्रों श्री अमीऋषिजी महाराज के गुरु भ्रात गुरु महाराज के कृपापात्र महा उपकारी तपस्वीजी श्री देवजी ऋषिजीने भेजेथे उन,की पुनरावृत्ति कापी लिखवाकर " श्री जैन अमृत सुबोधमाला " नाम की पुस्तक तथा आत्महित बोध और श्रावक नित्य पाठक पुस्तकें छपवानी सुरु की.

इतने में आचारांग सूत्र की लिखाई समाप्त होगई. यह लेख किस प्रकार का हुवा इस का निर्णय समक्ष हो इस हेतु से विद्वान मणिलाल भाई को देशान्तर में रहे हुवे मुनिवरों के निरीक्षणार्थ भेजने का निश्चय हुवा.

इस वक्त कुडगांववाले भींवराजजी के पुत्र वैरागी मोहनलाल सिकंद्राबाद आये, उन से आने का कारण पूछते वे बोले कि मेरे पिता आप सिवाय दूसरे किसी के भी पास दीक्षा लेने की आज्ञा नहीं देते हैं. इस लिये आप के पास मुझे श्री रत्न ऋषिजी

महाराजने भेजा है. मैंने कहा—गुरुवर्य का हुक्म प्रमाण है परंतु अब तेरी इच्छा किस के पास दीक्षा लेने की है. ? उस का कहना हुवा आप के पास ही दीक्षा लेने का मेरा निश्चय हुवा तब ही आप के चरणों में आया हूं; मैं बोला ठीक है, महीने दो महीने यहां रहो परस्पर प्रकृति से वाकेफ हुवे बाद देखा जायगा. यह उतावल का काम नहीं है.

मणिलाल भाई आचारांग सूत्र लेकर रवाने होने लगे तब कहागया कि—गुरुवर्य श्री रत्नऋषिजी महाराज को प्रथम यह सूत्र बताकर यह भी पूछ लेना कि मोहनलाल आप की आज्ञा से यहां आया है कि स्वेच्छा से. मणिलाल भाई कथन प्रमाण कर शुभ दिन रवाना हो मनमाड गये, श्री रत्नऋषिजी महाराज को आचारांग सूत्र बताया. महाराज श्रीने वहुत पसंद किया. फिर मोहनलाल वहल पूछा तो आज्ञा दी कि अमोलक खुशी से उसे दीक्षा दे, मणिलाल भाईने पत्र में समाचार दिये. गुरुवर्यने कार्य पसंद किया है. और मोहनलाल को दीक्षा देने की आज्ञा दी है. यह सुन कार्य करने का उत्साह बढा. और फिर कुडगांव पत्र दिया. मोहन दीक्षा लेने यहां आया है, तुमारी क्या इच्छा है ? उनोंने जवाब दिया हम बहुत खुशी हुवे हमारी आज्ञा है मुहूर्त निक-

लाकर कुंकुमपत्री भेजो. हम सहकुटुम्ब दीक्षा के ५ दिन पहिले हाजर होवेंगे. तब निश्चय हुवा कि मोहनलाल का अपने में ही सीर देखाता है.

तब मोहनलाल से आलोचना कराई कि तुझे वैराग्य उत्पत्ति का कारण क्या है? सो अथ इति सब सत्य कह दो. तब मोहनलाल बोला—किसी के लग्नोत्सव में मैं खरोंडी गया था, वहा श्री रत्न ऋषिजी महाराज के दर्शन किये. उन के पास हमारे जाति भाई गोटेलालजी वैरागी ज्ञानाभ्यास कर रहे थे उन के कहने से मुझे भी वैराग्य उमटा और मैं पिता श्री की आज्ञा से महाराज श्री के पास रहा. सामायिक प्रतिक्रमण सम्पूर्ण दशवैकालिक सूत्र कंठाग्र किया. फिर कुछ काल घर रहकर अहमदनगर श्री.जवहरलालजी महाराज के पास रहा, उनोंने कहा तू यहां दीक्षा ले तो तुझे संस्कृत पढावे, मैंने कहा-मेरे दीक्षा लेने के भाव श्री रत्न ऋषिजी महाराज पास हैं. मैंने वहां अमरकोश कितनाक कंठाग्र किया. फिर पिताजी से दीक्षा की आज्ञा मांगी तो वे बोले—श्री अमोलक ऋषिजी के पास दीक्षा ले तो मैं आज्ञा देता हूं. बीच में मैं आप के पास ही आया था, आपने मुझे स्वीकार नहीं किया. तब मैं पीछा गया. भिक्षाचरी करने लगा. आंबिलादि तप भी

आलो चना

मुझे करने लगा. मेरा पिता को लोगोंने बहुत ही समजाये परंतु उनोंने तो 'एक ही हठ
पकडा कि अमोलक ऋषिजी पास ही दीक्षा दिलावूंगा अन्य पास कदापि नहीं. मैं कितनेक
दिन श्रीरामकंवरजी महासती के पास रह कर श्री रत्न ऋषिजी महाराज पास गया.
उत्तराध्ययनजी के २३अध्याय कंठाग्र किये.तब श्री रत्न ऋषिजी महाराज बोले-तुझे वैराग्य
में फिरते तीन वर्ष होने आये कहां तक फिरेगा? अमोलक दूसरा नहीं है. उसी के पास दीक्षा
लेले. तब मैं आप के पास आया हूं. अब मैं घबरा गया हूं. मुझे शीघ्र ही दीक्षा दीजीये.
तब मैं बोला—मैंने तो शास्त्रोद्धार कार्य प्रारंभ किया है. पांच वर्ष पर्यंत यहां से विहार होना
असंभव है. इस काम में संलग्न होने से किसी को सिखाने पढाने की मुझे फुरसत नहीं
है. तेरा मन यहां किस प्रकार लगेगा ? तेरे पिता तुझे दूसरे स्थान दीक्षा दिलावे तो
तेरी आत्मा को ज्ञानादि गुण का बहुत फायदा होता. तेरे पिता यहां आये बाद में सम-
झावूंगा. मोहनलाल बोला अब तो कुछ भी हो मेरा तो आप ही के पास दीक्षा लेनेका
निश्चय है. आप निकालेंगे तो भी मैं नहीं जावूंगा. ऐसा निश्चय जान भाई शिवराजजी
सुरानाने अपने गुमास्ते प्रतापमलजी को कुडगांव भेजा, भींवराजजी किसी सिरकारी
कारन से अटके थे. थोडे दिनमें आता हूं यों कह अपनी पत्नी और पुत्री को भेज दी. तब

उन से मैंने कहा तुम मोहन के हितेच्छु हो जरा विचार कर काम करो. मेरी प्रकृति भी खराब है, आचार भी शिथिल है और शास्त्रोद्धार के कार्य में संलग्न होने से मैं इस की संभाल भी नहीं ले सकूंगा. इस लिये श्री रत्न ऋषिजी महाराज के पास इस की दीक्षा कराते तो तुमारे लिये और इस के लिये बहुत अच्छा होता. अभी हाथ में बात है. तब वे बोले—हमें तो आप की पूर्ण खातरी है आपने मोती ऋषिजी जैसे भोले साधु का भी निर्वाह कर पार पहुंचाये तो इस का तो क्यों नहीं करोगे. हम तो इस को आप ही का चेला बनावेंगे फिर आप की इच्छा हो सो करना.

इस प्रकार उन का आग्रह जान दीक्षा उत्सव सुरू कराया, फिर भींवराजजी आये उन का कहना उक्त प्रकार ही हुवा. फाल्गुन सुदी ३ शनीवार की दीक्षा लाला के मंदीर में दीगई. उपकरण का खरच भींवराजजीने दिया, वस्त्र सागरमलजी गिरधारी लालजीने वहराये. और दीक्षा पे आयेलोगोंका जीमन शिवराजजी सुराना कीतरफ से हुवा. जिस दिन मोहन ऋषिका दीक्षाका कुंकुमपत्र था उस दिन मणीलालजी आये और उन्होंने अपने प्रवास का वृत्तान्त सुनाया।-मैं मनमाड से बंबई गया, वहां शतावधानी प्रवर्पंडित

श्री रत्नचंदजी महाराज विराजमान थे, उन को शास्त्र बताया, उनांने पसंद किया और कितनीक सुचनाओं भी की. वहां से कुछ दिन जन्मभूमि के ग्राम में रह कर हिंडोयन सिटी गया. वहां आपने भेजा हस्तलिखित सुयगडांग शास्त्र भी पोष्ट मारफत प्राप्त हुवा, जहां पंडित प्रवर वृद्ध मुनिवर श्री मधव मुनि महाराज विराजमान थे,उन को शास्त्र बताया. महाराज श्रीने अपने शिष्य मगनमलजी, महाराज सहित तीन शास्त्रों की अलग २ प्रत लेकर इस का मिलान किया, आठ दिन महा परिश्रम उठाकर आद्यन्त मेरे पास यह सम्पूर्ण शास्त्र श्रवण किया. इस में कितनाक सुधारा भी किया और अमूल्य सूचनादी कि अर्थ लिखती वक्त खास मूल पर लक्ष रखना, मूल के बाहिर अर्थ का आशय नहीं जाने देना और गौरववाले (अहु अर्थी) वचनों में अर्थ लिखना. इस शैली से कोई भी शास्त्र लिखोगे तो वे निर्विवाद सर्व मान्य बनेंगे. इस हित शिक्षा का स्वीकार कर पंजाब में नाभे गया. वहां उपाध्यायजी आत्मारामजी, महाराज को शास्त्र बताया. परंतु उन को अवलोकन करने की फुरसत नहीं मिली. तीन दिन वहां रह कर पीछा लोटा रास्ते में पूज्य श्री लालजी महाराजादि बहुत से साधुओं को तथा दुर्लभजी भाई आदि बहुत से श्रावकों को शास्त्र बताया, सबने पसंद किया, रतलाम होकर यहां आया. हूं.

इस वक्त कच्छ देश पावन कर्ता परम पूज्य श्री कर्मसिंहजी महाराज के शिष्यवर्य पंडित प्रवर कविवर श्री नागचन्द्रजी महाराज की तरफ से १४ पृष्ट भरा हुवा एक पत्र प्राप्त हुवा. उस में शास्त्रोद्धार कार्य किस प्रकार चलाने से यह कार्य उच्च कोटी का होगा इस विषय बहुत विस्तार से सूचना की थी. ऐसे उत्तम कार्य के वास्ते एक स्थान रहने में कुछ दोष नहीं इस के लिये शास्त्रके तथा अन्य आचार्य के दाखले दिये थे. प्राचीन शास्त्रों शास्त्री की हुंडीयों गुटके वगैरा किस २ स्थल मिल सकेंगे जिन के पत्ते लिखे थे. हमारा जो शास्त्र भंडार है वह आप ही का है जो चाहिये सो मंगाने में बिल्कुल ही संकोच नहीं करना. ऐसी खुल्ली परवानगी दी थी. कागद स्याही प्रेस सम्बन्धी बहुत हितकर सूचना दी थी. और उत्साह वर्धक बहुत सलाह लिखी थी. यह पत्र भी इस कार्य को बहुत ही मदतगार हुवा. तैसे ही इन महाराज श्री की तरफसे प्राचीन शास्त्रों की प्रतों गुटके वगैरा बहुतसी मदत मिली वह आगे समयानुसार लिखा जायगा सो पढीये.

श्री कहानजी ऋषिजी महाराज की सम्प्रदाय के महासतीजी श्री हमीराजी की पाटनीय शिष्यनी श्रीरंभाजी माणकजीने अपने पास के सब शास्त्रों का लिष्ट भेजा और लिखवाया किं चाहिये सो मंगाइये. वगैरा उत्साह वर्धक सामाचार दिराये.

भीनासर वाले बांठीयाजीने शास्त्रोद्धार की शरुआत सुनकर यह कार्य किस प्रकार होगा इस के निर्णयार्थ कितने कठिन शास्त्रीय अक्षरों इन के उच्चारन करने का, तथा और कितनेक प्रश्न पूछवाये, जिस का उत्तर उन को संतोष जनक मिलने से उनोंने भी अपने पास के शास्त्रों भेजने बद्दल इच्छा दर्शायी. बहुत शास्त्रों भी भेजे.

इस प्रकार जिन २ को इस कार्य की मालुम होती गइ उनोंने अपने पास जो शास्त्रों थे उन के नाम की सूचि भेजकर सूचना दी की चाहिये सो मंगाइये. यह अपने स्वधर्मीयों की उदारता उत्साह प्रेम देख निश्चय हुवा कि ऐसा कार्य होना बहुत जीवों अन्तःकरण से चहाते हैं. यह उदारता प्रत्येक का अनुकरणीय है.

१ आचारांगजी की छपी हुई, बाबूजी[1] वाली एक दो प्राचीन हस्तलिखित प्रतों श्री नागचंद्रजी महाराज की तरफ से, एक प्रत कुचेरा नागोर भंडार से श्री जोरावमलजी

---

१ जहां बाबुजी शब्द लिखा है वहां मकसुदाबाद वाले रायधनपतिसिंहजी बाबु समझ लेना. जिनों की तरफ से भी बहुत वर्षों पहिले कुछ शास्त्रों छपे थे.

नथमलजी महाराज की तरफ से, २ सुयगडगजी—छपी हुइं मद्रास वाले शेठ मानमलजी तरफ से. हस्तलिखीत प्रत डेह वाले हंसराजजी श्रावक तरफ से, ३-४ ठाणांगजी और समवायांगजी,बाबूजीवाली नागचन्द्रजी महाराज तरफ से,हस्तलिखित प्राचीन दो प्रतों धोराजी क भंडार से ५भगवतीजी-बाबूजीवाली धोराजी भंडार तरफसे, हस्त लिखित प्राचीन प्रतों एक टबावाली एक टीकावाली श्री नागचन्द्रजी महाराज तरफसे एक अर्थवाली भीनासर के बांठी याजी तरफसे, ६ ज्ञाताजी-बाबूवाली, मद्रासवाले शेठ मानमलजी तरफसे, हस्त लिखित मूलपाठवाली १ होंश्यारपुरसे, श्रीमती महासतीजी श्री पारवतीजी तरफसे, १ लींबडी से नानचन्द्रजी महाराज तरफसे. ये दोनों १५०० के साल की लिखी हुई थी. ७ उपासक दशांगजी-बाबुजीवाली नागचन्द्रजी महाराज तरफ से, १ पंजाबी उपाध्यायजी श्री आत्मारामजी कृत भाषान्तरवाली लाहोर के खजानचीजी तरफ से, ८-९ अन्तगडजी और अनुत्तरोववाई-खेतसी जीवराज की, छपी हुई हरलालजी श्रावक की तरफ से हस्तलिखित भीनासर के बांठीयाजी तरफ से, १० प्रश्नव्याकरण-हस्तलिखित श्री नागचन्द्रजी महाराज तरफ से, ११ विपाकजी-बाबुजीवाली श्री नागचन्द्रजी महाराज की तरफ से' १४ रायप्रश्नीय-बाबूजी वाली, मद्रास के शेठ मानमलजी तरफ से, १५ जीवाभिगम-

बाबूजी वाली ईडोला के भंडार से कालीदास भाई की तरफ से, और टवार्थवाली शुद्ध प्रत लींबडी (काठीयावाड) के भंडार से, १५ पन्नवनाजी-बाबूवाली धनेरा (गुजरात) के भंडार से श्री नागचन्द्रजी महाराज के परमप्रयास से तथा बहुत अर्थ यंत्र वाली मेरे पास की, १६ जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति-बाबूजी वाली. इडोला (गुजरात) के भंडार से, १७ चन्द्रप्रज्ञप्ति हस्तलिखीत तथा इस का गुटका और दरीयापूरी सम्प्रदाय के पूज्य श्री रघुनाथजी स्वामीजी के पंडित शिष्यवर्य श्री जीवाजी स्वामी के परमप्रयास से शुद्धि वृद्धि साथ लिखित ४ गुट के श्री नागचन्द्रजी महाराज के परमप्रयास से, एक प्रत भीनासर के बांठीयाजी तरफ से, १८ सूर्यप्रज्ञप्ति-हस्तलिखित धोराजी भंडार से, दोनों का मूल अर्थ आशय एक ही है. १९-२३ निरियावलिका पंचक हस्तलिखित भीनासर के बांठीयाजी तरफ से, २४ व्यवहार हस्तलिखीत श्री नागचंद्रजी महाराज तरफ से. २५ बृहदकल्प-छपा हुवा डाक्टर जीवराज घेला भाइ का, २६ निसीथ-हस्तलिखीत नागचन्द्र जी महाराज की तरफ से, २७ दशाश्रुतस्कन्ध-धोराजी भंडार की तरफ से, २८ दशवैकालिक-डाक्टर जीवराज घेलाभाइका छपा हुवा, २९ उत्तराध्ययनजी-डाक्टर जीवराज घेलाभाइ का, तथा कथा वाली मेरे पासकी ३० नंदीजी बाबुजी वाली, मद्रास वाले शेठ मानमलजी

तरफसे, ३१ अनुयोगद्वार-पंजाबी उपाध्यायजी आत्मारामजी वाली पढ़ाये. एक में पंत की और १ आगमोद्धार समिति सूरत का मूल्य से मंगाया सो. और ३२ आवश्यक-लींबडी के भंडार से श्री नानचन्दजी महाराज तर्फ से. इस प्रकार स्थान २ से शास्त्रों की प्रतों आइ तथा चन्द्र प्रज्ञप्ति सूर्य प्रज्ञप्ति और आवश्यक सिवाय २९ शास्त्रों की कितनीक प्रतों मेरे पास की सब से मिलान कर यथावुद्धिशुद्धी वृद्धी कर आचारंग से लगा कर आवश्यकतक ३२ ही शास्त्रों का अनुक्रम से उतारा अनुवाद करने में तीन वर्ष १५ दिन लगे. बहुत से शास्त्रों के मिलान करने में मेरे सहचारी देव ऋषिजी की सहायता अच्छी तरह से मिली.

शास्त्रों छपने का कार्य सं० १९७२ के चैत्र वद्य सप्तमी गुरु वार पुष्य नक्षत्र से शुरू किया. प्रथम नमूना बनाकर लालाजी सुखदेव सहायजी को बताया, तब लालाजी बोले और सब ठीक है परन्तु प्रत्येक पाने पर हमारा नाम नहीं डालना चाहिये. परंतु बाबू धनपत सिंहजी की तरफ से प्रसिद्ध हुए कितनीक प्रतों के प्रत्येक पाने पर उनका नाम छपा हुवा उसका अनुकरण कर लालाजीकी ना होनेपर भी नाम कायम रखा गया.

हरेक प्रत का दूसरा उतारा करने जितना अवकाश मुझे न मिलने से मूल ता प्रथम लिखा ही कायम किया गया. और अर्थ की पुनरावृति प्रेस कापी बनाने का काम भाइ मणिलालजी के सुपरत किया गया.

शास्त्रों छपने सुरु होते ही मणिलालजी का कहना हुवा कि कुछ प्रतों मेरी तरफ से भी छपाने की इच्छा है. प्रथम तो लालाजीने यह कथन मंजूर नहीं किया साफ मना की. परंतु जब मैने समझाये तब मेरे समझाने से १०० प्रतों छपाने की आज्ञा फक्त मणिलालजी को दी अन्य किसी को भी नहीं.

शास्त्रों जिस प्रकार एक से बत्तीस तक अनुक्रम से लिखे गये उस ही प्रकार अनुक्रम से छपाने का भी निश्चय था, परंतु कार्य सुरु हुवे बाद प्लेग वगैरह बिमारीयों के विघ्न से तथा मणिलाल भाइ को जरुरी कार्यार्थ दोतीन वक्त स्वदेश में जाने का होने से प्रेस कापी पुनरावृति न हो सकने से कितने शास्त्रों आगे पीछे भी छपे गये है. कैसा ही हो छपे तो सब ही हैं.

जब सुयगडांगजी सूत्र छप रहा था तब महात्मा श्री दौलत ऋषिजी का चौमासा खाचरोद था. उन की तरफ से पत्र आया कि-छपते हुवे शास्त्र का एक फारम देखने की महाराजश्री की इच्छा है. तदनुसार एक फारम भेजागया, उसका जबाब इसप्रकार आया. "और आपने जो दूसरा सुयगडांगजी सूत्रा पाना नं० १२ भेजा सो यहां पर श्री दौलत ऋषिजी महाराज को देखाया. उनोंने ऐसा फरमाया कि-" श्री अमोलख ऋषिजी महाराज की बुद्धि और पंडिताइ देखकर बहुत खुशी हुवा हां. धन्य है हमारी सम्प्रदाय का भाग्य सो ऐसा मुनिराज पंडित विराजमान है. बहुत शुद्ध लिखा है. श्री महाराज साहेब का काम की में कांइ तारीफ कर सकां, थोडा पढा हुवा भी इस में समझ सकेगा. वगैरा " सं० १९७३ आसोज.

परमपूज्य श्री जयमलजी, महराज के सम्प्रदाय के श्रीमान श्री नथमलजी, महाराज कीतरफ से इस प्रकार पत्र प्राप्त हुवा.

महा महिमा महोदय श्री मन्परमपूज्य मुनिराज श्री अमोलख ऋषिजी ! सुखार्थ

अनु
दिन

प्रत्युत्तर-आप का पत्र मिला पढकर अत्यन्त प्रसन्न हुवा. आपने इस विनीत जन की महती प्रशंसा लिखी सो केवल आपकी उदार हृदयता है. मैं उस का प्रकृत पात्र नहीं हूं. यह सही है कि शास्त्रोद्धार से ही साधु समाज की प्रतिष्ठा है. एतदर्थ आपने जो प्रयत्न प्रारम्भ किया है वह सर्वथा स्तुत्य है. हिन्दी राष्ट्र भाषा है अतः उसी में धर्म ग्रन्थ छपना यह परमोत्तम व्यवस्था है. जैन धर्म इसी योजना मे अन्तःराष्ट्रीय धर्म हो सकेगा. यदि आप के निर्दिष्ट ग्रन्थों की प्रति हमारे यहां शास्त्र भंडार में होगी तो अवश्य आप की सेवा में भेजे जासकेंगे. श्रीमान राजा बहादुर लाला सुखदेव सहायजीने आप के आदेश से जो द्रव्य प्रदान किया है एतदर्थ जैन समाज उन का चिर कृतज्ञ है और रहेगा.

आप का अतिशय,

विनीत वंशवद-ऋषि नथमल, कार्तिक १-७२.

कवी
श्वर

और हमारे यहां विराजमान मुनि श्री जोरावरमलजी महाराज आदि ठाणा ३ से वहां विराजते मुनिवरों की सुखसाता इच्छते हैं और मुनि श्री के सदुद्यमकी हर समय अनुमोदना करते हैं:—

दोहा—चातक ज्यों तरसत चतुर, जिन वच रस के हेत ॥ इन्द्र अमोलक घन सुखद, वरसत समय सुचेत ॥ १ ॥
जिनवानी द्रौपदी हरी, पद्मोत्तर अज्ञान ॥ पारथ लाला कृष्ण मुनि, आनी सजय सुजान ॥ २ ॥

सवैया—अगम अथाह अति आगम उदधि तामे, मीन ज्यों प्रवीन यह लीन व्हे रहानो है ॥
मोह अन्धकार के विकार को निकार दीनो, मोक्ष मग सूर को सुनूर प्रगटानो है ॥
लख्न सुहानो सदा उद्यम अघानो नहीं, आलस छुवानो नहीं छोनी में न छानो है ॥
कठिन समय में समय को सुधार कीनो, अमृत अमोलक समान को सयानो है ॥ १ ॥
जोरावरमलजी.

इस प्रकार केई मुनिवरों के, साध्वीयों के, श्रावकों के पत्र आये हैं परंतु ग्रन्थ गौरव आत्मश्लाघा और पिष्टपेसण के सबब से यहां उल्लेख नहीं किया.

शास्त्रों छपने का काम प्रारंभ हुवे बाद प्रेस के मेनेजर तथा कर्मचारीयों के प्रमाद से आचारांगजी के बहुत फारमों में श्याहीकी फिकास पना व अक्षरकी छिन्न भिन्नता होती

---

* अर्थ—इन्द्र के समान अमोलक ऋषिने सुखदेव सहाय रूप घनघोर घटा चडा कर शास्त्र रूप वर्षाद से जिन वचन के रसीये चातक (पपैये) समान चतुर तरसरहे थे उन्हे सचेत-सजीवन किये हैं. ॥ १ ॥ अज्ञान रूप पद्मोत्तर राजाने जिनेश्वर की वानी रूप द्रौपदी का हरन किया था उसे अमोल मुनि समान कृष्ण और लाला समान पार्थ (अर्जुन) शास्त्रोद्धार कर पीछे ले आये ॥ २

देख उन को हर घडी सूचना तथा ऊपरा ऊपरी देख रेख रखने पर भी काम का
सुधारा नहीं हुवा. मन दुःखने लगा. इस पर से विद्वान मणिलाल भाईने थोडे काल
में प्रेस के काम का अच्छा अनुभव प्राप्त कर लिया. प्रेस के कर्मचारियों के वेतन में
गडबड होने से वे भी कच्चे दिल के बने. उन को मणिलाल भाइने हिम्मत दी और
कहा कि कुछ दिनों में हम स्वकीय प्रेस करलेंगे, तुमको किसी प्रकार की तकलीफ न
होनेदेंगे. तब प्रेस के कर्मचारीयों भी मणिलाल भाइ की तरफ मान्य दृष्टी से देखने लगे.
इतनेमें जिस मकानमें प्रेस था उसके धनी पर भी लेनदेन सम्बन्धी आफत आने से मकान
माल जपती होने का भय उत्पन्न हुवा. तब मकान बदलने की जरूर पडी परंतु सर्व
प्रकार की सुभिता वाला मकान चौकस करते भी नहीं मिलने से बडेही विचारमें पडगये.

'सीकंद्राबाद, में' चोरवाड, (काठीयावाड) के निवासी भाइ चतुरभुजजी, के
सुपुत्र छोटेलालजी, मोतीलालजी भगवानदासजी व्याख्यान में आते थे, उन को उक्त बात
मालुम होने से उस मकान के नजीक में ही एक उन की मालकी का मकान था
वह बताया. उस में प्रेस का, सब शास्त्रों का, मणिलाल भाइ के रहने की तथा
महाराज श्री के रहने की सब सुभिता, पक्के पथर का बन्धा हुवा भूतल. भी पत्थरों से

थान
दान

जडा हुवा देखकर पसंद आया. तब वह इस कार्यालय के वास्ते उनोंने दिया. परन्तु चार पांच वर्ष जितने विशेष समय के लिये विना किराया रखना उचित नहीं जान कर रु० २० मासिक भाडा देना कबूल कराया. उस वक्त उस ही बंगले के तीस रूपे से भी अधिक भाडा देने वाले मिले परंतु मालिकने धर्म लाभ प्राप्त करने लालच नहीं किया. नीचे के भाग में प्रेस का जमाव और मणिलाल भाइ का रहना हुवा. ऊपर के भाग में हम साधु लोग रहने लगे. वहां काम सुभिता से चलने लगा.

भाद्रपद महिने में लालाजी सहकुटुम्ब किसी कार्य के लिये स्वदेश गये. "श्रेयांसि बहु विघ्नानि" अर्थात् अच्छे कार्यमें अवश्य विघ्न प्राप्त होते हैं. इस कथनानुसार थोडे ही दिनों बाद प्लेगकी गडबड मची. सीकंद्राबाद खाली होने लगा. प्रेसके कर्मचारीयों भी घबराये. ग्रामान्तर जाने का कहने लगे. तब छपने का काम बंध पडा. श्रावकों के घर बाहिर जाने से हम को आहार पानी की तकलीफ पडने लगी. तब श्रावकोंने विहार करने की अत्याग्रह विनंती की. हैद्राबाद में सीकंद्राबाद के लोगों का आना बंध किया जिस से राजाज्ञा भंगकर वहां जाना भी उचित नहीं समजा. तब सीकंद्राबाद के नजीक लालाजी का श्यामसुंदर नाम का दूसरा बगीचा था उस में दो बंगले अगल २ भागमे

थे, वह लालाजी के मुनीमने हमारे को बताया पसंद आने से छोटे बंगले में ता हम रहे और बडे बंगले में ११ श्रावकों के घरों रहे. प्रेस का सब सरांजाम कागजों छपे शास्त्रों लालाजी के मशीराबाद के बडे बगीचे में रखा दिये.

लालाजी को उक्त समाचार प्राप्त होते ही घबराये और जवाबी तार द्वारा बारम्बार हमारी सुख साता के समाचार मंगाने लगे. और मणिलालजी के नाम से पत्र दिया कि-सब बगीचे में रहते हुवे भाइयों को मेरे तरफ से आग्रह पूर्वक विनंती करके उन का भोजन वगैरा सब खरचा अपनी तरफ से हुवा चाहिये. जहां तक बंगले में रहना हो वहां तक उन की कोडी भी खरच न होने देना. धन्य है उन श्रावक महाशयोंको कि, जो ऐसी मुशीबत् में भी महाराज श्री की सेवा में रहे हैं. हम तो नाम मात्र के श्रावक वक्तपर मूहछिपाने वाले हैं वगैरा. यह पत्र मणिलालजीने सब भाइयों को सुनाया और लालाजी का कथन मंजूर कराने बहुत ही आग्रह किया परंतु सब जनोंने लाला साहेब का आभार माना और बात मंजूर की नहीं. सब सुख से रहने लगे. हम

मी कभी बगीचे में, कभी कोस कोस दो दो कोस पलटन फिकट तिलेरी चिकटोटा ताडबंद घनबजार कोठी बगैरा स्थानों में जाकर आहार लाने लगे.

दुःख में दुःख और सुख में सुख की वृद्धि होती है इस कथानुसार थोडे दिन तो बगीचे में ठीक रहा फिर बहुत वर्षाद वर्षनी सुरु हुई जिससे शीत का प्रकोप हुवा. बगीचे में रहने वाले लोगों भी बिमार हुवे, पांचों साधुओं को भी बुखार आने लगा. उपचार कुछ भी चला नहीं. एक छोकरा प्लेग में आकर मरगया. लोगों कहने लगे कि सब को कोरंटी में ले जायगे. यों सुन लोगों भगने लगे, हमारे को भी विहार का बोले परन्तु बुखार से पांचों का शरीर अशक्त होरहा जिस से तथा दुसरा स्थान जाने जैसा न मिलने से पांचों ठाणे पुनः सीकेद्राबाद गये कि-उसी वक्त पांचों का बुखार तो भगगया. शारीरिक आराम पाये परन्तु श्रावकों के घरों के अभाव से आहार पानी का पराजोग नहीं बनता देख कर और दीपवाली नजीक आने से अट्ठ छट्ठम आयंबिलादि तप किये. इतने में हैद्राबाद में प्लेग की सुरुआत होने से सिरकार का अटकाव बंद हुआ. दीपवाली के द[illegible] श्रावको उत्तराध्ययन की स्वाध्याय सुन ने आये उनोंने

हैद्राबाद की विनंती की तब तीन साधुओं कोठी पर और दो हैद्राबाद में रहे. पुनः पांचों साधु को बुखार आने लगा. कोठी वाले श्रावकों बाहिर गये, तब तीनों साधु कोठी से हैद्राबाद आगये. मणिलाल भाइ भी महाराज के साथ २ फिरने लगे, हैद्राबाद में उन को भी बुखार आगया, तब महाराज बोले भाइ हमारा फिकर नहीं करना. हमारा तो यहां भी टिकाव होना मुशकील है. तुम कहां २ फिरते फिरोगे. हमारे साहायक बहुत हैं. तुम तुमारा शरीर संभालो. सुख साता रही तो सब काम कर सकेंगे. यों समझाने से मणिलाल भाई भी लाचारी के दरजे स्वदेश झोबाले (काठीयावाड) गये.

हैद्राबाद खाली होने से आहार पांनी की तकलीफ पडने लगी. बुखार से शरीर निर्बल बन गया, बडे ही विचार में पडे अब क्या करना. इतने में सीकंद्राबादवाले शिवराजजी सुरानाने विनंती की कि—हम यहां से ४० कोस पर पांच घरवाले मिरजापल्ली हैं, आप भी वहां पधारो. गुलाबबाई बोले आप वहा पधारोगे तो मैं भी श्रावगीयों के ४-५ घर ले वहां आऊंगी हमारे भी धर्म ध्यान का जोग अच्छा रहेगा. यों कह गुलाबबाई भी मिरजापल्ली गये.

महाराजने अवसर देख मिरजापल्ली जाने को तीन साधुओं को विहार कराया. वे सीकन्द्राबाद गये वहा से दो कोश पर मलकाजगिरी के जंगल में कितनेक श्रावकों झोंपडीयों बांध रहे थे वे मिलकर सीकंद्राबाद आये और विनंती की—ऐसे निर्बल शरीर में मिरजापल्ली जाना बहुत कठिन होगा. मलकाजगिरी पधारो वहां एक तम्बू खाली पडा है उस में आप रहना. तब तीनों साधुने टेलीफोन द्वारा मलकाजगिरी की आज्ञा हैद्राबादसे मंगाई. पूछतास से योग्य स्थान मालुम पडने से आज्ञा दी. तब तीनों साधु मलकाजगिरी जाकर निर्बंध तम्बु में रहे.

हैद्राबादमें दो ठानेका आहार मिलना मुशकिल हुवा तब मिरजापल्ली जाने को हम दोनों साधुने विहार किया, सीकंद्राबाद गये और विचार हुवा कि तीनों साधु से मिलकर जावें. तब हम मलकाजगिरी गये. वहां मोहन ऋषिजी को सखत बुखार आ गया और मिरजापल्ली के रास्ते में प्लेग की बीमारी से गामों खाली होगये. तब श्रावकोंने पांचों ठाने से वहां ही रहने की विनंती की चोकस करने से एक कोस के अरसे में १५-२० घर श्रावकों के निकल आये, तब वहां ही रहना उचित समझा. मिरजापल्ली से शिवरा-

...जी सुराना, पन्नालालजी कीमती, गुलाबभाई विनंती करने आये परंतु विहार का अवसर नहीं देख उन को भी निराश होना पडा. वे पीछे गये. मलकाजगिरी के जंगल में साग-रमलजी गिरधारीलालजी के मुनीम मुलतानमलजी सांकला, बक्तावरमलजी हंसराजजी पोखरणा, गुलाबचन्दजी व भवानीरामजी श्रावकोंने अवसर उचित आहार पानी औषधो-पचार की अच्छी साता उपजाई व आनेवाले की भक्ति भी अच्छी की. मलकाजगिरी से एक कोस पर बारकसवाले दश घर आकर रहे थे तथा आसपास महेश्वरी आदि के भी घर थे वहा से आहार पानी का जोग बनने लगा. तीनों वक्त व्याख्यान बचने लगा. फुरसद की वक्त में भगवती सूत्र का अनुवाद भी करता रहा. यों मन रम गया. जंगल में ही मंगल होने लगा. इस प्रकार छे महीने पूरे किये. संकट सदैव बना नहीं रहता है. इस अनुसार सीकंद्राबाद में रोग की शांति होने लगी कुछ घर श्रावकों के भी आये यह समाचार मणिलाल भाई को मिलते वे भी तत्काल आगये. महा शुक्ल पूर्णिमा पुष्य नक्षत्र को हम ठाना दो सीकंद्राबाद गये और तीन ठाने को अलवाल भेजे. प्रेस के कर्मचारीयों भी आमने २ आगये, चैत्र में पीछा छपने का काम भी शुरु हुवा. तीनों साधु भी सीकंद्राबाद आगये और लालाजी भी देश से आगये यों सब संयोग बना.

प्रथम के प्रेस मेनेजर के अमल से शास्त्र का काम अच्छा नहीं होता देख उस का प्रेस उस के सुपरत किया. बडा प्रेस खरीद लिया. टाइप तो लालाजी के खरच से ही मंगाया गया था. वह भी कायम रहा. प्रेस की मेनेजरी मणिलाल भाई के सुपरत की प्रेस का नाम मेरा तथा लालाजी का रखने का विचार मणिलाल भाईने किया. परंतु दोनों को यह बात नहीं जचने से "जैन शास्त्रोद्धार प्रिंटिंग प्रेस" नाम रखा गया. अब काम भी अच्छा और नियमित चलने लगा.

शास्त्रोद्धार के कार्य से जैन साधु मार्गी धर्म की प्रतिष्ठा वढी वह. देख कितनेक यहां के मंदिरमार्गीयों से सहन न हुई, तब साधु की हीलना कराने के इरादे से पदमसी नेनसी की दुकान के मुनीम को भरमाकर किसी दावे के रु भी के लिये देवऋषिजी को कोरट में बुलाने बद्दल समन्स निकलाया. यह खबर मणिलाल भाई को होते ही उनोंने युक्ति कर उसे धाफिस किया. यह सुन मैं घबराये. तब कितनेक साधुमार्गी कहने लगे कि सच्ची साक्षी देने में क्या हरकत है. यह समाचार लालाजी को होते ही वे तत्काल सीकंद्राबाद आये और कहने लगे किस की मगदूर है जो साक्षी दिलाना तो

रहा परंतु कोई महाराज के सन्मुख ऊंची निघा करके भी देख सके, एक लाखरूप खरच हो जावे तो कुछ हरकत नहीं किंबहु मेरे प्राण भी अर्पण है. परंतु महाराज श्री को गरम हवा भी नहीं लगने दूंगा. यह लालाजी के वचन सुन सब लोगों चम्पत होगये, चुप बैठ गये, पीछे किसी बात का चुड चुडा भी नहीं उठा. लालाजी ऐसे साधु के व धर्म के संरक्षण में तत्पर थे.

इस प्रकार यहां शास्त्रोद्धार का अलौकिक काम होता देख हमारी सम्प्रदाय के साधु साध्वीयों श्रावक श्राविका को बहु मान उत्पन्न हुवा. और प्रतापगढ में ज्ञाना-निधी प्रतापी छत्ती ऋद्धि के त्यागी वैरागी श्री दौलत ऋषिजीने तथा प्रवर्तिनी के पदको प्राप्त हुई सती शिरोमणी शुद्धाचारिणी वृद्ध आर्जिकाजी श्री सोनाजी का तथा कितनेक श्रावक श्राविका मिलकर मिसलत की कि अपने सम्प्रदाय में कोई पूज्य नहीं है और कान्फरन्स के तरफसे इस बाबत में बहुत ही प्रेरणा हो रही है. इस लिये श्री अमोलक ऋषिजी को पूज्य पद्वी समर्पण करने से अपनी सम्प्रदाय की उन्नती अच्छी होगी. इत्यादि विचार कर उस वक्त सीकंद्राबाद से देश ऋषिजी के भ्राता पुष भगिनी भी

थरता

वहा गये थे, उन से मेरा स्वभाव आचार वगैरह की तपास कर खाती होनेसे प्रथम श्रावक वरिष्ठ उत्तमचंदजी आंजाणिया के जेष्ट पुत्र धनराजजी को साधु भक्त वृद्धिचन्दजी बोवडे के पुत्र मगनमलजी को और पीछे से जावरेवाले शास्त्र कोविद व्याख्यान दाता व्रतधारी श्रावक मगनीरामजी को तथा श्रावक वरिष्ट जगरूपजी शेठ के पौत्र सौभाग्यमलजी को यों चार श्रावकों को सीकंद्राबाद भेजे. उनोंने दर्शन कर सब बात दर्शाई. तब मैंने उत्तर दिया कि मैं पूज्य पद्वी के लायक नहीं हूं. सम्प्रदाय के सो साधु आर्जिका का मन सभालना यह काम सहज नहीं है. इस पद्वी के लायक तो गुरुवर्य श्री रत्न ऋषिजी महाराज हैं वे ही सम्प्रदाय के सब साधुओं से बडे हैं. शरीर संपदा वगैरह बहुत संपदा के धारक पूज्य पद्वी के योग्य हैं. उनको अर्पण करने से अपनी सम्प्रदायकी शोभा अच्छी होगी. मेरा तो आग्रह पूर्वक यही कहना है. बाकी इधर की आशा बिलकूल ही नहीं रखना. मगनीरामजी बोले—आप कोई बात का फिकर न करो सब काम दौलत ऋषिजी महाराज व महासतीजी सोनाजी करलेंगी. आप को किसी भी प्रकार की तकलीफ न होगी. ऐसे काम में प्रतिष्ठित पुरुष की आवश्यकता है. आप का नाम हिन्द में मशहूर होगया है इस लिये इस पद्वी के योग्य आप ही हो. पूज्य श्री मुन्ना-

लालजी महाराज को पुज्य पद्वी के बदल में जम्मु गया था और उनने मेरी बात स्वीकार
करली. वैसा ही मेरा मान आप भी रखीये. यह अवसर न गमाइये. इत्यादि बहुत
ही समजाये परंतु मैंने तो उन की बात बिलकूल ही कबूल की नहीं, तब वे भी आश्चर्य
चकित बने कि पुज्य पद्वी के वास्ते तो केइ झगडे होते हैं और आप को बिना प्रयास से
महामान्य पद प्राप्त होता है आप मान्य नहीं करते हो यह बडी ताजुब की बात है.
यों कह वे निराश हो पीछे गये. लालाजी शिवराजजी, वगैरा श्रावकों को इस बात की
मालुम पडी. लालाजी कहने लगे इस पद के आप योग्य हो, जरूर स्वीकार करना था.
पीछे दौलत ऋषिजी के पत्र उज्जैन से भी आये. हम श्रावक को भेजते हैं; खुलासा
करना हो सो करलीजीये. उन को भी ना लिखाया. इस बात पर ध्यान ही नहीं दिया.

वैशाख महिने में दो प्रहर को लालाजी सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी
दर्शनार्थ सीकंद्राबाद आये और दर्शन वंदन नमन कर अर्ज की कि-महाराज साहेब मैं
आप के सम्मुख इस पापा (ज्वालाप्रसाद) को कहता हूं कि जिस प्रकार यह शास्त्रोद्धार
कार्य प्रारंभ कराया है इस ही उत्साह से तू इस काम को पूरा कराना. तब मैं बोला

लालाजी !. यह क्या बात ?, लालाजी बोले महाराजजी ! अब मेरे शरीर का मुझे भरोसा लगता नहीं है. मेरे मन में भाष होता है कि यह शरीर अब विशेष काल रहने का नहीं. मुझे मरने का बिलकुल ही फिकर नहीं है. मरना तो सब ही को है. आप के प्रताप से यह जैन धर्म चिन्तामणि मेरा हाथ लग गया यह मैं मेरा बडा पुण्य ही समझता हूं. फिकर इतना ही है कि आप तीन कोस दूर विराजे हो, वक्तपर मुझे सहाय कौन देगा. मै बोल'-लालाजी ! अभी तो ऐसा कुछ देखाता नहीं है और ऐसा ही अवसर हुवा तो घंट का रास्ता है. यथा उचित करने का मेरा विचार है. यों सुन लालाजी कितनीक देर अन्य वार्तालाप कर वंदना कर स्वस्थान गये, और उस ही दिन से आपने घर का बन्दोबस्त करना प्रारंभ किया. केइ गरीबों के पास हजारों रुपे का लेना था उन के खत स्टेम्प, केइ नहीं देने योग्य के पास लेना था. उन के लाखों रूपे के स्टेम्प फाड डाले, जला डाले, उस में के टुकडे रामलालजी कीमती के हाथ लगे थे. उन के कहने से यह बात मालुम हुई. देने जैसे केइ देनदारो को बोलाकर कहा तुमारे देना हो सो दो और फारकती लो. हजारों वाले के पास से सैकडो लेकर ही फारकती देदी. जिस का देना था उस का साफ चुकता खाता कर दिया. कान्फरन्स के

५००० रुपे जमा थे वे भी व्याज सहित पीछे भेज दिये और जो कुछ बंदोबस्त करना था वह यथा उचित करने लगे. लोगों देख आश्चर्य पाने लगे. पूछने से उत्तर देते की जितनी उपाधी कमी होगी उतना ही आराम ज्यादा पावेंगे. अपनी उपजीविका सुख से चले तो फिर अपनी व पराइ जान को दुःख में क्यों डालना. आरंभ भी बहुतसा घटादिया. गुप्तदान पुण्य सुकृत भी बहुत सा किया और हरवक्त व्याख्यान श्रवण वगैरा धर्मलाभ भी अच्छा लेने लगे. अपन मनको संसार से विरक्त कर धर्ममें मशगुल बने.

महा युद्ध के कारण से वस्तुओं का भाव बहुत बढ गया. और पइसा खरचते भी इच्छित वस्तु वक्तपर मिलनी मुशकिल होगई. शास्त्रोद्धार कार्य का हिसाब लगाया तो ४०००० रुपेमें भी पार होना मुशकिल देखाने लगा. तब पर्युसनों में जन्मका व्याख्यान हुवे बाद मैंने लालाजी से कहा कि अबी लढाई के कारण से वस्तुओं महंगी बहुत होगई है, शास्त्रोद्धार का काम रु० ४०००० में भी पार पडना मुशकिल देखाता है, इस लिये युद्ध बन्ध हो वहां तक काम बध रखना ठीक है. तब लालाजी हास्य मुद्रा कर बोले—महाराजजी ! हम संसारी लोगों हैं, हमारे खरच का आप क्या ख्याल

करते हो. भाव तो सब ही वस्तुओंका बढगया है सो क्या हमने खाना पहरना संसारिक हरेक कार्यों में खरच करना छोड दिया है. इस में तो हम कसर करते ही नहीं हैं तो फिर ऐसे परमोत्तम कार्य में क्यों करेंगे. धर्मार्थ तो जितना द्रव्य लगे उतना सुकृत्य में ही लगता है. हमारे अहो भाग्य हैं कि आप जैसे महा पुरुष के प्रताप से हमे यह महा लाभ प्राप्त करने का मौका मिला है. आप तो जिस उत्साह से काम करते हो उस ही उत्साह से किये जाइये पार पहोंचाइये, यह काम तो लगे हाथ हो गया सो हो गया आगे का क्या भरोसा ? और विशेष में यह अर्जी है कि आप को परिश्रम तो अधिक पडेगा परंतु जो बन आवे तो ३२ ही शास्त्रों का भाषानुवाद कीजिये. अब १ शास्त्र के वास्ते काम अधुरा न रखीयेजी. इत्यादि लालाजी के वचन सुन लालाजी की उदारता दीर्घ दृष्टी शास्त्रोद्धार का अपूर्व प्रेम देख कर बहुत ही सानन्दाश्चर्य उत्पन्न हुवा, काम करने का दुगुना उत्साह बढा और अहमदाबाद के डा० जीवराज भाई की तरफ से प्रसिद्ध हुवा बृहदकल्प देख चारों छेद तथा चन्द्रप्रज्ञप्ती सूर्यप्रज्ञप्ती छपाने का निश्चय किया. पूर्व प्रमाणे ही काम चलने लगा.

भाद्रपद शुक्ल पूर्णिमा को लालाजी श्याम को दर्शनार्थे सीकंद्राबाद आये. उसे वक्त प्रतिक्रमण हो रहा था सो दत्तचित्त से श्रवण किया. फिर मणिलालजी से बोले कि कोई एक धर्म संस्था होने योग्य हो तो सुचना करो, अच्छी तरह याद करके कहे मुझे चेताना. फिर मेरे से अर्ज की आप दूर विराजते हो मुझे सहाय किस प्रकार लेगा? मैने पूर्वोक्त प्रकार ही उत्तर दिया, लालाजी उठने लगे तब झोका खाया, यह देख मेरे मन में विचार हो गया, परंतु उस वक्त कुछ बोल सका नहीं, लालाजी स्वस्थान गये और दान पुण्य सुकृत्य करना सुरु किया. यतिम खाना जहां अंधे पंगुले अपंग अनाथ मनुष्यों सिरकार की तरफ से परवरस होते हैं. उन को भोजन दिलाया. मोगलाइ कैदीखाने के कैदीयों को भोजन दिलाया. अपने घर पर ही हजारों भिक्षुकों भी अन्न वस्त्र देना सुरु कराया. सीक्षो जैनों की सहायता के लिये भी कुछ रकम निकाली और मणिलालजी को बोला कर उन के हाथ से दिल्ली, अजमेर, रतलाम भी किसी संस्था खोलने बद्दल पत्र दे सलाह मंगवाइ. कोइ एक धर्म संस्था स्थापन करना यह लालाजी का परमोत्कृष्ट हेतु था.

आते जाते से लालाजी के समाचार पूछते ही रहता था कि अश्विन वद ५ मी को समाचार मिले कि लालाजी बेभान पडे हैं. उस ही वक्त दो ठाने रवाने हो चौमासे में दो कोस के ऊपर का आहार पानी कल्पे नहीं इस लिये कोठी पर आहार पानी कर दो प्रहर को लालाजी पास गये. देखें तो सब लोगों चुपबैठे हैं और लालाजी बेभान पलंग पर पडे हैं. हम को देख सब लोगोंने खडे हो सत्कार दिया, ज्वाला-प्रसादजीने लालाजी के कान में कहा महाराज आये हैं तो कुछ भी उत्तर नहीं दिया. फिर दूसरी वक्त कहा सीकंद्राबाद से महाराज आये हैं कि तुर्त आंखों खोली. अहो! अहो! कर बोले मुझे पलंग से नीचे उतारो, जल्दी उतारो, असातना होती है. मैंने व लोगोंने लालाजी को बहुत ही समझाये, परंतु किसकी भी मानी नहीं. तब दो जनेने पकडकर नीचे बैठाये तीखुत्ता के पाट से चरणों को हाथ लगाकर वंदना की और कहने लगे—आपने मेरे लिये बडी तकलीफ ली, मैं आप का ऋणी हूं. महाराज आज्ञा लेकर नीचे बैठगये छंद स्तवन सुनाये. लालाजी सुनते २ हर्ष आह्लाद में गर्क बनगये, नागपुंगी वत् घूमने लगे. सुने बाद बोले आप के दर्शन से और वचन श्रवन से मेरा आधा रोग तो चलागया अब थोडे ही दिनों में आप के चरणों में मैं हाजर होऊंगा. जहां तक हम बैठे

रहे वहां तक आप भी बैठे रहे. उन के शरीर को विशेष तकलीफ होती हुई देख हम हवेली अन्दर गये. लालाजी के सब कुटम्ब को दिलासा दिया फिर लालाजी पास आये तो पूर्वोक्त प्रकार ही फिर पलंग के नीचे उतरे वंदना नमस्कार किया मंगलिक श्रवन किया. कुछ प्रत्याख्यान भी किये. ज्वालाप्रसादजी से बोले, महाराज को पहोंचाने जावो. घर बाहिर तक सब लोगों पहोंचाने आये हम सीकंद्राबाद आये.

सीकंद्राबाद आये बाद लालाजी सदैव कार्ड में अपनी सुखशांती के समाचार दिलाने लगें. औषधोपचार चालू रहा तो भी शास्त्रोद्धार कार्य समाप्त कराने की सूचना सदैव ज्वालाप्रसादजी को करते रहे. आश्विन वद्य १३ को साधु के दर्शन को लालाजी के मन में प्रबल इच्छा हुई और हुकम दिया गाडी (घोडों की बग्गी) मंगावो तब लालाजी के वकील गोपीलालजी बोले—अभी आप का शरीर बाहिर जाने लायक नहीं है, तो भी माना नहीं. गाडी मंगाई कपडे पहन के तैयार हुवे. इतने में डाक्टर आ गया, लालाजी की तबीयत देख दूसरे से बात करने लगा. इतने में लालाजी गुड गये. उस वक्त ज्वालाप्रसादजी की पत्नी कोटडी में नजीक थी वह रोने लगी, तब जोर

मे कहा " कोई किसी का नहीं है " इतना अन्तिम शब्द बोलते ही लालाजी सुखदेव सहायजी इस अनित्य शरीर को छोड कर स्वर्गगति को पधारगये. उपस्थित सर्व लोगों देख अत्यन्त खेदाश्चर्य पाये. हाहाकार मचगया. संस्कार क्रिया होने लगी. हजारों मनुष्यों के वृंद से लालाजी के शरीर को स्मशान में लेगये. संस्कार क्रिया बहुत ठाठ से कीगइ. लालाजी शरीर से तो अदृश्य होगये परंतु गुणोंकर तो इस भारत भूमि में चिरकाल पर्यंत सजीवन बन रहे हैं व रहेंगे.

लालाजी के वियोग का दुःख उन की पत्नी, पुत्र, पुत्री, व पुत्रवधू को ही हुवा हो इतना ही नहीं परंतु जो जो लालाजी से परिचित हैं वे सब ही लालाजी के वियोग से दुःखी हैं. दृढधर्मी संघवात्सल्य उदार प्रणामी दानवीर कार्यदक्ष धर्मस्थंभ नर रत्न का वियोग किस सत्पुरुष को दुःख प्रद न होगा ?

धैर्यता

दो दिन से लालाजी का पत्र आया नहीं जिस से मैं बडा ही फिकर में था कि चतुर्दशी के दो प्रहर को धर्मदलालु गुलाबचंदजी रांका आकर बोले कि लालाजी

का इन्तकाल होगया. यह सुनते ही सन्नाटा बीत गया, रोमांच हो गये सुस्ती आगई, उसीवक्त प्रेस में समाचार जाते काम बंद किया गया. मणिलालजी आये बात का निर्णय कराने स्थानक के दरोगे लछमैया को तुर्त बाइसिकल से हैद्राबाद भेजा. क्या ऐसी बात भी असत्य होती है ? सुनते ही सब खेदाश्चर्य बनगये. मणिलालजी वगैरा बहुत लोगों हैद्राबाद गये, ज्वालाप्रसादजी से मिले. ऐसे पितारत्न के वियोग से और घर का सब कार्यभार सिरपर पडने से उन के हृदय को कितना वज्राघात हुवा होगा? यह लिखने की क्या जरूर है. तथापि इस वक्त भी ज्वालाप्रसादजी की धैर्यता बडी प्रशंसनीय है आपने सब दुःखको अपने मनमें दबाकर आये गये लोगोंका यथाउचित सत्कार वार्तालाप वगैरा जो जो करने का था वह २ करते रहे. मणिलालजी को अपने नजीकमें बैठाकर साधुजी की सुखसाता पूछी. मणिलालजीने व्यतिकर सुनाया. तब ज्वालाप्रसादजी बोले-महाराज साहेब हमारे गुरुवर्य ज्ञानी गुनी महात्मा पुरुष हैं. उन का कर्तव्य है कि हमारे जैसे अल्पज्ञों को सद्बोध द्वारा समाधान करना. मैं महाराज श्री के चरणों का दास हूं, सेवा में हाजर हूं. होनहार तो टाला टलता ही नहीं है इत्यादि महाराज सब जाननेवाले हैं तुम भी सुज्ञ पुरुष हो जिस उत्साह से काम करते हो

किया गया था, पर के दिन व्याख्यान में जैन जैनेतर हजारों मनुष्य एकत्र हुवे थे, व्याख्यानकी अलौकिक ठाठ जमा था. व्याख्यान अनेक मतोंके शास्त्रोंसे तपका महात्म्य बताकर फिर तपस्वीजीके गुण विषयमें हुवा था. फिर तपस्वीजीने सभाके मध्यमें खडे हो १२उपवासके प्रत्याख्यान ग्रहण किये, और जय ध्वनि के साथ स्वस्थान बैठे. यहां दर्शनार्थ कच्छी मुनिवर श्री नागचन्द्रजी महाराज के पास दीक्षा लेने वाले वैरागी रणसीभाइ आये थे उनोंने तपस्वीजी के गुणविषय स्तवन बनाया था वह घाडनदी वाले चंदनमलजी सीवराजजी सुराणाने सुनाकर सभा मंडप गर्जा दिया था. बाद में स्थानक के रंगीले लछमैयाने मोहन ऋषिजी कृत तपस्वीजी के गुण विषय मधुर स्वर से स्तवन किया था. उस का पंचों की तरफ से पंच पोषाक की वक्सीस कीगइ थी. उस वक्त तपस्वीजी के संसार पक्ष की छोटी बहिनने पचीस उपवास के प्रत्याख्यान भी बडे ठाठ से किये थे. उस ही वक्त लालाजी ज्वालाप्रसादजी की माताने बहिनने और हीरालालजी की पत्नीने भी आठ उपवास (अठाइ) के प्रत्याख्यान किये थे. तब लालाजी ज्वालाप्रसादजी की तरफ से सब परिषद के लोगों को, प्रभुजी को और सैकडों भिक्षुकों को तथा गाडी भरकर ग्राम में घरों घरों लड्डु की प्रभावना बांटी गइ थी. अन्य की तरफ से भी व्याख्यान

वाले को प्रभावना दी थी.

इस वक्त सीकंद्राबाद में प्लेग की शुरुआत होने लगी संवत्सरी जैसा पर्व शिरो-मणी आने से हिम्मत धारन कर लोगों स्वस्थान रहे. संवत्सरी हुवे बाद उदय ऋषिजी के २१ उपवास का पारणा भाद्रव शुक्ल ९ का होने से लोगों रुके. इस तप के पूर पर भी लालाजी ज्वालाप्रसादजी की तरफ से तीन दिन तक गरीबों को चने मुरमुरे दिये गये थे. पारना हुवे बाद लोगों एकदम चले गये. फक्त दो तीन घर रह गये. बहुत लोगोंने हमारे को भी विहार करने की वीनंती की परंतु हमने कहा अब के ऐसा कुछ जोर में रोग नहीं है तथा लोगों भी बहुत दूर गये नहीं हैं, हम बाहिर जाकर आहार पानी ला सकेंगे. साताकारी मकान छोड जंगल में कौन पडे. ज्ञानीने भाव देखे सो होंगे. यों निश्चय कर हम सीकंद्राबाद में ही रहे. मलकाजागिरी, लालागुडे, मेट्टुगड्डा, चिलकलगुडे, चिकटोटा, तिलेरी ताडबंद बंगले वगैरा जिस २ स्थानों में श्रावकादि की वस्ती थी वहां जाकर आहार लाने लगे और पानी तो ग्राम में हलवाई की दुकानों पर से मिल जाता. इस वक्त मणिलालजीने अपने लिये तथा प्रेस के कर्मचारियों के लिये

सीकंद्राबाद से एक कोस पर लालागुडे में लालाजी के खरच से झौंपडीयों बनवाई थी उस में सब रहे भोजन कर काम पर आ जाते और संध्या को चले जाते. जिस से छपाइ का काम भी चालू रहा. यों तीन महिने व्यतीत किये. शांति हुवे. सब लोगों स्वस्थान जमे.

जिस वक्त चन्द्रप्रज्ञप्ति सूर्य प्रज्ञप्ति सूत्र का अनुवाद शुरु करने लगा तब बहुत से श्रावक श्राविकाओं का तथा पास के साधुओं का कहना हुवा कि—इन दोनों शास्त्रों को छोड कर प्रथम अन्य सब शास्त्रों का अनुवाद कीजिये. सब हुवे बाद फिर आप की मरजी हो तो इन का अनुवाद भलाइ कीजिये. क्यों कि बहुत से स्थान इन शास्त्रों के पठन श्रवण से केइ तरह के विघ्नोत्पत्ति हुई श्रवण की है. तब मेरा कहना हुवा कि— " शास्त्रों के पठन श्रवन से विघ्नोत्पत्ति होवे ऐसी शंका सम्यक्त्व दृष्टी को करना ही नहीं !" अर्हन्त प्रणित वागेश्वरी सदैव सब जीवों को एकान्त हित-सुख-क्षेम-कल्यान करने वाली होती है. जैसे अन्य शास्त्रों हैं तैसे यह भी हैं. शर्फ इन में गणितानुयोग की विशेषता होने से विशेषज्ञ विना समझ में न आने से पठन करने मे पश्चात रहते हैं. हा,

शास्त्रों की अशातना करने से विघ्नोत्पत्ति जरूर होती है. मैंने सब शास्त्रों अनुक्रम से लिखने का नियम धारन किया है. उस ही प्रमाणे ३२ ही शास्त्रों अनुक्रम से लिखने का मेरा निश्चय है. यों कह लिखना सुरु किया, लिखते २ एकदा शीताधिकता से ज्वरोत्पत्ति हुई, यह देख साधुओं और लोगों घबराने लगे, आगे लिखना बंध करने का अत्याग्रह से कहने लगे. तब उत्तर दिया की ग्राम में इतने लोगों ज्वर ग्रासित हो रहे हैं सो क्या सब ही चन्द्र प्रज्ञप्ति के लिखने से हो रहे हैं ? यह तो वेदनीय कर्मोदय होता ही रहना है. फिकर न करो देवगुरु प्रसाद सब अच्छा ही होगा, यों कह आगे लिखना शुरु रखा. थोडे दिन में सुख साता होगइ. इस प्रकार सुख साता से सर्व चन्द्र प्रज्ञप्ति सूर्य प्रज्ञप्ति दोनों का लेख समाप्त होगया. तैसे ही निर्विघ्नता से दोनों शास्त्रों छप भी गये. "आसता सुख सासता." यह सत्य है.

जब उत्तराध्ययनजी शास्त्र लिखना प्रारंभ करने लगा तब सब सूत्रों प्रमाणे मूल और भावार्थ ही लिखने का विचार था. परंतु मेरे पास एक कथा वाली लिखत उत्तराध्ययनजी की प्रत थी उस का अवलोकन कर, देव ऋषिजी बोले, की—विना कथा

था
ली

की उत्तराध्ययनजी तो प्रथम भी छपी है परंतु कथा सहित छपी हो ऐसा आज तक सुनमे में नहीं आया इसलिये यहां कथा सहित छपाना ठीक है. मैंने कहा कि उत्तराध्ययनजी की सब कथा प्रमाणिक नहीं हैं क्यों कि बहुतसी कथाओं प्रक्षेपिक तथा कितनीक कल्पित जैसी भी लगती है. फिर मुझे ही विचार हुवा कि नन्दीजी सूत्र में भी रोहा प्रमुख की कथा प्रक्षेपिक है तथा कितनीक कल्पित भी है वे तो छपना ही पडेगा. क्यों कि प्रायः सर्वस्थान इस वक्त कथा वाली ही नंदीजी देखने में आती है. इसलिये उत्तराध्ययनजी भी कथा सहित छपावें तो क्या हरकत है. यों जान कथाओं में स्वमतानुसार कितनीक शुद्धी वृद्धी कर छपाइ है.

बत्तीसवा आवश्यक सूत्र छपाने का घोटाला तो मन में बहुत दिनों से होरहा था, क्यों कि इस वक्त तो घर २ का आवश्यक सूत्र हो रहा है. सच्चा अवश्यक कौनसा है इस का पत्ता लगना भी मुशकिल हो गया. कितनेक पूज्य महात्माओं को पत्र द्वारा पूछा की सच्चा आवश्यक कौनसा है. जिस का उत्तर फक्त नागचन्द्रजी महाराज सिवा अन्य कोइ का भी नहीं आया। नागचन्द्रजी महाराज का लिखना हुवा कि मेरी धारना में

पंच महाव्रत समिती गुप्ति. इतना ही कथन आवश्यक में हुवा चाहिये. तथापि आप पराचीन भंडाराधिपति को पत्र दे २०० वर्ष की कोइ प्रत मिले तो वह प्रमानिक मानी जाय. आवश्यक के मूल श्लोक संख्या कुल १०० श्लोक ही है. इस सूचनानुसार प्राचीन भंडारों के अधिपत्ती को पत्र देने से फक्त श्री नानचन्द्रजी महाराज की कृपा से लीम्बडी भंडार से १ प्रत प्राप्त हुई. तदनुसार कुछ शुद्धि वृद्धि के साथ आवश्यक लिखा व छापा.

उक्त प्रकार ३२ ही शास्त्रों की लिखाइ का काम ३ वर्ष १५ दिन में समाप्त किया और छपाई का कार्य ५ वर्ष में समाप्त हुवा.

दृढता

देव ऋषिजी शास्त्रोद्धार कार्य सुरु हुवे बाद जो २ शास्त्र छपते गये वो २ पठन करते गये. यों उनने भी २७ शास्त्र का पठन किया. व्याख्यान कला भी बहुत अच्छी हुई क्षमादि गुण का अवलोकन कर बत्तीस ही शास्त्र को पूर्ण लेख हुवे बाद मैंने कहा कि अब स्वतः विहार करने समर्थ बने हो इस लिये एक दो साधु को साथ में ले यहां से दक्षिण की तरफ विहार करो. जैन मार्ग दीपाओ. पांचों एक स्थान रह कर

क्या करेंगे ? धर्म वृद्धि कीजिये. मेरा भी शास्त्रोद्धार कार्य समाप्त हुवे उधर ही आने का भाव है. परंतु मेरे पर मोह दिशा का तथा कभी अकेले विचरे नहीं जिस से ना हिम्मत बने. तब उन का मोह घटाने तथा हिम्मत बढाने वारकस अलवाल बुलारम कोठी हैद्राबाद यह यहां नजीक में रहे हुवे स्थानों में उन को विहार कराया. जिस २ स्थान गये वहाँ २ व्याख्यान कला से व आचारादि गुण से अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त की. तब अलवाल के श्रावक की दो वर्षों से अत्याग्रह से होती हुई विनंती का स्वीकार कर देव ऋषिजी और राज ऋषिजी ठाना दो का चतुर्मास अलवाल सदर बाजार में कराया. अषाढ शुक्ल द्वादशी को अलवाल गये और चतुर्दशी से ही तप प्रारंभ कीया. दो २ उपवास बढाते ३१ उपवास तक चडे, जिस में ३७ उपवास तक प्रातःको ज्ञाता सूत्र दो प्रहर को मदन चरित्र और रात्री को कथाओं, यों त्रिकाल सिंह की तरह गर्जारव करते व्याख्यान दिया. यह चमत्कार देख बहुत अन्य मतावलम्बीयों कितनेक राजवर्गीयों भी धर्म के बडे प्रेमालु बने. तप प्रभावना वगैरा धर्मोद्योत अच्छा हुवा. कालिका देवी का आगे दर साल अनेक पंचेंद्रिय जीवों का वध होता था वह भी सिरकारी जरिये से बंद हुवा. चतुर्मास पूर्ण हुवे यहां आये. आगे विहार करने का कहते ही बोले कि—

पाच शास्त्र बाकी रहे हैं वे आप की सेवा में रह पठन करने का भाव है. अब तो म आप से अलग विहार नहीं करूंगाजी, मैंने पूछा क्योंजी ? उनने कहा आप के पास रहने से मुझे ज्ञानादि गुणका आत्म समाधीका लाभ अच्छा प्राप्त होता है. अलग विचरने से व्याख्यान व वार्तालाप में विशेष काल योंही व्यतीत होता है वगैरा. मैंने कहा ठीक है, जो स्पर्शना होगा सो देखायगा. हैद्राबाद में इन्फ्लुएन्झ [श्लेष ज्वर] की बीमारी शुरु होने से लालाजी ज्वालाप्रसादजी तो बनारस गये. हैद्राबाद भी जाने का अवसर नहीं होने से सब यहां ही रहे. उत्तराध्ययनजी सूत्र का पठन चल रहा था कि— फल्गुन वद्य सप्तमी को राज ऋषिजी छोड हम चारों साधु को ज्वर आया, साता वेदनी- उदय से तथा आयु प्रबल से मैं और उदय ऋषिजी तो थोडे दिन में अच्छे हो गये. और दोनों साधु को बीमारी बढती ही गई. देव ऋषिजी से औषधोपचार बदल बहुत ही कहा परंतु कबूल किया नहीं. जिस दिन ज्वर आया उस ही दिन से तप शुरु किया, तीसरे उपवास में स्वप्न आया कि-कोई देवांगनाओं नाटक बता अपने यहां आने का आमंत्रण दे पीछी गई. प्रातःकाल वह मुझ से कहा. तब ही मुझे वैम तो आ गया. ९ उपवास हुवे तो भी ज्वर गया नहीं. तब अत्याग्रह से पारणा कराया. औषधोपचार का

कहते बोले कि मैं डाक्टरी दवाइ तो कदापि नहीं ग्रहण करूंगा. तब कुंजीलाल हकीम की औषध शुरु की परंतु ज्वर गया नहीं. अब पूछते तब यही उत्तर कि आनन्द है, फक्त अशक्ति विशेष है और कुच्छ खांसी है. चेत कृष्ण सप्तमी के तीसरे प्रहर को शीतल पसीना आने लगा, सब शरीर शीतल पड गया. परंतु हॉस्यारी अच्छी, तब मैं मणिलालजी खडे थे उन से बोला कि मैं तो ऐसे चिन्हवाले को संथारा करा देता हूं. देव ऋषिजी बोले गरम वस्त्र ओडा दो गरमी आजायगी, पांच बजे बोले कि पेट में गडबड है आज दस्त नहीं लगी, छ बजे बोले अब दस्त की हाजत है. तत्काल हम दो साधुने उन को उठाकर छोटे पाट पर बैठाये, पांच घंटा का अन्दाज हुवा परंतु दस्त लगी नहीं, पूछने से बोले कि लगती है. थोडी देर में दस्त का टाका पडते ही मेरे हाथ पर गरदन डाल दी. बोलने से कुछ उतर दिया नहीं, तत्काल उठाकर पाठ पर सुलाये. अठारा पाप चारों आहार के जावजीव के प्रत्याख्यान कराये, बाद दो हिचकी आते ही अनित्य शरीर का त्याग कर देव ऋषिजी स्वर्ग पधार गये,

महा- हानी

मोहन ऋषिजीने वैराग्यावस्था में भी अच्छा ज्ञानाभ्यास किया था और १७

…फिर वय में दीक्षा लिये बाद कुछ शास्त्र थोकडा का अभ्यास कराकर संस्कृताभ्यास की प्रबल इच्छा होने से प्रथम केसरीमलजी पंडित के पास लघुकौमदी रघुवंश काव्य का अभ्यास किया. फिर पंजाब से गजानन्द शास्त्री को बोलाकर सिद्धान्त कौमदी माघ में तर्क न्याय काव्य आदि का अभ्यास करते विमार होने से पंडित चलेगये. तब अंग्रेजी पढने की इच्छा होते अंग्रेजी मास्तर रख अभ्यास चालु कराया. दो महिने में अंग्रेजी-की तीसरी पुस्तक पढने लगे, कुछ बोलने लिखने भी लगे. इन के—१ दशवैकालिक, २ उत्तराध्ययन, और सुयगडांग के ८ अध्ययन, यह सूत्र. १ नय प्रमाण, २ चौवीस ठाणा, ३ लघुदंडक, ४ पद्वी द्वार, ५ नवद्वार, ६ गतागत, ७ अठाणवे बोल की अल्पाबहुत्व, ८ कर्मप्रकृति, ९ ज्ञान लब्धि, १० पच्चीस बोल का, ११ सम्यक्त्व के ६७ बोल, और १२ बडी नवतत्व, यह १२ थोकडे, और १ अमरकोश, २ सिन्दूर प्रकर, ३ बोधमाला, ४ मोक्ष शास्त्र, ५ द्रव्य संग्रह, ६ उपदेश सप्तिका, ७ प्रश्नोत्तर रत्नमाला, ८ गौतम पृच्छा, ९ अन्ययोग व्यवछेदिका, १० अयोगव्यवछेदिका, १२ आत्म निन्दाष्टक, १३ अध्यात्मष्टक, १४ भक्तामर, १५ कल्याण मंदिर, यह संस्कृत ग्रन्थ, प्राकृतमार्ग उपदेशिका, प्राकृत ढुंढिका दो पाद, यह प्राकृत व्याकरण. इन सिवाय सैंकडों

छंद स्तवन सवैया कथाओं इत्यादि थोडेही कालमें बहुत सा ज्ञान कंठाग्र किया था. इनकी प्रबल्य बुद्धि से प्रसन्न हो यादगीरी वाले नवलमलजी सूर्यमलजी थोकाने पढाइका सब खरच बहुत उदार परिणाम से दिया था. देवऋषिजी के साथ यह भी बिमार हुवे. इनने भी रोग की सरुआत में दो उपवास किये. फिर प्रख्यात रामचन्द्र डाक्टर की दवाइ सुरु की. पांच रुपे की फी लेने वाला बिना फी दिन में दो वक्त तपास कर अच्छी २ दवाइयों देता तो भी रोगोद्धार हुआ नहीं. चेत कृष्ण पंचमी को केकसरु डाक्टर को बताया उसने असाध्यरोग बताया. उस के गये बाद मैंने कहा मुनि ! अब तुमारे परेज कुछ नहीं है, इच्छा हो सो कहो मैं लादेता हुं मुनि बोले मेरी कुछ भी इच्छा नहीं है. फिर मैं बोला—तब होशियार हो आलोचना निन्दना कर निशल्य होजावो ! उस वक्त बैठे होकर सब दोष प्रकाश कर प्रायःश्चित ले शुद्ध बने दश दिन तक और जो काल खूट तो जावज्जीव आठ द्रव्य उपरांत सोगन किये. चेत कृष्ण सप्तमी को सन्ध्या को ६ बजे देवऋषिजी स्वर्ग गये बाद मोहनऋषिजी को प्रतिक्रमण सुनाकर छट्टे आवश्यक में कल का नवकारसी दिन आवे वहां तक के प्रत्याख्यान कराने लगा, तब मोहन मुनि बोला कि—जावजीव चारो आहार ' इतना सुन मैंने दोनो साधु से कहा कि अब इन के मुह से इन के

संथारा होगया. फिर ' अ सी आ उ सा यः नमः' यह शब्दोचार करते जबान अटकने लगी, ज्वर शक्ति बडगइ और रात्रि के चार बजे समाधी भाव से अनित्य शरीर को त्याग कर स्वर्ग पधार गये !

इस प्रकार अनेक उत्तमोत्तम गुण सम्पन्न तपस्वी ज्ञानी गुणी कि जिन से आगे जैनोदय होने की बडी आशाथी उन का अचिंत्य अकस्मात् वियोग होनेसे चित्त को बडा ही आवात पहोंचा परन्तु होनहार अवश्य हुवा ही रहता है नाहक आर्तध्यान से क्यों कर्म वन्ध करना वगैरा विचार से चित्त वृति का निग्रह कर कार्य चलाया. उक्त बीमारी का कार्यालय के कर्म चारीयों पर भी असर हुआ. जिस सें भी काम में बहुत विघन पहुंचा, माणिलाल भाई को भी वायु परिवृत करने देश जाना हुआ. यहां कुछ शांति होते लालाजी ज्वालाप्रसादजी बनारस से यहां (हैद्राबाद) आये, वे भी आठ दिनों वाद इन्फ्लुजम के ज्वर से पीडित हुअे, तकलीफ बहुत पाये परन्तु देव गुरु धर्म पसाय रोग सोग का नाश हुआ, शान्ति का प्रकाश हुआ, मणिलाल भाइ भी देस से आगये अच्छी तरह से काम चलने लगा.

अषाढ वदी-१२ को प्रातःकाल दिशा जंगल जाने के लिये मैं पानी लीने नगराजजी के घर को गया वहां कितनीक बाइयो को घबराती देख पूछने से मालुम हुआ किये घर में सर्प है. रखे कोइ अनार्य मार डाले इस लिये मैंने उन से चिमटा मांगा उसे पकडने लगा एक वक्त चिमटे में से वह छिट गया दूसरी वक्त पकडते ही मेरे अंगुष्ट पर दंश किया. तो भी तीसरी वक्त उस को पकडने का पर्यत्न कीया परन्तु मकडा गया नहीं. तब बाइ के पास कपडा मांग कर उस में उस सांप को पकड कर खेंचा, उस की पूंछ बिल में फसी हुइ थी वह निकल गइ उसे मैने स्थान पीछे छोड दिया और बाहिर जाते अंगुष्ट पर रक्त बिन्दु देखने से संशय हुआ. विचार किया कि जो जहर की लेहर आयगी तो संथारा कर दूंगा, जंगल जाकर पीछा आया व्याख्यान सुनाया परन्तु जहर की बिलकूल ही असर निजर नहीं हुई. तब निश्चिन्त बना मैंने तो किसी आगे यह कथन किया नहीं परंतु दो प्रहर के बाइयो के मुह से यह कथन सुन श्रावकादि घबराये और दोड २ स्थानक में आये मुझे आनन्द में देख आश्चर्य चकित हो धर्म प्रताप की महिमा करने लगे. तपस्वी उदयऋषिजीने अषाढ वदी सप्तमी से ही मास खमन का तप धारन किया था. जिस का पर प्रथम श्रावण वद ८ को आया कि

१० दिन पहिले और पाच दिन पीछे सरकेट बजार के तथा रिजमेंट बजार के श्रावकों की तरफसे गरीबों को नुक्ती दाने, चने मुरमुरे दिये, तथा हिंदी में जाहिरात छपवाकर भी बांटी गई. पूर के दिन सभागण का समावेश स्थानक में नहीं होता देख पब्लीक रोड पर मण्डप बंधवाया. व्याख्यान में ६००-७०० श्रोतागण उपस्थित जैन व जैनेतर यों दोनों थे. तप महात्म्य और विद्या उन्नती से सब उन्नति होती है इस विषय पर व्याख्यान हुवे बाद तपस्वीजीने मास खमन तपके प्रत्याख्यान धारन किये. उसही वक्त शीर्ष १९ वर्ष की वय, चार खंध, बारा व्रत की धारक, सचित्त आहार की त्यागिनी एक ही वर्ष में आठ अठाइयों और मास खमन का तप करनेवाली सुगालचंदजी मकाना की विधवा 'सायर-बाई' ने मास खमन तप के प्रत्याख्यान धारन किये. और भी १० उपवास अठाइयों वगैरा प्रत्याख्यान धर्मोद्योत अच्छा हुवा. यह महाराज श्री का अन्तिम चौमासा है, करना हो सो करलो इस उत्साह से दया तपस्या का नवरगीया, २५ अठाइयों वगैरा धर्म तप बहुत ही अच्छा हुवा.

पुनः प्लेग की सुरुआत हुई लोगों सब ग्राम के बाहिर कोश दो कोश पर जाकर

रहे हम को भी बाहिरे चलने क लिये बहुत विनंती की परंतु रखे. बाहिर जाने मे शास्त्रोद्धार कार्य अटक जाय, आगे विहार में हरकत होजाय इत्यादि विचार से बाहिर नहीं गये. आहार पानी बाहिर से लाकर करने लगे और पूर्व प्रकार ही काम चलने लगा. शास्त्र छपाइ का काम तो समाप्त होने आया, अब टाइटल पेज (मुख पृष्ट) को सुशोभित मनहर बनाने के लिये बारा महिने से ही प्रयत्न चालू किया था. केइ नमूने बनाये जिस में से यह नमूना पसंद कर टाइप से इस प्रकार जमावट होती नहीं देख लाल और हरे रग का ब्लाक बनवाया. और आसमानी रंग का वारम्वार पल्टा होने के कारन काम टाइप से लिया. दूसरे के मशीन में टाइटल पेज का काम मन लायक नहीं होता देख मणिलाल भाई रु० ८०० में नांदेड से मशीन लाये, दोनों लालाजी के फोटू का भी ब्लाक बनवाया. जिस से टाइटल पेज का और फोटू छपने का काम भी मन मुजब हुआ अब सब काम हुवे बाद सब शास्त्र तैयार होगये तब कटिंग का काम अन्य के पास कराने के लिये बहुत ही कोशीस की परंतु मुद्दत में काम कर देने की कोई भी हिम्मत नहीं कर सका. तब मणिलालजीने रु० ३०० में कटिंग मशीन खरीद कर यह भी काम कार्यालय में ही कराया. यों सब काम कार्यालय में ही हुवे,

उक्त प्रकार काम के सब इच्छित योग्य साहीत्यों योग वक्त पर यथा उचित मानो देवशक्ति से आकर्षाये हुवे ही आये हों तैसे मिलते रहने से सब काम नियमित और यथा इच्छित करने सबल बने.

राजा बहादुर लालाजी सुखदेवसहायजीका और धर्मधूरंधर लालाजी ज्वालाप्रसादजी का यह दोनों फोटो सब शास्त्रों व मींमासा के साथ लगाने अत्युत्तम दलदार चलकाटदार आर्ट पेपर खास मदरास से मंगवा कर ३२००० हजार फोटू छपवाये, जिस के बाद मुख्याधिकारी, उपकारीमहात्मा, आभारीमहात्मा, हिन्दी भाषानुवादक, सहायक मुनि मंडल और भी सहाय दाता, शास्त्र प्रकाशक, आश्रय दाता, इन के उपकार के कोष्टक दो रंग में छपवा, प्रस्तावना अनुक्रमणिका वगैरा सब काम दीपमालिका तक हुवे बाद ज्ञान पंचमी को ही शास्त्रोद्धार कार्य सुरु हुवा था वह दिन नजीक आने से ज्ञान पंचमी को ही शास्त्रोद्धार सभा कायम कर पॅंफलेट छपवाया जिस की नकल.

शास्त्रोद्धार कार्यालय का जलसा

(धर्मस्य त्वरिता गतिः–धर्मकाम जल्दी करो!)

☞ पधारीये । पधारीये !! जरूर पधारकर सोभा वढाईये !!!

सं० १९७७ के कार्तिक सुदी ५ सोमवार, ता० १५–११–१९२० बारा बजे से सीकेन्द्राबाद स्टेशन रोड पर जैन शास्त्रोद्धार छापाखाने के मकान में शास्त्रोद्धार कार्य समाप्ति की सभा होगी.

आज पांच वर्ष से बालब्रह्मचारी पंडित मुनि श्री अमोलक ऋषिजी महाराज ने जैन धर्म के ३२ ही शास्त्रों जो अर्धमागधी भाषा में हैं उन का हिन्दी भाषानुवाद किस परिश्रम से किया है, तथा दानवीर राजाबहादुर लालाजी सुखदेव सहायजी ज्वालाप्रसादजी जौहरी ने रु० १२००० का सद्व्यय कर सब शास्त्रों किस प्रकार छपाये हैं, यह बत्तीस

शास्त्रो के भंडार किन २ को और किस प्रकार अमूल्य दिये जावेंगे. वह सब इस सभा में बताया जावेगा. पंचमो गाम की अर्जीयां आइ है सो भी सुनाइ जावेगी. शास्त्रोद्धार प्रेस के कर्मचारीयों को लालाजी की तरफ से इनाम दिया जावेगा.

विशेष में महाराज श्री का व्याख्यान, सभागणों के भाषण, व रसिक रागों में गायन श्रवण करने का भी महा लाभ प्राप्त होवेगा ऐसा मौका फिर कभी मिलने का नहीं है, इस लिये कार्तिक सुदी ५ सोमवार दो पहर दिन के बारा बजे जैन शास्त्रोद्धार छापाखाने में जरूर पधारीये !

विहार

पूज्यपाद बालब्रह्मचारी पंडित मुनि श्री श्री १००८ श्री अमोलख ऋषिजी, वैय्यावच्ची श्री राजऋषिजी और तपस्वी श्री उदय ऋषिजी ठा० ३ मृगशर वदी १ वार शुक्र को फजर ७॥ बजे यहां से विहार कर के हैद्राबाद पधारेंगे, और वहां मात्र चार दिन ही रहकर मृगशर वदी ५ मंगलवार

को निहार कर वादी होते हुए यहांगिरी पधारने के भाव है.

संघ का सेवक

निहालचन्द गंभीरमल

यह जाहिरात स्थानक का दरोगा लछमैय्या और पंचायती सेवक द्वारा हैदराबाद, कोठी, घारकस, अलवाल, बुलारम, कोरों और सिकंदराबाद के सब बजारों में बांट दी.

ज्ञान पंचमी के दिन छापखाने के मकान का नीचे का कमरा जिस में छपे हुवे शास्त्रों रखे थे उसे खाली कर जाजम सतरंजी लालाजी के फोटो तसबीरों केलेंडर वगैरा से सुशोभित किया गया था. सन्मुख ऊंचे तख्त के ऊपर हम तीनों साधु बैठे. साडी बारा बजे के अंदाज में श्रावक श्राविकाओं के झुंड मोटर, बग्गी, तांगे, झटके में व पैदल आने लगे. दो सो तीन सो बाइयों भाइयों से कमरा चिकार भरा गया. सर्व लोगों आनन्द हुलसित बने.

प्रथम मैने व्याख्यान सुरु किया:—

श्लोक—मोक्षमार्गस्य नेतारं भेत्तारं कर्मभूभृताम् । ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां, वन्दे तद्गुणलब्धये ॥

प्रथम इष्टितार्थ की सिद्धी के लिये मोक्षमार्ग के नेता, कर्मों के विदारनेवाले और विश्व तत्त्व के जानने वाले जिनेन्द्र भगवान को नमस्कार कर आज ज्ञान पंचमी और ज्ञान का महात्म्य दर्शानेवाली शास्त्रोद्धार की अन्तिम सभा होने से कुछ ज्ञान की महिमा कहता हूं.

श्लोक—आहार निद्रा भय मैथुनानि, तुल्यानि सार्धं पशुभिर्नराणाम ।
ज्ञानं विशेषो खलु मानुषाणाम्, ज्ञानेन हीना पशुभिः समाना ॥
चाणक्यनीति ॥

जिस में गमन करे उसे गति कहते हैं, ऐसी चार गति हैं तद्यथा—१ नरक, २ तिर्यंच, ३ मनुष्य और ४ देव, इस में से नरक अधो लोक में और स्वर्ग ऊर्ध्व लोक में हैं. इस मध्यलोक में मनुष्य और तिर्यंच दो हैं जिस में मनुष्य उत्तम और तिर्यंच अधम गिने जाते हैं. इस का जो कारण है सो उक्त चाणक्य नीति के श्लोक में

प्रदर्शित कर दिया गया है. अर्थात् आहार करना, निद्रा लेना भय भीत होना और [illegible] (मैथुन) का सेवन करना यह मनुष्य और तिर्यंच के समान हैं, [illegible] में ज्ञान का ही है. तिर्यंच-पशु में प्रायः वाचा शक्ति की न्यूनता होने से वे ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकते हैं फक्त अपने शरीर रक्षणार्थ-उदर पोषणादि के लिये ही परिश्रम उठाने जितनी सज्ञा उन में है और मनुष्य वाचा शक्ति सम्पन्न होने से ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं. जिस द्वारा इस लोक में सुखोपजीवी बन परलोक का भी सुख साधन कर सकते हैं. इस लिये मनुष्यत्व में ज्ञान का ही विशेपत्व है न कि अवयवोंका. जो कर्ण चक्षु हस्त पादादि अवयव के धारक ही मनुष्य कहा जाता हो तो मनुष्य सामान अवयव मर्कट-बंदर के भी होते हैं विशेष में पूंछ उसे होती है तो क्या वह महा मनुष्य कहा जायगा ? नहीं कदापि नहीं. मनुष्य समान इन्द्रियों का धारक हो कर भी वह पशु कहलाता है इस का मुख्य कारण अज्ञानता का ही है. इस लिये भर्तृहरीने भी कहा है कि—' विद्यानाम नरस्य रूपमधिकं ' अर्थात् विद्याही मनुष्य के रूप का विशेष चिन्ह है. और ' विद्या विहीनः पशुः' अर्थात् विद्या रहित मनुष्य पशु तुल्य है ?

उक्त कथन से निश्चय हुआ होगा कि—ज्ञान या विद्या का धारक होना यही मनुष्यत्व का मुख्य कर्तव्य है. ज्ञान की धातु 'ज्ञ' जिस का अर्थ जानना और विद्या कि धातु विद् जिस का अर्थ प्रकाशना होता है. अर्थात् जिस के हृदय में ज्ञान पने रुप प्रकाश हुआ है उसे ही ज्ञानवान या विद्यावान कहा जाता है. ज्ञान दो प्रकार के कहे है. तद्यथा—१ सम्यग् ज्ञान और २ मिथ्या ज्ञान, इस में मिथ्या ज्ञान तो आत्मा के अनादि सानिध्य है परन्तु सम्यग् ज्ञान की प्राप्ति होना दुर्लभ है. केवल ज्ञान केवल दर्शन के धारक अर्हन्त जिनेश्वर प्रणित जो शास्त्रों हैं उन से प्राप्त होता ज्ञान ही सम्यग् ज्ञान कहाता है.

इस पंचम काल में तीर्थंकर केवलज्ञानी, मनःपर्यव, अवधि ज्ञानी व पूर्व धारीयों रूप सूर्य का अभाव होने से धोर अन्धकार छा गया है जिस में दीपक समान प्रकाश के करने वाले मात्र तीर्थंकर प्रणित शास्त्र ही रहे हैं.

श्री महावीर स्वामीजी के गौतमादि गणधरो ने १४००० शास्त्रों की रचना की

थी. और उस वक्त बुद्धि की प्रबलता के कारण से वे सब साधुओं के कंठस्थ थे. पश्चात काल के प्रभाव बुद्धि की मंदता होने से शास्त्र विस्मरण होने लगा तब वीरनिर्वा-णत् ९६७ वर्ष बाद वल्लभी नगरीमें जैनाचार्योंने महासभा कर शास्त्रोंको पुस्तकारुढ किये. १२ वर्ष में शिर्फ ७२ शास्त्रों का लेख हुआ, जिन के नाम नन्दी सूत्र में उपस्थित हैं. नन्तर महादुष्काल प्राप्त होने से शास्त्रों भंडार में स्थापन किये गये. वीर निर्वाण के २००० वर्ष बाद अहमदाबाद के भंडार के शास्त्र निकाले जिस में से शीर्फ ३२ अखण्ड निकले बाकी के कितनेक पूरे और कितने अर्धदग्ध दीमक (रुणी) जन्तु के उपभोगी बनगये. उन बत्तीस का पुनरोद्धार अर्ध मागधी भाषा के अच्छे ज्ञाता और लेख कार्य में प्रवीन श्री लोंकाजी श्रावक के हाथ से हुआ.

यहां तक शास्त्रों शीर्फ मूल मात्र लिखे हुवे थे आगे मागधी भाषा का लोप हो गया तब देशी भाषा में उस का टबार्थ पार्श्वचन्द्र सूरीने तथा धर्मसिंह अनगारने बना पुनरोद्धार किया. वह टबार्थ अपभ्रंश गुजराती भाषा में लिखा गया. नन्तर जिस का उतारा कितनेक काल तक विद्वान आचार्यों ने किया फिर वे प्रमादी बन अपने शिष्यों

पास कराने लगे शिष्यों का प्रमाद देखा में शास्त्री लीपि के ज्ञाता ब्राह्मणादि लहियो को, नोकर रख उन के पास कराने लगे. अज्ञ लोगों फक्त उदर पूर्णार्थ काम करते हैं उनोने कापि टू कापि उतारते हुवे शास्त्रों में बडा ही घोटाला कर दिया है. इस वक्त भी शास्त्रोद्धार की पूर्ण आवश्यकता जान और हैद्राबाद के ज्ञान वृद्धिखाते से हजारों अमूल्य पुस्तकों प्रसिद्ध होती देख बहुत से मुनि महात्माओं की तरफ से हिन्दी भाषानुवाद युक्त शास्त्रों प्रसिद्धी में रखने की सूचना हुइ, परतु शास्त्रों प्रसिद्धी रखने का काम महा जोखम दारी का जान हिम्मत हुई नहीं. तपस्वीराज श्री केवल ऋषिजी महाराज देवलोक पधारे बाद जो मुक्ति सोपान पुस्तक छपाइ थी उस का काम दीपमालिका तक पूर्ण हो जाय इस विचारने शास्त्रोद्धार की कल्पना उत्पन्न की, बत्तीस ही शास्त्रों के कितने फारम होंगे इस का मनोमय हिसाब लगाते १०००-१२०० फारम का अंदाज आया, जिस का खरच १५००० का अंदाज हुवा. यह कथन अनायास लालाजी के आगे कहा. और जब सिकंद्राबाद का चौमासा पूर्ण होते हमारे विहार का अवसर नजीक आया तब मानो हमार को रोकने के लिये ही लाला सुखदेवसहायजीने बारा महिने की बात का स्मरण करा कहा कि-' जो आप के हाथ से सब शास्त्रों का हिंदी भाषानुवाद लिख

देने की कृपा करो तो उस को प्रसिद्धी में रखने का रु० १५००० का खरच मे प्रसिद्ध कर उसका लाभ लेनेकी मेरी इच्छा है' लालाजीके इस वचनने जादू की माफक मेरे हृदय में असर किया. और गुरुवर्य श्री रत्न ऋषिजी महाराज की आज्ञा व परमा-शिर्वाद से यह काम किस प्रकार आज समाप्त हुवा है जिस का अहवाल मणिलाल भाई दर्शाते हैं. सो दत्त चित्त से श्रवण कीजिये ? इस के बाद मणिलालजी खडे हो सब साधुओं को नमस्कार कर सब सभा को प्राणिपत कर कहने लगे कि—

अर्हन्तो भगवन्त इन्द्र महिता सिद्धाश्च सिद्धो स्थिता। आचार्या जिनशासनो न्नतिकराः पूज्या उपाध्यायका॥
श्रीःसिद्धान्त सु पाठका मुनिवरा रत्न त्रयः राधका। पंचैते परमेष्टिनाम प्रतिदिनं कुर्वन्तु वो मंगलं ॥

अहो सभासदो आज पांच वर्ष के पहिले आज ही के दिन अर्थात् कार्तिक सुदी पंचमी-ज्ञान पंचमी के दिन आप लोगों की सभा के समक्ष महाराज श्री के कर कमल से और ललाजी की परमउदारता से कार्य क्षेत्र में शास्त्रोद्धार का बीजारोप किया गया था उस का परिश्रम रूप जल सींचन से हरा भरा फला फूला वृक्ष बन जो फल लगे हैं

आपको बताते हुवे आज मुझे बडा ही हर्षानन्द उत्पन्न होता है, यह महा प्रताप बाल ब्रह्मचारी पंडित मुनिराज श्री अमोलक ऋषिजी महाराज का और जैन स्थम्भ दान वीर राजाबहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी का ही है.

सवैया—आनन्द आज अति मन हुलसत । ऐसी शास्त्रोद्धार सभाये ॥
पाच वर्ष परिश्रम का फल । आज सज्जनो सन्मुख आये ॥
शास्त्र बत्तीसो रखे प्रसिद्ध ये । इच्छित कार्य सिद्ध भयाये ॥
प्रताप सब मुनिराज लालाजीका । हर्षित मणि दर्शाय रहाये ॥

जब से शास्त्रोद्धार कार्य सुरु किया तब से ही कार्य निर्विघ्नता से और शीघ्रता से समाप्ति करने के आशय से सदैव एक भक्त भोजन नियम धारन किया उसे आज तक पाल रहे हैं. प्रातः के छ बजे से श्याम के छ बजे तक शरीर कारण और संयम कार्य का समय छोड बाकी सब समय लेखन पठन मिलान मनन वगैरा शास्त्रों को शुद्ध सरल और अच्छे बनाने में ही लगाया. जिस वक्त प्रथम प्लेग की बिमारी चली उस वक्त महाराज श्री के मन उपरान्त श्रावकों के अत्याग्रह से लालाजी का दूसरा

श्यामसुंदर नामक बाग में रहे. वहा पाचों साधुओं मलेरीया बुखार से पीडित हुवे तब सब साधुओं की संभाल, दूर से आहार औषध का संयोग मिलाना वगैरा कार्य करते २ जब २ फुरसत मिलती तब २ भगवती सूत्र का भाषान्तर करने में ही लग जाते. यों इस पुस्तक के दूसरे विभाग में लिखित कितनेक बनावो का दिग्दर्शन कराया. और महाराज श्री के गुणानुवाद का सवैया सुनाया;

सवैया-बा ह्याभ्यन्तरशुद्ध । ल खीजिनमगबुद्ध ॥
ब्र तपंच महापाल । ह्म दर्दगुनी है ॥
चा रित्र ने ज्ञानवंत । री तिनीति प्रकाशंत॥
श्री शास्त्रोद्धार काम । अ त्युत्तम धुनी है ॥
मो क्षपंथ दर्शावंत । ल खीजन हर्षावंत ॥
क हलो वखानुगुन । ऋ जुतादि पूनी है॥
पि तामित हित चित्त । जी वित सफलाक्षत॥
बाल ब्रह्मचारी ऋषि अमोलक मुनि है ॥ १ ॥

फिर कहा कि—इस शास्त्रोद्धार कार्य कराने के ऊपर लालाजी सुखदेवसहायजी का कितना जबर प्रेम था कि वह सम्पूर्णतया दर्शाने मैं असमर्थ हूं, लाला साहेब को देखनेवाले खुदही जानते हैं. फिर इस ही मीमांसा के तीसरे प्रकरण में छपे हुवे लालाजी के गुणों का दिग्दर्शन कराया था. लालाजी के गुणानुवाद का भी सवैया सुनाया.

सवैया-रा चे जिन धर्ममांही । जा चे चिंतामणी साही ॥
ब हुत उमंग धर । हा मीं सब पूरिया ॥
दू रित हरण कर्म । र च्यो शास्त्रोद्धारा श्रम ॥
ला खों द्रव्य खर्च कर। ला भ लिया सूरिया ॥
सु खी किये बहु प्राणी। ख री भक्ति भाव ठाणी॥
दे वगुरु धर्म तणी । व रभक्ति धूरिया ॥
स हायक ज्ञायक गुणी। हा जर सुखदेवसहाय ॥
य द्यपि स्वरगवास । जी वन हजूरीया ॥

फिर कहा कि-इस वक्त जो उक्त लालाजी साहेब हाजर होते तो उन के और

अपने दिल को अपूर्व आनन्द का अवसर प्राप्त होता परंतु इस बात का कोई उपाय नही है, जिस प्रकार बडे लालाजी साहेब गुणवन्त धर्म प्रेमी दानवीरादि गुन के धारक थे उस ही प्रकार यह छोटे लाला साहेब भी गुणवन्त दानवीरादि गुण कर युक्त हैं. इन लालाजी साहेब के उदारतादि गुणों ज्यों २ प्रकाश में आते जाते हैं त्यों २ हमे बडाही हर्षानन्द होता है कि-बडे लाला साहेब की तरह ये ही जैन स्थम्भ दानादि गुण कर अखण्ड कीर्ती प्राप्त करेंगे. इस वक्त भी लालाजी ज्वालाप्रसादजी के गुणानुवाद का सवैया सुनाया.

सवैया-ला यक सर्व हों शुभ गुणोंपम । ला भ लिया धर्म ज्ञान उजमाला ॥
ज्वा लित तेज प्रताप सदा रहो। ला खों हो लाभ लहो सुविशाला ॥
प्र गट पुण्य प्रताप विराजत । शा स्त्रोद्धार किया ज्ञान उजाला ॥
द क्ष सुलक्ष समस्त हो शोभे । जी वनधन्य ज्वालाप्रसादजी लाला॥

छोटे लालाजी इतने श्रीमान धीमान् गुणवान होकर भी किंचित मात्र अभिमानी

नहीं है. यद्यपि मैं इन का नोकार हूं तथापि आज तक मेरे साथ में सहोदर भ्रात से भी अधिक प्रेम भाव से वर्ताव कर रहैं. रु० १५०० का प्रेस और रु० ६०० का सुवर्ण हार व सुवर्ण पदक मुझे इनाम में दिया है. इस सिवाय अन्य कर्मचारीयों को भी रु० ५०० के सुवर्ण के दागीने व चांदी के चांद इनाम में दिये हैं. शीर्फ ५ वर्ष के काम में रु० २६०० का इनाम नोकरों के लिये देकर छोटे लालाजी साहेबने हमारे वडे लालाजी का वियोग का दुःख विस्मरण कर दिया. हमारे भाव तो मानो वडे लाला साहेव ही यहां आकर विराजमान हो गये हैं.

सभा गणों ! मैंने इस प्रकार लालाजी साहेव की जो प्रशंसा की है सो करना उचित ही है. क्यों कि मैं इन का नोकर हूं और इन के ही प्रसाद से शास्त्र ज्ञान की प्राप्ति का तथा शास्त्र उद्धार की सेवा का महा लाभ प्राप्त कर सका हूं. तैसे ही व्यवहार में भी प्रेस का व द्रव्य का साधन जिंदगी के सुख के लिये अच्छा प्राप्त कर सका हूं, तथापि मैं कहता हूं कि-मैंने जो जो लालाजी के गुणगान किये हैं वे विलकुल ही खुशामदियेपने से अत्युक्ति लगाकर नहीं किये हैं. जैसे गुन वडे लालाजी में थे और छोटे लालाजी में विद्यमान देखे जाते हैं वैसे ही प्रगट किये हैं. मैं निश्चयात्मक हो कहता हूं कि—

महाराज श्री अमोलक ऋषिजी जैसे, लालाजी जैसे दृढ प्रतिज्ञी अचल वचनी हिम्मतबहादुर साहसिकपना वगैरह गुन के धारक साधु और श्रावक मेरी तीन वर्ष की उपदेशक तरीके की मुसाफरी में कोई भी देखने में व सुनने में भी नहीं आया. आप इतने सभागणों में से भी कोई ऐसा एक हाथ से शीर्फ तीन वर्ष में बत्तीस शास्त्रों का लिखने वाला साधु और बत्तीस ही शास्त्रों को प्रसिद्धी में रख १००० प्रतों का अमूल्य दान देनेवाला श्रावक रत्न इन सिवाय किसी को बता सकोगे क्या? 'नहीं' भर्तृहरीने कहा है कि—

श्लोक—निन्दंतु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवंतु। लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्॥
अद्यैव मरण मस्तु युगांतरे वा। न्यायात्पथः प्रविचलंतिपदं न धीराः॥

अर्थ—कोइ निंदा करो या स्तुति करो, लक्ष्मी प्राप्त हो या आज ही चली जावो, मृत्यु युगान्तर में आवो या आज ही आ जावो परंतु सत्पुरुषों नीति पथ उल्लंघन कर एक पद मात्र नहीं रखते हैं. यह गुनों इन महा पुरुषों प्रत्यक्ष दृष्टीगत होते हैं!

उक्त प्रकार कार्याधिकारीयों के गुण दर्शाये बाद अब मैं अपना कार्य बताता हूं. (शास्त्रों के ढगले में से आचारांगादि शास्त्र को उठाकर बताते गये और फोरमैन व्यंकटस्वामी उन शास्त्रों को 'अमूल्य लाला जैन शास्त्र भंडार' की संदूक में जमाते

गये) यह प्रथम आचारांग शास्त्र है, देखिये ! इस का टाइटल तीन रंग का छपा हुवा इस प्रकार मनोहर बनाया गया है. फिर अंदर रहे दोनों लालाजी के फोटो बताये, फिर चारों पेजों जो दो रंग में छपे हैं वे सम्पूर्ण सुनाये, फिर आचारांग की प्रस्तावना सम्पूर्ण सुनायी और फिर आचारांग के एक दो सूत्र शब्दार्थ भावार्थ सुनाकर पूछा कि- भावार्थ में आप सब समझ गये ? लोगों बोले-हां, तब मणिलालजी बोले ऐसा ही सब शास्त्रों का अर्थ बालबोध पढे हुवे अल्पज्ञों के भी सरलता से समझ में आजावे तैसा बनाया गया है. इस में साधु के आचार गोचार का कथन है और अन्त में श्री महावीर स्वामी का जीवन चरित्र है, यह दूसरा सुयगडांग सूत्र है इस में मत मतान्तरों का निराकरण किया गया है, यह तीसरा स्थानांग सूत्र है. इस में एकेक बोल से दश दश बोल तक का कथन है. इस की चौभंगीयों बहुत ही खूबीदार है. यह चौथा समवायांग सूत्र है इस में एक बोल से क्रोड क्रोड बोलो का कथन है. यह पांचवा सब से बडा ज्ञान का सागर भगवतीजी सूत्र है, इस में गौतम स्वामी के ३६००० प्रश्नो वगैरे है. इस में गंगेया अनगार आदि के भांगे बडे गहन हैं वे सरलता से समज में आजावे तथा मन चाहे भांगे बना सके ऐसा एक यंत्र भी दिया गया है. यह छट्ठा ज्ञाताधर्मकथांग सूत्र है, इस

के १९ अध्ययन में मेघकुमारादि का बहुत छटादार नीति मय कथाओं है. यह आठवा अंतगड सूत्र है, इस में कर्मअन्त करता का कथन है. यह नववा अनुत्तरोववाइ सूत्र है, इस में अनुत्तर विमान गामी पुरुषों का कथन है. यह दशवा प्रश्नव्याकरण सूत्र है यद्यापि इस का अर्थ बहुत सरल है तथापि ऐसी विषम शैली से लिखा गया है कि उक्त शास्त्रों से इस में मगज मारी बहुत करना पडा, इस में पांच आश्रव पांच संवर का कथन है, यह एकादश विपाक सूत्र है, इस में १० जीवों ने दुःख २ से और १० जीव सुख २ से मुक्ति प्राप्त की जिनका कथन है. यह इग्यारा अंग कहलाते हैं. यह बारवा उववाइ सूत्र है, इस में समवसरण का तपश्चर्या काव देवगति में क्रम से विशेष आयुष्य प्राप्त करने वाले जीवोंका और मुक्तिका कथन है. यह तेरवा राजप्रश्नीय सूत्र है. इसमें नास्तिक मति परदेशी राजा और केशीकुमार श्रमणकी चर्चा बहुत ही छटादार है. यह चौदवा जीवाभिगम सूत्र है, इस में जीवाजीव का स्वरूप दर्शाया है. यह पन्दरवा पन्नवणा सूत्र है सो थोकडों का सागर ही है. यह सोलवा जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति सूत्र है. इस में भूगोल विद्या का बहुत खुबी के साथ वर्णन किया है. यह सतरवा चन्द्र प्रज्ञप्ति सूत्र है इस को बडा ही चमत्कारिक जान बडे २ महात्माओं भी इस का पठन करने अचकाते हैं. परंतु महाराज

श्रीने अपने ब्रह्मचर्य के प्रताप से निर्विघ्न पने इसे लिखा और छपाया. इस में ज्योतिष विद्या का बहुत विस्तार से कथन किया है. यह अठारवा सूर्य प्रज्ञप्ति सूत्र है. चन्द्रप्रज्ञप्ति और सूर्य प्रज्ञप्ति में शर्फि नाम मात्र फरक है, दोनों का फक्त प्रथम की मंडणी सिवाय सब समास एक ही है. यह उन्नीसवे से तेवीसवे तक निरियावलीका कप्पिया पुप्फीया पुप्फचुलिका और वन्हिदशा इन पांचों सूत्र का एक ही पुथ है. नरक में व देवलोक में गमन करने वाले जीवों का कथन है. यह बारा उपांग कहलाते हैं. यह चौवीसवे से सत्तावीसवे तक अलग २ चारों ही छेद सूत्र हैं. इनमें साधु के लिये हित शिक्षा व आचार में भंग लगजाव तो उस का प्रायश्चित है. इन छेदों को प्रथम छपाने का विचार नहीं था परंतु डो. जीवराज भाइ की तरफ से बृहदकल्प प्रसिद्धी में आया देख चारों ही छेद प्रसिद्ध किये हैं, यह अठावीसवा दशवैकालिक सूत्र है. इस में साधु के आचार का कथन है इसे कितनेक स्वयंभवाचार्य कृत बताते हैं परंतु यह कथन अयोग्य है, सब शास्त्रों तीर्थंकर प्रणित और गणधरों रचित ही हैं. यह गुन्नतीसवा उत्तराध्ययन सूत्र है. यह भगवंत महावीर स्वामीजी ने निर्वाण समय सुनाया है. प्रथम उत्तराध्ययनजी तीन चार स्थान छपे हैं परंतु कथा सहित उत्तराध्ययनजी तो यहां ही छपा है, यह तीसवा नंन्दी सूत्र है.

इस में पांच ज्ञान चार बुद्धि का कथन है, चारों बुद्धि पर चौरासी कथाओं दीगइ हैं. यह एकतीसवा अनुयोगद्वार सूत्र है, इस में निक्षेप नय प्रमाण भंग समुत्कीर्तन, व्याकरण स्वर, नव रस आदि का बहुत ही उत्तम प्रकार से कथन किया गया है. और यह छोटासा परंतु जैनीयों के सदैव उपयोग में आने वाला बत्तीसवा आवश्यक सूत्र है. आवश्यक आज तक केइ प्रगट हवे और कहो तो गच्छ २ सम्प्रदाय २ के अलग हो रहे हैं. परंतु यह आवश्यक सर्व मान्य साधु श्रावक सब को निर्विवाद पने एकसा उपयोगी है. फिर शास्त्र की संदूक पर रखी हुइ तीनों पट्टी यों दो में ३४ अस्वध्याय और एक में कालिक उत्कालिक सूत्र तथा दूसरी तरफ अनुवादक, प्रकाशक व भंडार के नाम बताये. फिर जिन२ ग्राम की अर्जीयों आइ उन के नाम मात्र सुनाये सो आगे देखेंगे,

प्रेक्षकगणो! पांच वर्ष के परिश्रम से और ४२००० रुपे के खरच से जो फल प्राप्त हुवा है उस का आज आप को दिगदर्शन हो गया. मै निश्चयात्मक कहताहूं कि इतने सभासदों में से बत्तीस शास्त्र सुनना तो दूर रहा परंतु दर्शन करनेका मौका भी आज ही मिला होगा!! जिन को दर्शन मात्र ही दुर्लभ हैं उन को पढना लिखना और छपाकर प्रसिद्धी में रखना,

यह काम कितने महत्व का है सो आप ही ख्याल करलीजाय! आज हमारे अहो भाग्य हैं कि हम उस कार्य को पूर्ण कर कृतार्थ बने हैं! यह सब पुण्य प्रताप महाराज श्री का और लालाजी साहेब का ही है!

सभासदों में कुछ कम्पोजिटर या प्रेसमेन वगैरा छापेका काम करने वाला नहीं हूं कि जिस से मैं अकेला ही इस काम को कर मका होउं. परंतु इस काम में सहायक कर्मचारीयों का उपकार भी मुझे भूलना उचित नहीं है. [यों कह सब प्रेस के कर्मचारीयों को सभागण के सन्मुख खडे कर क्रम से गुण व इनाम दर्शाया]- १ यह फोरमैन व्यंकटस्वामी प्रेस सम्बन्धी सब कामों में निपुण, दक्ष, कार्य कुशल बडे ही होंश्यार हमारे सहायक हैं. जब से शास्त्रोद्धार कार्य सुरु हुवा तब से यह इस कार्यालय में रहकर सब कार्य की व्यवस्था जमाइ व याथोचित काम किया इन की रु० ३० महावार है और १२१, का इनाम है. २ यह हेड कम्पोझीटर बालाराम दाने शाने कार्य दक्ष व तीन वर्ष से यहां काम कर रहे हैं, इन की भी रु० ३० महावार व रु० ११० का इनाम है. ३ स्थानक का दरोगे लछमैय्या हैं, आज १३ वर्ष से महाराज श्री की सेवा में रहते हैं. ये सामायिक

प्रतिक्रमण ४-५ थोकडे अनेक स्तवनादि कंठस्थ कर श्रावक बने हैं, तैसे ही इन समान भरोसा पात्र तन तोड कार्य करनेवाले और यथोचित कार्य बनानेवाले मनुष्य मिलने मुशकिल हैं यह मैं खाती पूर्वक कहता हूं. इन की रु० १७ महावार और ७५ का इनाम है. इनोंने अपने गुन से लालाजी आदि स्वधर्मीयों का चित्ताकर्षण कर सेंकडों रुपे का इनाम व पोशाक वारम्वार प्राप्त किया है. ४ यह मशीनमैन ईश्वरया है. प्रेस के और मशीन के काम में प्रवीण व कार्य दक्ष है. यह तीन वर्ष से यहां है बीच में चला भी गया था. इन का रु० २४ महावार और रु० ५० का इनाम है. १ यह प्रेसमैन नागैय्या है, प्रेस के काम में कुशल है. इन का रु० १२ महावार और रु० २० का इनाम है. ६ यह कम्पोझीटर सुखनन्दन है. तीन रुपे महीने में यहां रहकर काम में होशियार बना अब रु० १० महावार है और रु. ४० इनाम है. यह कम्पोझीटर नरसिंव्हां है काम में ठीक है रु० १० महावार रु० ३५ इनाम है. यह बाइन्डर महमद हुसेन शास्त्र कटिंग के लिये अभी रखे गये हैं. ये तीनों भाइ होशियार हैं इन को गुत्ते से काम दिया है. रु. ९ का इनाम है. यह कटिंग मशीन का हेन्डल चलाने वाला ऐकन्ना है. रु. १४ महावार व रु. ५ इनाम है. और यह मीयांखां कटिंग के काम के लिये

रखा है इन की तनखा रु० ५ व रु. ३ इनाम है. इस कार्य के प्रताप से और पुण्य योग से मुझे सब ही कर्मचारी सुयोग्य और कार्य द्वारा संतोषदाता प्राप्त हुवे हैं. ऐसे यहां के किसी भी कारखाने में मिलना मुशकिल है.

इस प्रकार मणिलाल भाइने २॥ घंटे तक एकसा भाषण वगैरा कार्य खडे २ किया. बाद में इनाम के दागीने की संदूक इनाम देने के लिये लालाजीनें रामलालजी कीमती के सुपरत की. मणिलाल भाइ को रु. ६०० की लागत का चन्दन हार और सब को सुवर्ण के मादलीयों सभा सन्मुख पहनाये. फिर सब कर्मचारियोंने गायन किया.

(वारी जाऊंरे सांवरीया तोपे वारणारे-यह चाल.)

आनन्द मंगल हमारे दिन आजकाजी ॥ टेर ॥
शास्त्रोद्धार समाप्त भयाइ । उत्सव के लिये सभा भराइ ॥
दर्शन करत उमाइ सभी महाराजकाजी ॥ आ० ॥ १ ॥
श्री अमोलक ऋषिजी महाराजा । रत्न ऋषिजी उदय ऋषिजी राजा ॥
शास्त्र बत्तीसो साजा हिंदी भाषाजकाजी ॥ आ० ॥ २ ॥

धन्य हो राजा बहादुर लालाजी । सुखदेव सहायजी कीर्ती गाजी ॥
ज्वालाप्रसादजी सुखिये समाजकाजी ॥ आ० ॥ ३ ॥
लाखों द्रव्य का खरच किया है । धर्मोत्सव ज्ञान दान दिया है ॥
शास्त्रोद्धार सा कार्य किया सुख साजकाजी ॥ आ० ॥ ४ ॥
चिरायु रहो सख संतती पावो । ऐसे ही कार्य कर कीर्ती फैलावो ॥
हार्दिक मुबारक चहाते हम सब राजकाजी ॥ आ० ॥ ५ ॥
मणिलालजी मेनेजर सहाये । हम सब लोगों सब सुख पाये ॥
मेस के कर्मचारी गुण गाते शिरताजकाजी ॥ आ० ॥ ६ ॥

फिर स्थानक के दरोगे लछमैय्याने गायन सुनाया.

(बारिया बारिया बारीया रे यह चाल)

धन्य है धन्य है धन्य है जी, ऐसे जैन समाजी को धन्य है ॥ टेर ॥
धन्य बालब्रह्मचारी अमोलक ऋषिजी, राज ऋषिजी उदय ऋषिजी गुणवंत है जी ॥ ऐसे ॥ १ ॥
धन्य राजाबहादुर लाला सुखदेवसहायजी, ज्वालाप्रसादजी रतन है जी ॥ ऐसे ॥ २ ॥
आप के प्रसाद से शेहर दोनों दीपे, हैद्राबाद सिकंद्राबाद दखन है जी ॥ ऐसे ॥ ३ ॥

सवा लाख पुस्तकों अमूल्य प्रसारी, धर्मार्थे रुपे खरचे लाखन है जी ॥ ऐसे ॥ ४ ॥
चार महा पुरुषों की दीक्षा कराइ, कान्फरन्स सभा पांचवी भरन है जी ॥ ऐसे ॥ ५ ॥
शास्त्रोद्धार महा कार्य कराया, अमर नाम किया जग में सुजन है जी ॥ ऐसे ॥ ६ ॥
चिरंजीवो सुख सतती वृद्धी पावो, यों अर्ज करे दास लछमन है जी ॥ ऐसे ॥ ७ ॥

फिर मैंने कहा कि-यह शास्त्रोद्धार सभा का साराही अहेवाल से मणिलाल भाइने वाकेफ किये हैं. यह कार्य होने में मुख्यता में महान उपकारी तपस्वीराज श्री केवल ऋषिजी महाराज हैं कि जो वृद्धावस्था को प्राप्त होते भी जालना से हैदराबाद तक १३५ कोस के विकट पंथ में आहार व दिलासा की पूर्ण सहायता कर मुझे यहां ले आये और महाराज साहेब का जंघा बल क्षीण होने से यहां रहने का प्रसंग प्राप्त हुवा; उन ही के पुण्य प्रताप से लालाजी जैसे नर रत्न जैनमार्ग को महा दिप्त करनेवाले बने और अन्य अनेक लोगों को भी धर्म की प्राप्ति हुई. दूसरा उपकार अहमदनगर में चतुर्मास रहे हुवे पूज्यपाद गुरुवर्य श्री रत्न ऋषिजी महाराज का है कि जिनों की आज्ञा से व परमाशिर्वाद से शास्त्रोद्धार जैसा महा जोखमी काम उठाया उसे सुख शांती के साथ पूर्ण कर सका. तीसरा उपकार लालाजी सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी का है कि जिन के

सम्वन्ध से मुझे बत्तीस ही शास्त्रों लिखने का भसंङ्गा म रख कर शास्त्र सेवा व संघ सेवा बजाने का अपूर्व महा लाभ प्राप्त हुवा. चौथा उपकार मणिलाल भाई का है ऐसे सज्जन पुरुष का संयोग करानेवाले उक्त गुरुवर्य ही हैं. विद्वान शांत स्नेहालु कार्य दक्ष सच्चेमित्र शास्त्रोद्धार कार्य करने के वडे खंतीले, तन तोड परिश्रम उठानेवाले और विना सूचना ही यथोचित सब कार्य करनेवाले हैं ऐसे सुपुरुष के संयोग से ही मेरी संयम वृत्ति के पूर्ण स्वरक्षण के साथ इतनी शीघ्रता से इस कार्य को पार कर सका हूं. पांचवा उपकार सीकंदराबाद के श्रावकों का भी भुलना उचित नहीं है क्यों कि हैदराबाद सीकंदराबाद में ऐसा अन्य स्थान नहीं कि-जहां २१ घर साधुमार्गीयों के एक स्थान हों फक्त एक मार-केट बजार में ही हैं. इन के सम्बन्ध से आहार पानी मकान की यथोचित सुख साता प्राप्त होने से व मेरे स्वभाव के निर्वाहक श्रावकों होने से यह काम पांच साधुओं के साथ में रहकर सुख से कर सका.

अब एक नवी योजना भी सुन लीजिये ! फिर रामलालजी कीमतीने निम्नोक्त योजना पढ़कर सुनाई थी.

खास-जैन साधुमार्गीयों के लिये सुभिता

दक्षिण हैद्राबाद निवासी जैन धर्म स्थम्भ दानवीर राजा बहादुर लालाजी सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी जौंहरीने बत्तीस ही शास्त्रों मूल हिन्दी भाषानुवाद सहित छपाने के लिये सीकंद्रा- बाद में "जैन शास्त्रोद्धार प्रिंटिंग प्रेस" कायम किया था. वह सब शास्त्रों छपने का काम समाप्त हुये बाद भी धर्मार्थ कायम की हुई वस्तु से आगे भी धर्म कार्य निपजता रहे खास इस ही हेतु से शास्त्रोद्धार जैसे महा परिश्रमी और महा जोखमी कार्य के कार्यालय का मैनेजरीपना झोवाला (काठि- यावाड) निवासी मणिलाल शिवलाल शेठने जिस उत्साह से स्वीकारा था, उस ही उत्साह से उस कार्य को यथोचित समाप्त किया, यह आगे भी इस ही प्रकार अन्य कार्य करेंगे ऐसी खातरी होने से उन को प्रेस बक्सीस कर दिया है.

अब आगे मणिलाल भाई की इच्छा स्वदेश के विरमगाम में रहने की और प्रेस भी वहीं रखने की है. प्रेस से धार्मिक कार्य सदैव चालू रहे इस हेतु से "साधुमार्गीय जैन" नामक पाक्षिक पत्र निकालने की योजना की गई है रु० २०००० की थापन रख जिस के व्याज के खरच से इस पत्र की ५०० प्रतों निकाली जायगी और शीर्फ टपाल खरच तथा पेकिंग खरच के ६ आने सालाना लेकर—१ जहां २ साधुमार्गीय जैन के स्थानक, उपाश्रय सभा सोसायटी लायब्रेरी आदि धर्म संस्था हो वहां. २ कम से कम २५ मनुष्यों उसे एक वक्त जरूर ही पढे तथा सुने वहां, ३ जिस दिन अखबार पढे तथा सुने उस दिन ब्रह्मचर्य का अवश्य ही पालन करे वहां ४ कम से कम पावाना नित्य निकाल कर धर्म खाते में अपने पास जमा रखे वहां और ५ पढे

हैद्राबाद (दक्षण.

ता– १७-१२-१९२०.

महाशयजी?

"अमूल्य लाला जैन शास्त्र भंडार" की संदूकों के साथ जो विरमगाम (गुजरात) से "अमूल्य- साधुमार्गीय जैन" नामका पक्षीकपत्र (अखबार) निकाल नेकी सूचना दीगाइ थी वह अब रद्द समजी ये. क्योंकी मणीलाल शिवलाल शेठ झोवाला काठीयावाडवाले को सीकंद्राबाद के "जैन शास्त्रोद्धार कार्यालय" का मैनेजर बनायागया था और जिसके जारिये से अखबार प्रसीद्ध करना ठेरायागया था उसके पास मे उक्त कार्यालयका काम समाप्त होते पांच वर्ष का विगतवार हिसाब मांग तेही वह घबरागया और हमारे को विना पुछे चलागया. जिस से संसय हुआ की हिसाब में गडबड है. ऐसा अविश्वास होने से उसको खास अखबार निकालने के लियेही "जैन-शास्त्रोद्धार" प्रेस देने का कहागया था वह नहीं दिया गया और अखबार निकालने का विचार भि रद्द कियागया. इसलिये पहिले की सूचना के अनुसार अब किसीको भी विरमगाम (गुजरात) मणीलाल शिवलाल शेठ को अखबार के लिये द्रव्य आदि कुछ भी भेजना नहीं चाहिये जी.

इन के पास ही भेजना उचित है.

पत्ता–मणिलाल शिवलाल शेठ
अमूल्य लाला जैन शास्त्रोद्धार प्रिं. प्रेस, विरमगाम (गुजरात) } ज्ञान वृद्धि इच्छक, अमोलऋषि,

इस के बाद अखबार के लिये प्राप्त हुई रकम जाहिर की गई थी.

रु० २००० राजाबहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी.

रु० १५००स्व. प्रतापमलजी कोठारी मरसे (मारवाड) वालेकी सुपत्नीकी तरफ से.

रु० १००० ढाणकीवाले उदयराजजी कालुरामजी की तरफसे.

रु० ५०० नवलमलजी सुरजमलजी धोका यादगिरीवाले की तरफ से.

फिर सिकंदराबाद के बाजार वालों के पास जो धर्म खातेके रुपे जमाथे वे अखबार के लिये उन्होंने ... विचार दूसरे धर्म कार्य में लगाने का होने से वे रुपे लिये नहीं.

संवत १९७२ के कार्तिक शुदी ५ से संवत १९७७ के कार्तिक शुदी ५ तक का हिसाब.

जमा.	खर्च.
४२०३८) श्रीमान राजा बहादुर लालाजी	२२००७॥(=॥) श्री कागद खाते रीम ६३१.

सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी
जौंहरी हैद्राबाद.

५१.०– सूत्र खर्च, सूत्र बाहिर से मंगाये गये
६९५४। छपवाइ के फार्म नं. ११७८.
८९८।–८ फोल्डींग खर्च.
१५६०) प्रेस खाते, प्रेस का सामान मणिलाल
– शिवलाल शेठ को दिया गया.
१२३५।–। श्री परचुरण खर्च खाते.
४००) कटिंग मशीन.
१,०००) इनाम नोकरों को दिया.
१०००) संदूक खाते.
३८४१॥=१ मणिलाल की तनखा साल पांच.
७२८≡॥ नानचंद की तनखा साल देढ.

जोड ४२०३९

मणिलाल शिवलाल शेठ.

अमूल्य लाला जैन शास्त्र भंडार की संदूकों जिन ग्रामों में भेजी उन का लिस्ट.

द्राबाद	१६ धोराजी	३१ वडाल	४६ सायला	६१ महिदपुर	७६ मनफरा
ाकंद्राबाद	१७ लूणार	३२ लाकडीया	४७ वरवाडा	६२ रापर	७७ फलोदी
ागरा	१८ अहमदाबाद	३३ सामखीरीया	४८ मद्रा	६३ आटकोट	७८ मांडवी
ानरोड	१९ जामनगर	३४ राजकोट	४९ गोंडळ	६४ रावलपिंडी	७९ वेला
ार	२० संजीत	३५ टंकारा	५० मूली	६५ कुकावाव	८० सीपरी केम्प
हमदाबाद	२१ लाहोर	३६ चिहोली	५१ राजकोट सीटी	६६ हरसाणा	८१ धंधूका
ठदाना	२२ सायर कुंडला	३७ देवाम	५२ रलोल	६७ खोड	८२ जेतलसर
हमदाबाद	२३ इटोळा	३८ खंभात	५३ धांघलपुर	६८ मलवली	८३ भीनासर
ारारा	२४ कुचेरा	३९ सरधार	५४ वरवाळा	६९ मौजपुर	८४ मणासा
ावनगर	२५ कलोल	४० झंडीआला गुरु	५५ कसूर	७० अमरेली	८५ वासधद
ाळकोट	२६ गोंडळ	४१ लखतर	५६ आगर	७१ जावद	८६ वरसूत
ांद	२७ रव	४२ नंदराय	५७ आकोला	७२ रायपुर	८७ चुरी
दा	२८ पोरबंदर	४३ लिंबडी	५८ विसलपुर	७३ चोर वडोदरा	८८ रामपुर
दळगढ	२९ चंपो	४४ लिंबडी	५९ मुम्बइ	७४ मांडवी	८९ सीमरी
वलपिंडी	३० जालंधर	४५ इन्दौर	६० कडी	७५ वढवाण शहेर	९० चीतल

९१ झलोर
९० भरतपुर
९३ राजाखेडी
९४ लश्कर
९५ आलोट
९६ धूळीया
९७ जेसडा
९८ पेची
९९ ध्रांगधरा
१०० ध्रांगधरा
१०१ पचपहाड
१०२ जामकालावड
१०३ करमाला
१०४ घोटी
१०५ मुजाळपुर
१०६ संगरूर
१०७ नगरी
१०८ कोशीम्ब

१०९ दशरथपुर अंधी वाली
११० लुधियाना
१११ गढडास्वामी नारायण
११२ धोलेरा
११३ अहमदाबाद
११४ रालेगांव
११५ कंथारीया
११६ विरमगाम
११७ अमृतसर
११८ सीतापुर
११९ जामजोधपुर
१२० दामनगर
१२१ कांगला
१२२ वढवाण केम्प
१२३ ध्रोल
१२४ सादोरा

१२५ कोटा
१२६ विनोली
१२७ भिवानी
१२८ गरोठ
१२९ बडाल
१३० भिनाइ
१३१ बारोइ
१३२ कडा
१३३ मुद्रा
१३४ गंगधार
१३५ मुलथान
१३६ खंभात
१३७ मुलाना
१३८ लुहारा सराय
१३९ सरपदड
१४० मांदवी
१४१ अलवर
१४२ [illegible]

१४३ झुनझुनु
१४४ चोटीला
१४५ सुवई
१४६ लुधिआना
१४७ मलेरकोटला
१४८ रोजीद
१४९ करांची
१५० सादडी
१५१ वांगरोद
१५२ पाली
१५३ भाडला
१५४ खाचरोद
१५५ हिंगनघाट
१५६ आगरा
१५७ मंदसोर
१५८ मोलमीन
१५९ काछवा
१६० लाहोर

१६१ नासिक
१६२ मलकापुर
१६३ अंबाला सीटी
१६४ चित्तौड
१६५ ग्रामनोटी
१६६ सौनत
१६७ भादमोडा
१६८ फिरोजपुर
१६९ भोपाल
१७० महावर
१७१ खेडोइ
१७२ राणपुर
१७३ जोधपुर
१७४ जिंद
१७५ सांडा
१७६ धोराजी
१७७ राणपुरारोड
१७८ [illegible]

१७९ हिन्डोन सीटी
१८० सैरपुर
१८१ बडगांव
१८२ सांगा
१८३ भरतपुर
१८४ बेल्नगंज
१८५ सरवाड
१८६ रोपड
१८७ नागनेश
१८८ सोनई
१८९ सिरसा
१९० ताल
१९१ आवलकुं
१९२ दोरहो
१९३ वागली
१९४ रायपुर
१९५ किसन

१९६ प्रतापगढ़
१९७ सामाना
१९८ पीपलोदा
१९९ सरदारगढ
२०० सनवाड
२०१ जेतपुर
२०२ लाठी
२०३ निचवड
२०४ तुरडा
२०५ जालोर
२०६ दग
२०७ जम्मु
२०८ ववाणिया
२०९ फरीदकोट
२१० नारायणगढ
२११ रोहतक
२१२ शाहपुरा
२१३ अलीगढ

२१४ अगाला
२१५ मोखा
२१६ रायचूर
२१७ मोरु
२१८ छपरोली
२१९ जपजन
२२० वेरावळ
२२१ चिचोडी
२२२ स्ठोडा
२२३ चिन्नूर
२२४ प्रागपर
२२५ वढवाण सीटी
२२६ गंगेरु
२२७ निनोर
२२८ जयपुर
२२९ उज्जैन
२३० मीरी
२३१ अजमेर

२३२ धारी
२३३ लीलीयामोटा
२३४ सीहोरकेंटोन्मेंट
२३५ ताजपुर
२३६ वरोट
२३७ पहना
२३८ वढवाण केम्प
२३९ धोदला
२४० रायकोट
२४१ भचाउ
२४२ गढ-सिवाण
२४३ कालु खेडा
२४४ जलंधरकेन्टोन्मेंट
२४५ मुद्रा
२४६ आवर
२४७ धुलिया
२४८ श्यामपुरा
२४९ लासलगांव

२५० बुडल वाडा
२५१ मच्छी वाडा
२५२ दील्ही
२५३ उदयपुर
२५४ गेता
२५५ कान्ही
२५६ विरपुडा
२५७ सैलाना
२५८ नेफाड
२५९ गंगधार
२६० हांसी
२६१ महरोली
२६२ एलप
२६३ उन्हेल
२६४ कैथळ
२६५ धलाचौर
२६६ जुनासावर
२६७ भगडी

२६८ नीमचसीटी
२६९ उज्जैन
२७० जोधपुर
२७१ कुकाना
२७२ दनोदाखडा
२७३ रामोद
२७४ गुजर वाला
२७५ छसरा
२७६ पालीआद
२७७ उरमड
२७८ मोजपुरा
२७९ छोटी सादरी
२८० कुकडेश्वर
२८१ करी
२८२ तीतरवाडा
२८३ साजापुर
२८४ बरेली
२८५ राहमी

२८६ रापर
२८७ मेंदरडा
२८८ थडिया
२८९ धार
२९० कुकसी
२९१ वडीसादडी
२९२ लिसाढ
२९३ धोराजी
२९४ पुना
२९५ नलखेडा
२९६ पोरबंदर
२९७ मनमाड
२९८ सीतापुर
२९९ जामनगर
३०० लाहोर
३०१ खंडप
३०२ राजपरा
३०३ फतेहगढ

३०४ जलगाव	३१६ प नेळीमोटी	३२८ सुदामडा	३४० मादरण	३५२ जगरामा	३६४ झाबुआ
३०५ गोंदिया	३१७ वडोदरा	३२९ पंचर	३४१ ढसा	३५३ पूना	३६५ गोंडळ
३०६ रंगून	३१८ लाखापुर	३३० मावली	३४२ सायला	३५४ सतारा	३६६ बांदनवाडा
३०७ बगसरा	३१९ पीपाड	३३१ कुदरडी	३४३ पडधरी	३५५ वेगु	३६७ रापण
३०८ अहमदाबाद	३२० राजकोट	३३२ पिपला	३४४ प्रांतिज	३५६ मुनक	३६८ पत्री
३०९ बिकानेर	३२१ दामनगर	३३३ भावनगर	३४५ कोदाकरा	३५७ जोधपुर	३६९ नागोर
३१० अंजार	३२२ लाहोर	३३४ तलेगांव	३४६ रव	३५८ पट्टी	३७० झोवाला
३११ रंगपुर	३२३ नालछा	३३५ पीईज	३४७ संजीत	३५९ सनाम	३७१ समदरडी
३१२ [illegible]	३२४ नेतारन	३३६ बिछिया	३४८ आगरा	३६० निम्बरेडा	
३१३ मांगरोळ	३२५ रामामंडी	३३७ बीकानेर	३४९ गुजरानवाला	३६१ देशलपुर	
३१४ मुम्बइ	३२६ बरोरा	३३८ चुडा	३५० लाहोर	३६२ श्यामंडी	
३१५ लखतर	३२७ भुजपर	३३९ मेथी	३५१ मुम्बइ	३६३ अहमदनगर	

नोट—इस में कितनेक स्थान एक ही गांव का नाम दो तीन वार भी आये हैं तो वहां पर अलग २ स्थानक, भंडार अथवा लायब्रेरी होने से अलग २ ही शास्त्र भंडार भेजा गया है.

॥ अन्तिम–विज्ञप्ति ॥

गाथा–आयार पण्णत्तिधरं, दिट्ठिवाय महिज्जगं ॥
वइविक्खलियं नच्चा, न तं उवहसे मुणी ॥ ४९ ॥

दशवैकालिक अ० ८

अहो सुज्ञ पाठक श्रोतागणो ! इस शास्त्रोद्धार मीमांसा के आद्यन्त पठन से आप को विदित हुआ होगा कि–श्री जिनेन्द्र प्रणित परम वागेश्वरी से प्रणित शास्त्रों का आजतक किस प्रकार परावर्तन हुआ है. जब केवल ज्ञान के निदर्शन, सब मात्र को अतिशयादि से व्याख्यान की परम शक्ति के धारक तीर्थंकरों भी पूर्ण वाणीधारा वागर नहीं सके, तीर्थंकरों का पूर्णाशय गणधर ग्रहण नहीं कर सके, गणधरों के पूर्णता से रच नहीं सके और रचितार्थ के पूर्णाशय को श्रुत केवली पूर्णता से नहीं समज सके

इस पर से भगवानने कहा है कि-आचारांग प्रज्ञप्ति (भगवती) और दृष्टीवादांग जैसे अखूट अपरमपार ज्ञान के धारक भी वचनोच्चार करते स्खलित हो जाय-चूक जाय तो मुनियों का कर्तव्य है कि-उन का उपहास्य करे नहीं, और भी तत्त्वार्थ (मोक्ष शास्त्र) के रचयिता उमास्वामी का कहना है कि—

" को नवि मुह्यति शास्त्र समुद्रे "

विद्ववरों ! शास्त्र का भाषानुवाद करना यह कार्य. मेरे जैसे तुच्छ ज्ञानी से पूर्णता से यथोचित होना बिलकूलही असंभव है. अनेक मुनिवरों श्रावकों के तरफ से वारम्वार अत्याग्रह पूर्वक सूचना होते भी ग्रहण करने की हिम्मत नहीं कर सका ! परंतु लालाजी के पवित्र हृदय के प्रेमोत्सुक भक्ति भाव से उद्भवे हुअे विद्युत् शक्ति समान वचनोच्चार मेरे श्रवण से अथडातेही मेरे हृदय पर सचोट ऐसी असर हुई कि तीन दिन तक तो मैं विचार सागर में गोते खाता ही रहा ! लालाजी के निश्चयात्मक वचन रूप जादू के आगे मेरा विचार रूप गारुडी का कुछ भी नहीं चला और मानो बलात्कार से ही किसी कार्य का किसी को स्वीकार कराते हो उस ही

प्रकार मेरे हृदय की प्रेरणा से मुझे बत्तीस ही शास्त्रों के भाषानुवाद का स्वीकार करना ही पडा. और डगमगते मन से लालाजी सन्मुख 'हां' कहा गया. लालाजीने उस वचन को बडा ही प्रेम पूर्वक वधा लिया. साधु का वचन तो अटल होता है, तदनुसार गुरुदयाल की आज्ञा प्राप्त कर प्रकाश में हर्ष वधाइ छपाइ और ज्ञान पंचमी को भाषानुवाद प्रारंभ किया और चेत सप्तमी से छपना सुरु किया. शुभ काम में विघ्न बहुत ही हैं आते हैं तदनुसार शास्त्रोद्धार कार्यालय के मकान के मालक पर आफत आने से उसे बदलना पडा, थोडे ही दिन बाद प्लेग की सुरुआत होते काम बन्ध कर सब कर्मचारीयों चले गये. हम साधुओ भी मरणांतिक कष्ट से बचे इतना परिश्रम पाये. कुच्छ दिनों के बाद लालाजी का अचिंत्य स्वर्गगमन होगया. तीसरे साल फिर प्लेग सुरु हुआ तब लालाजी के खरच से सर्व कर्म चारीयों को जंगल में कूटि बनाकर एक स्थान रख काम चलु रखा, चौथे वर्ष दत्तचित्त से काम करने वाला एक कम्पोजिटर का मृत्यु निपजा व प्रेस के कर्म चारीयों में बडी गडबड मची, पांचवे वर्ष

परम सहायता क करने वाले तपस्वीजी ज्ञानानन्दी श्री देवऋषिजी का ६७ वर्ष के वय में और बालब्रह्मचारी विद्या विलासी श्री मोहन ऋषिजी का २१ वर्ष की वय में ये दोनों साधु चैत्र कृष्ण सप्तमी के दिन एक श्याम के और दूसरे प्रातःके चार बजे स्वर्ग गमन कर गये. कितनेक दिन बाद लाला ज्वाला प्रसादजी को भी निमुनीया होगया. धर्म पसाय यह भी महान संकट दूर हुआ इस प्रकार जब से कार्य सुरु हुआ तब से ऐसे बडे २ विघ्न प्राप्त हुवे. और भी कार्यालय के कर्मचारीयों की गैरहाजरी नवे २ कर्मचारियों स्थापित करने से वे अवाकेफ होने से काम की गडबड, विशेष काम चलने से टाइप का खराबा, खूट टाइप मगाने पर चार २ महिने तक नहीं भेजने से घिसे टाइप से छापने से अक्षरों की क्षीणता, युद्ध प्रसंग कागज स्याही टाइप वगैरा कार्य के साहित्यों के महंगाई. मुह मांगे दाम देने ही वस्तु की अप्राप्ति, बीस हजार के खरच में धारा हुआ काम चालीस हजार के खरच में भी पार पडने की कठिनता. वगैरा कहां तक वर्णन किया जावे. इतने कथन ऊपर से ही पाठक गणों ख्याल कर सकेंगे कि, ऐसी २ मुशीबतों प्राप्त होते हुवे स्वीकृत कार्य तरफ एकसा लक्ष रख, भंडारों से चार २ पांच प्रतों मगवा परस्पर सबका मिलान कर निर्णय कर अशुद्धीयों को छांट कर,

प्रथम मूल का शुद्ध लेख करना नन्तर मूल पर ही लक्ष रख तदनुसार अर्थ लिखना विशेषार्थ वाली प्रतों पर से उस का खुलासा फूट नोट वगैरा लिखना. पूर्ण शास्त्र लिखे बाद उस का मिलान करना, और एक वक्त प्रेस प्रुफ का मिलान करना; इस प्रकार अनुक्रम से ३२ ही शास्त्रों शीर्फ तीन वर्ष जितने स्वल्प काल में पूरे लिख देना. एसी मुशीबतों में इतनी सिधा दारती—तपास रखते हुअे भी भूलों रहगइ हैं, क्यों कि छद्मस्त भूल पात होता है, इस उक्त कथन के तरफ लक्ष रखकर और उक्त प्रथम कही हुई गाथा में वीतराग आज्ञा को लक्ष में लेकर अर्थात् "दृष्टीवादांग जैसे ज्ञाता का भी वचन स्वलित होजावें तो अहो मुनि ! उन का उपहास्य नहीं करना" तो मेरे जैसे अल्पज्ञ का तो कहना ही क्या ? इस लिये उपहास्य नहीं करते हुअे जो ना पसंद हो तो इस से भी अच्छा कार्य शीघ्रता से कर बताना यही सत्य पुरुषों का लक्षण है. Be slow to promise but quick to perform कम कहो और करो अधिक.

पाठकों ! यह काम प्रारंभ हुवे बाद इस कार्य को और कार्य कर्ता को बखोडने में खुद अपने साधुमार्गीयोंने ही कसर नहीं रखी है—१ एक मुनि महात्मा तरफ से

सूचना आई थी कि—यह कार्य अमोल ऋषि के हाथ से करावोगे तो अपने धर्म को एक जबर लांछन (धब्बा) लगावोगे. स्वमति अन्यमति में निन्दा पात्र बनोगे. मारवाड मालवा के कितनेक साधु श्रावकों कहते हैं कि-छपाने के काम में जबर पाप लगाता है. भ्रष्टाचारी साधु यह काम करते हैं. २ कितनेक महात्माओं ऐसा भी उपदेश करते हैं कि-गृहस्थ को शास्त्र पढना ही नहीं चाहिये! गृहस्थ के घर में शास्त्र रखना ही नहीं चाहिये. गृहस्थ के घर में शास्त्र रहने से धनादि की हानि होती है. ऐसी २ वार्ता सुन लोगों शंकाशील बन केई यहां आकर उक्त प्रश्न करते-उन को यही जवाब दिया जाता कि-वे तो मेरा भला चहाते हैं, मुझे पाप से बचने के लिये ही चेताते हैं. परंतु मेरे अब ऐसा ही जोग है. जिन को यह काम खराब मालुम पडता है तब ही वे ऐसी बात करते हैं. परंतु मुझे यह काम लाभ दाता मालुम होता है. तब ही मैं करता हूं. कितनेक वक्ता-व्याख्यानी साधुओं व्याख्यान श्रवण के लिये लोगों को आमंत्रण पत्र देते हैं. व्याख्यान होने के लिये मंडप बनवाते हैं. देशावरों से हजारों लोगों दर्शनार्थ व्याख्यान श्रवणार्थ आते हैं. उन के लिये मकान भोजनादि का बंदोबस्त कियाजाता है. जिस में हजारों रुपे खरच होता है और आरंभ भी निपजता है. लाभ—व्याख्यान श्रवण से व

साधु दर्शन से ज्ञान प्राप्ति होती है, उतना खरच और उतना आरंभ तो शास्त्रोद्धार के काम में नहीं है. और एक हजार भंडार ३२ शास्त्रों के हजार स्थान रहेंगे जिनका केई वर्षों तक हजारों महात्माओं पठन करेंगे ओर लाखों श्रावकादि श्रवण करेंगे. हजार स्थान शास्त्र भंडार होने से साधु संतों को शास्त्र उठाने का शास्त्र पठन के लिये निरास होने का खुशामदि वगैरा का प्रसंग न आवेगा, चर्चा-संवाद में निर्णयार्थ शास्त्र की जरूरत होवे शीघ्र प्राप्त हो सकेंगे, इत्यादि लाभ का उक्त साधु के दर्शन व व्याख्यान श्रवण से कमी है, इत्यादि उत्तर सुन लोगों को बडा ही संतोष प्राप्त होता था,

एक वक्त कितनेक तेरापंथी सम्प्रदाय के श्रावकोंने पूछा कि—आप जैसे ज्ञानी गुनी साधु को छपाने के पाप का काम करना उचित है क्या ? मैंने कहा—मुझे इस में कौनसा पाप लगता है ? मैं तो फक्त कापी लिख कर देता हूं, शास्त्र लिखने में तो कुछ पाप नहीं है, तब वे बोले-आप के निमित्त से ही छपनेका सब आरंभ होता है ? मैंने पूछा - तुमारे में दर बारा महिने महासुद ७ का जो पाटोत्सव होता है, वह पूज्यजी ही स्थापन करते होंगे ? उनोंने कहा हां पूज्यजी स्थापन करते हैं, उस पर खरच कितनेक होता होगा ? उनोंने कहा—अंदाज

२०-२५ हजार का होता होगा, मैने कहा इतना खरच किस लिये ? उनोंने कहा एक दम दो सो तीन सो साधु साध्वी के दर्शन का लाभ प्राप्त कहां होता है इस लिये हजारों श्रावक श्राविका आते हैं उन के लिये इतना खरच होता है. तब मैंने कहा-इतना आरंभ पाटोत्सव स्थापन करनेवाले को लगता है क्या ? वे बोले नहीं पूज्यजी कुछ आरंभ थोडी ही करते हैं, यह तो सब श्रावकों का काम है तब मैंने कहा कि—पाटोत्सव से उपकार क्या होता है ? फिर वे कुछ बोले नहीं, तब मैंने कहा कि—मैं भी कुछ आरंभ नहीं करता हूं. छापने का काम गृहस्थों करते हैं. पाटोत्सव से तो शास्त्रोद्धार का काम बडा उपकारी है, उक्त प्रकार सब कहा सुनकर सब चुप चले गये, इस प्रकार अपने लोगोंने भी प्रश्न किया जिन को तत्काल में हुवा युवाचार्यजी का रतलाम के उत्सव के दाखले मे समजाये, यों जहां तक शास्त्रोद्धार कार्य चला तहां तक केई प्रसंग प्राप्त हुवे, परतु किसी प्रकार की दरकार नहीं रखते जो काम धारन किया था उस को यथा शक्ति यथा बुद्धि यथा वचन जैसा बना वैसा किया है,

॥ भाषा शुद्धि ॥

पाठक गणों ! आप को जानना चाहिये कि जगत् में परिवर्तन क्रम अनादि से चला आता है, सब पदार्थों का पलटा होता ही रहता है. तैसे ही भाषा का भी परिवर्तन भी सदैव होता ही रहता है. और प्राचीन भाषा मे अर्वाचीन भाषा उत्तमोत्तम पद प्राप्त करती रहती है. इस काल में हुवे कवीयों पण्डितों के व्याकरणादि ग्रन्थों का अवलोकन कीजिये. पातंजलीजी कृत व्याकरण में शाकटायनजीने खोट निकाली है, शाकटायनजी के व्याकरण को माघजीने अशुद्ध बनाया है. माघ काव्य में हरीभद्रजीने फरक निकला है. इस प्रकार अब भी परिवर्तन हो रहा है. प्रायः सब भाषाओं के ग्रन्थावलोकन कीजिये. प्राचीन और अर्वाचीन ग्रन्थों की भाषा में बहुत ही फरक देखने में आवेगा, इस से अनुमान किया जाता है कि—अभी की सुधरी हुई भाषा को भविष्य लोक पंडितो अशुद्धी कहे इस में आश्चर्य ही कौनसा ? इस से जानना चाहिये कि—भाषा पंडितों (वैयाकरणियों) जो भाषा सम्बन्धी विवाद कर शोके भाषा के ही पक्षपाती बन आशय अवलोकन किये विना जो एकेक को सच्चे झुठे बनाते हैं वे मिथ्यावादी गिने जाते हैं.

मुमुक्षु प्राणीयों का कर्तव्य है कि भाषा के वितंडावाद का त्याग कर शास्त्र के वचनाशय पर निघा धर अपना हित साधना चाहिये ! कि जिस से ज्ञान और ज्ञानवंत की आच्छादना के भागी अपन नहीं बने.

आप देख लीजिये स्वमत के प्राचीन रचित ग्रन्थों रासो स्तवन स्वाध्यायों वगरा की भाषा और अर्वाचीन देशी भाषामें ग्रन्थों ढालों राशो आदि की भाषा. इस में बहुत तफावत दीखेगा. तो क्या वे सब अशुद्ध खोटे गिने जावेगें. अन्य मतावलम्बीयों के कबीरजी नानकजी आदि के बनाये ग्रन्थों पदों आदि का भी अवलोकन कीजिये. भाषा शास्त्रीयों ? आप कहां तक भाषा का विवेक करोगे ? कहावत है कि-" बारे कोसे बोली पलटे " अर्थात बारह २ कोसान्तर में भाषा का पलटा होता है. हिंदी २ भाषा भी सब की एकसी नहीं होती है. पंजाब की, दिल्ली की, आगरे की, कानपुर की, पूर्व की. यह स्थान खास हिंदी भाषा बोलनेवाले के हैं तो भी इन में परस्पर बहुत भेद पावेगा. यह तो जरूर समजीए केवल एक भाषातो मिलना मुशकिल है ! प्रायःसब भाषाओं अन्य भाषाओं कर मिश्रित बनी हुइ है, कोइ कम और कोइ ज्यादा. ऐसा होते हुअे भी भाषा शास्त्रीयों पक्ष बनाकर

भाषा दोष स्थापन कर महान हित करने वाले ग्रन्थोंको ख्खोड डालते हैं. उस के लाभे प्रीतिसे लोगों को वंचते हैं, सत्यकथनीयों के द्वेषी बना देते हैं वे कितना अन्याय करते हैं सो जग विचारिये! एक गुजराती कवीने कहा है "स्युं जाणे व्याकरणी, भजनने स्युं जाणे। कंठ सुधी पूर्ण भरी पण स्वाद न जाणे वरणी भजनने॰ ॥ मतलब की व्याकरण के ज्ञाता हुवे विना अनुभव की प्राप्ति होती ही नहीं, ऐसे हठाग्री मिथ्या प्रलापी होते हैं. वे ग्रन्थों के ग्रन्थों कंठाग्र कर कदाचित् कंठ तक ज्ञान से भरा गये हों तो भी अनुभव ज्ञान प्राप्त कर सकते नहीं हैं. यह बात प्रत्यक्ष सिद्ध है. परन्तु व्याकरण शास्त्र के ज्ञान विना भी केई महात्मा होगये हैं और वर्तमान में भी हैं.

उक्त भाषा सम्बन्धी कथन इतने विस्तार से कहने का यह प्रयोजन है कि—मुझे खुद को भी भाषा शास्त्र का ज्ञान अधिक नहीं है, तथा मारवाडी, गुजराती, मराठी व हिन्दी भाषा में बोलने का मुझे बहुधा प्रसंग प्राप्त होता है. इस लिये मेरे लेख में उक्त चार भाषा में के शब्दों का सेल भेल होता है. लेख लिखती वक्त जितना लक्ष विषय शुद्धी के सुधारे का रहता है, उतना भाषा शुद्धी का नहीं रहता है. इस लिये मेरे लेख में भाषा

सम्बन्धी अशुद्धीयों बहुत निकलती है. उने देख कितनेक भाषा शास्त्रीयों अखार फैलाते हैं, ग्रन्थ पठन से गुण ग्रहण से लोगों को वंचते हैं. यहां से प्रसिद्ध हुवे पुस्तकों के बाद कितनेक स्थान से ऐसा जानने में आया. इस लिये उन के आत्मा के हितार्थ तथा बहुत जीवों को ज्ञान की अन्तराय नहीं लगे इस हित मित विचार से इतना लिखने की यहां आवश्यकता जानी है. क्यों कि-यहां मे जो शास्त्रों प्रसिद्धी में रखे जाते हैं उन का भाषानुवाद करते सावधानता रखते हुवे भी भाषा का मिश्रण होगया हो तो उस की तरफ लक्ष नहीं देते हुवे मूलाशय की तरफ दृष्टी रख गुण ही गुण के ग्राहक बनीये. जिस आशय से यह कार्य किया है उस ही आशय को सफल कीजिये.

॥ इति शास्त्रोद्धार मीमांसा समाप्तम् ॥

जैन शास्त्रोद्धार कार्यालय के कर्मचारी.

खुरसीपे बैठे.
१ मेनेजर मणिलाल शिवलाल शेठ
२ पंडित गजानन्द शास्त्री.
३ क्लार्क सुखराज.
४ फोरमेन त्र्यंबकस्वामी.
५ हेड कंपोझीटर बालाराम.

पीछे खडे हुवे.
६ मशीनमेन ईरय्या.
७ कंपोझीटर रामकैलास.
८ स्थानक का दरोगा लक्षमैय्या.
९ प्रेसमेन नागेय्या.

नीचे बैठे हुवे.
१० कंपोझीटर लक्ष्मीनारायण
११ कंपोझीटर सुखनंदन.
१२ कंपोझीटर नरसय्या.
१३ फोल्डर-पन्नालाल.

☞ मैं आज अत्यन्त हर्षानन्द में गर्क होकर चारों ही संघ से नम्र निवेदन करता हूं कि ' अमोलक ऋषि ' नामक व्यक्ति बडी भाग्यशाली है, क्योंकि जिस को तपस्वीराज श्री केवल ऋषिजी महाराज के परम प्रताप से, गुरुवर्य महात्मा श्री रत्न ऋषिजी महाराज की शुभाज्ञा से और लालाजी सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी के सम्बन्ध से ' शास्त्र सेवा ' का अपूर्व महालाभ प्राप्त हुवा. बत्तीस ही शास्त्रों को व्याख्यान में सुनाना,हाथ से लिखना, प्रसिद्धि में रखना यह महा लाभ आज तक अमोल सिवाय अन्य को मिला हो ऐसा जानने में नहीं आया. इस लिये अहो भाग्य मेरे !

शास्त्रोद्धार प्रारभ

वीराब्द २४४२ ज्ञान पंचमी

इति

शास्त्रोध्धार मीमांसा

समाप्तम्

शास्त्रोद्धार समाप्ति

वीराब्द २४४६ विजयादशमी